इकाई 1 -ज्ञान के विविध स्रोत; सूचना, समंक एवं ज्ञान में अंतर

Various Sources of Knowledge; Differences in Information, Data and Knowledge

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 ज्ञान के विविध स्रोत
1.4 सूचना, समंक एवं ज्ञान में अंतर
 1.4.1 समंक
 1.4.2 सूचना
 1.4.3 ज्ञान
 1.4.4 सूचना, समंक एवं ज्ञान में अंतर
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री
1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

यह सर्व विदित है कि मनुष्य अन्य प्राणियों से भिन्न है। अन्य प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य अपने ज्ञान को आगे बढाता है और अपने ज्ञान वृद्धि एवं शक्ति वृद्धि से अपने वातावरण में एक समन्वय स्थापित करने का प्रयास करता है। ज्ञान के क्षेत्र में निरंतर प्रगति उसकी जिज्ञासा का प्रतिफल है। एक जिज्ञासु मानव की शक्ति असीमित है। अतः किसी भी समस्या के निदान के लिए उसकी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियां एकाग्रचित होकर उसका समाधान खोजने लगती है। प्रयास सफल हो की नहीं यह आवयशक नहीं परन्तु उसकी जिज्ञासा की ज्योति प्रज्ज्वलित हो जाती है। ज्ञान स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर ले जाता है

यह अध्याय ज्ञान एवं ज्ञान के विभिन्न स्रोतों की विवेचना पर आधारित है। ज्ञान की परिभाषा, ज्ञान , आंकड़े एवं सूचना के मध्य अंतर को इस अध्याय में सम्मिल्लित किया गया है। जहां भौतिक ज्ञान का आधार मन है वहीँ आध्यात्मिक ज्ञान का आधार आत्मा है। यह भी ज्ञात करना आवश्यक है कि किस प्रकार के मानव व्यवहार को ज्ञान की श्रेणी में लिया जा सकता है।प्रस्तुत अध्याय में ज्ञान अर्जित करने के पारंपरिक एवं आधुनिक साधन पर भी बल दिया गया है। किसी भी समस्या को हल करने के लिए चिंतन, मनन एवं परिश्रम की आवश्यकता होती है। परन्तु कभी कभी समस्या का हल प्रयास एवं भूल से भी हो जाता है।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

1. ज्ञान की धारणा से क्या अभिप्राय है बता सकेंगे।
2. ज्ञान के आधारों को अपने शब्दों में व्यक्त कर सकेंगे।
3. ज्ञान प्राप्त करने के विविध स्रोत की चर्चा कर सकेंगे।
4. ज्ञान प्राप्त की वैज्ञानिक विधि क्या है और इसकी क्या क्या विशेषताएं का विश्लेषण कर सकेंगे
5. ज्ञान का अस्तित्व क्या है और इसकी विभिन्न अवधारणाओं को बता सकेंगे।
6. ज्ञान, सूचना एवं समंक में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।

1.3 ज्ञान के विविध स्रोत

यह सर्वविदित है की शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान प्रदान करना है। ज्ञान का सत्य से वही सम्बन्ध है जो सूरज का गर्मी से है। सत्य का अस्तित्व तभी मान्य है जब उसका ज्ञान हो। सत्य को ज्ञान से अलग नहीं किया जा सकता । इसीलिए तत्वमीमांसा के साथ ज्ञान मीमांसा जुडी होती है । ज्ञान और सत्य एक ही है क्यूँकि यह व्यक्ति के मन में होता है । ज्ञान की उपयोगिता तभी है जब उसे दूसरों तक पहुंचाया जा सके । यही मत संतो एवं धर्म्प्रवर्तको का भी है । शिक्षा द्वारा ज्ञान की उपयोगिता को सिद्ध किया जा सकता है । ज्ञान वह है जो हमारे जीवन पर लागू होता है, प्राचीन होने पर भी जिसका अस्तित्व विद्यमान

है, जो वर्तमान में भी ताज़ा बना हुआ है। ज्ञानी नए एवं पुराने को जोड़ कर जीवन को जीना जानते है। प्राचीन ज्ञान के अनुसार नए और पुराने का समन्वय होना नितांत आवयशक है , जैसे एक वृक्ष का तना पुराना होता है पर उसकी भूमिका आवयशक होती है और उसकी शाखाएं नयी होती है, उसी प्रकार से व्यक्ति का जीवन भी अनुकूलनशील होना चाहिए । ऋगवेद का प्रथम श्लोक है, ‘‘अग्निपूर्वभिरऋषिभिरिधौ नूतानैरुतः’’ प्राचीन और नवीन दोनों एक साथ विद्यमान है और यही ज्ञान है। कोई भी व्यक्ति दुखी या व्यथित नहीं रहना चाहता। जो हमें दुःख से दूर ले जाए ,जो हमें दूरदर्शिता दिखाए जो हमारे जीवन को स्फूर्ति प्रदान करे, और जो हमारे व्यक्तिगत को सृष्टि से जोड़े , वही ज्ञान है। ज्ञान अत्यंत संतोष प्रदान करता है, और यह सबको उपलब्ध है। अतः ज्ञान वह है जो जीवन में उत्सव लाये, जो चेहरे पर मुस्कान लाये,और जो जीवन में दूरदर्शिता लाने का अंतर्बोध दे। ज्ञान सूक्ष्म है अथवा स्थूल, यह एक अति महत्वपूर्ण प्रश्न है। जहां शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के मन में जानकारी के रूप में ज्ञान को सूक्ष्म की श्रृखला में रखा जा सकता है वहीँ, पुस्तकों में वर्णित भाषा में लिखा ज्ञान स्थूल होता है। उदहारण के लिए जिस प्रकार जल में नमक घुल जाता है पर एक बड़ा ढेला स्थूल रूप में दिखाई देता है , उसी प्रकार विद्यार्थियों के लिए पुस्तक वही नमक का ढेला है जिससे उनके ज्ञान का वर्धन होता है।

ज्ञान की सक्रियता एवं असक्रियता

शिक्षा की दृष्टि से ज्ञान की सक्रियता एवं असक्रियता को ज्ञात कर लेना अति आवयशक है। शिक्षक द्वारा पाठ योजना का स्वरुप बनाना जिससे कि वह विद्यार्थियों को ज्ञान का अर्जन करवाने के लिए उचित स्थितियों का निर्माण कर सके , सक्रिय ज्ञान की श्रेणी में आता है। शिक्षक का उद्देश्य होता है कि विद्यार्थी उस ज्ञान का उपयोग कर सके। प्रयोग के माध्यम से ज्ञान रुचिकर हो जाती है। अन्यथा ज्ञान यदि बोझ लगने लगे तो विद्यार्थी उससे लाभान्वित नहीं हो पाता।

प्रत्यक्ष ज्ञान एवं अप्रत्यक्ष ज्ञान :ज्ञान के दो पक्ष होते हैं: प्रत्यक्ष ज्ञान एवं अप्रत्यक्ष ज्ञान। ऐसा ज्ञान जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त होता है , जिसे व्यक्ति अपने जीवन में स्वयं प्राप्त करता है, प्रत्यक्ष ज्ञान है। ऐसे ज्ञान को ताज़ा ज्ञान कहा जाता है वहीँ दूसरी ओर वह ज्ञान जो कथनों एवं पुस्तकों से प्राप्त किया जाता है, परोक्ष ज्ञान होता है। परोक्ष ज्ञान को इसिलिये बासी ज्ञान भी कहा जाता है। वर्तमान यथार्वादी दार्शनिक एवं वैज्ञानिक प्रत्यक्ष ज्ञान को मानते हैं। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में दोनों पक्ष के ज्ञान की भूमिका है। भारतीय दर्शन में प्रत्यक्ष ज्ञान को प्रमा एवं परोक्ष ज्ञान को अप्रमा कहा गया है। भारतीय दर्शन में आगे इस बात का भी वर्णन है की ज्ञान एवं अज्ञान के भेद को किस प्रकार समझा जाए। प्रत्यक्ष एवं परोक्ष ज्ञान के अलग अलग लक्षण भी वर्णित किये गए हैं। इसके अतिरिक्त मीमांसा दर्शन में भी दोनों प्रकार के ज्ञान की विवेचना की गयी है। इस से यह पुष्टि होती है की शिक्षक शिक्षा के माध्यम से वह विद्यार्थियों को भ्रम से मुक्त करने का प्रयास करता है। ऐसी शिक्षा जिससे विद्यार्थी को ज्ञान का स्वरुप समझाया जा सके।

क्या ज्ञान परिवर्तनिय है अथवा अपरिवर्तिनीय :यह एक अति महत्वपूर्ण प्रश्न है की ज्ञान का स्वरुप परिवर्तित होता है अथवा नहीं? ज्ञान के तत्व बदलते हैं अथवा नहीं? शिक्षक अपने विद्यार्थियों को जिस

ज्ञान के तथ्य, विचार , प्रत्यय, नियम एवं निष्कर्ष आदि ज्ञान के कथ्य को समझाता है , उनमे परिवर्तन अथवा बदलाव होता है अथवा नहीं ? यहाँ पर ध्यान देने की बात यह है कि ज्ञान के कुछ तत्व तो बदलते हैं पर वे इतने समय काल में होते है कि उनका बदलाव अनुभव नहीं हो पाता । जीवन मूल्य लगभग वैसे ही रहते हैं , और ऐसे तथ्य ,नियम अथवा प्रत्यय प्रायः नहीं बदलते और ज्ञान के ये तत्व शिक्षा के लिए अति महत्त्वपूर्ण है ।शिक्षा द्वारा इन जीवन मूल्यों के प्रति विद्यार्थियों में आस्था पैदा की जाती है । परन्तु ऐसा नहीं है की ज्ञान के तत्वों में परिवर्तन नही होता । ज्ञान के कुछ तत्व परिवर्तन से प्रभावित होते हैं । जब ज्ञान में अभिवृधि होती है तो ज्ञान में परिवर्तन निश्चित है । पाठ्यक्रम में समय समय पर बदलाव आवयशक है जिससे की परिवर्तित ज्ञान को शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सके । तभी शिक्षा को प्रगतिशील कहा जा सकता है । सत्य के अन्वेषण से जो नए सिद्धांत और नियम उजागर होते है वे ज्ञान के स्थूल रूप में परिवर्तन की अपेक्षा रखते हैं ।यह सत्य है कि शरीर की आँखें सब कुछ नहीं देख सकती परन्तु ज्ञान चक्षु सब कुछ देख सकती है । शिक्षा हमारे ज्ञान चक्षु खोल देती है अतः कल्याणकारी सिद्ध हो सकती है । आज के वर्तमान परिपेक्ष्य में, शिक्षा मात्र सूचनात्मक तथ्यों को विद्यार्थियों तक पहुंचाने का कार्य करती है न कि ठोस ज्ञान का , इससे इसका खोखलापन प्रकट होता है ।

ज्ञान के प्रकार

ज्ञान के चार प्रकार होते हैं:

1. आगमनात्मक ज्ञान
2. प्रागुनभाव ज्ञान
3. विश्लेषण ज्ञान
4. एवं संश्लेषण ज्ञान

1. अनुभवजन्य ज्ञान (A Posteriori Knowledge): अनुभव एवं निरक्षण पर आधारित ज्ञान ही अनुभवजन्य ज्ञान है । इसके मुख्य प्रवर्तक जॉन लोक थे । उनके अनुसार, विद्यार्थी मन जन्म में कोरा होता है परन्तु अनुभव के साथ उसके मन की पट्टी पर लेखन प्रारम्भ हो जाता है । अतः यह कहा जा सकता है कि अनुभव से ज्ञान की वृद्धि होती है । इस प्रकार के ज्ञान में अलौकिक का स्थान नहीं होता है । समग्र अनुभव से सीखने की प्रबलता बढती है। जॉन लोक के अनुसार, " हमारी बुद्धि एवं हमारी ज्ञानेन्द्रियों में कुछ भी निहित नहीं होता है । जन्म के प्रत्यय के विचार को लोक निरस्त करते हैं और प्रत्यक्षीकरण द्वारा ज्ञान को ही वास्तविक ज्ञान मानते हैं ।"

अनुभवजन्य ज्ञान की विशेषताएं :

i. हमें अपने दैनिक जीवन में जो ज्ञान प्राप्त होता है वह यथार्थ नहीं बल्कि वही ज्ञान का वास्तविक उदाहरण है ।
ii. इस ज्ञान के अनुसार अनुभव ही ज्ञान का मुख्य स्रोत है । अनुभव का अर्थ इन्द्रिय अनुभव से है।
iii. जन्म जात मन में कोई प्रत्यय नहीं होता बल्कि वह अनुभव के द्वारा होता है ।

iv. प्रारम्भ में मन निष्क्रिय रूप में संवेदनाओं को ले लेता है। मन की सक्रियता प्रारम्भ में नहीं होती है बल्कि अनुभव से होती है।
v. ज्ञान के मौलिक तत्व प्रत्यय है और उसकी पद्धति आध्यात्मिक है।
vi. भौतिक ज्ञान में ही आदर्श ज्ञान निहित होता है।विज्ञान सार्वभौम ज्ञान देता है परन्तु उसमे अनिवार्यता नहीं होती।

2. **प्रागनुभव ज्ञान (A Priori Knowledge) :** जब सिद्धांत को समझ लिया जाता है, तो सत्य की पहचान होती है। फिर, निरिक्षण, अनुभव एवं प्रयोग द्वारा उसे प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं होती। कांट इस विचार के प्रवर्तक थे। जहाँ आगमनात्मक ज्ञान अनुभव पर बल देता है, वहीँ प्रागनुभव ज्ञान अनुभव से स्वतंत्र होने की बात कहता है। उनके अनुसार, सामान्य सत्य स्पष्ट, निश्चित होता है। गणित का उदाहरण देते हुए इस ज्ञान को समझा जा सकता है। गणित का ज्ञान प्रागनुभव ज्ञान है। कांट ने तर्क एवं अनुभव के परस्पर सहयोग से ज्ञान की प्राप्ति की बात करते। दोनों ही ज्ञान के स्रोत हैं और दोनों का समान महत्त्व है। किसी एक की आलोचना करना ठीक नहीं है।
कांट के अनुसार, ज्ञान की तीन विशेषताएं हैं : सार्वभौमिकता, आवश्यकता एवं नवीनता।
कांट ने भौतिक विज्ञान एवं गणित के ज्ञान का संस्लेषण किया एवं वास्तविक ज्ञान की संभावना का उल्लेख किया। बारह पक्षों को सम्मिलित किया जो इस प्रकार से है : अनेकता, एकता, समग्रता, भाव, अभाव, सेमित्ता, करंता, गुनार्थकता, अन्योंतता , संभावना, वास्तविकता, एवं अनिवार्यता। कांट द्वारा ज्ञान की पूरी व्याख्या की गयी है। इसका आरम्भ संवेदनाओं से होता हुआ अंतर्दृष्टि पर जाकर समाप्त होता है। संवेदनाओं के द्वारा ही बाह्य संसार का बोध कर के ज्ञान का अर्जन किया जाता है। कांट दो प्रकार के विश्व की चर्चा करते हैं : परमार्थ सत्य एवं संवृत्ति सत्य। पहले वाले से बोध होता है एवं दुसरे से संवेदना होती है। इन दोनों विचारों का एकाकीकरण कर के ज्ञान पर प्रकाश डालते। इन दोनों विचारों में अनुभव और तर्क सम्मिलित हैं।
3. **विश्लेषण (Analyt|c Method) :** किसी भी समस्या में क्या है और क्या ज्ञात करना है, कैसे ज्ञात करना है, विश्लेषण की श्रृंखला में आता है। इन सभी घटकों को अलग अलग पढने की विधि ही विश्लेषण है। इसे समस्या का हल खोजने की सर्वोत्तम विधि कहा जाता है।ज्ञात से अज्ञात का पता किया जाता है। हल प्राप्त करने के लिए प्रश्नों में दिए गए तथ्यों का विश्लेषण करके क्रम में रखा जाता है। ज्ञात से अज्ञात बढ़ने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। दिए गए तथ्यों पर प्रकाश डाल के, उनकी सहायता से परिणामों को प्राप्त किया जाता है , फिर दोनों के मध्य परस्पर समायोजन बैठाया जाता है। विश्लेषण विधि के तीन मुख्य सोपान है – ज्ञात करना, हल एवं उत्पत्ति।
इस विधि से तर्कसंगत चिंतन विकसित होने के साथ प्राप्त ज्ञान के स्थायी होने की सुनिश्चितता होती है। विद्याथी प्रारम्भ से अंत तक समस्त प्रक्रियाओं से गुज़रता है इस प्रकार वह विषयवस्तु को समझने में सक्षम हो जाता है। विद्यार्थी की रटने की अपेक्षा स्वयं की भागीदारी से तर्क करने की क्षमता प्रबल हो जाती है। भागीदारी से उसके अन्वेषण करने की शक्ति बढती है जो उसमे आत्मविश्वास प्रदान

करता है। परन्तु यह विधि लम्बी होने के कारण अधिक समय लेती है। सामान्य बुद्धि वाले बच्चों के लिए यह इतनी सरल नहीं है अतः उनके लिए इसका कोई उपयोग नहीं है। परिशुद्धता प्राप्त करना कठिन हो जाता है। यह विधि वहाँ उपयोगी सिद्ध होती है जहां विषय वास्तु को छोटे छोटे हिस्सों में बांटकर विश्लेषण किया जा सकता है और फिर पुनः उसे संगठित कर ज्ञात से अज्ञात को संबोधित किया जा सकता है।

4. **संस्लेषण विधि (Synthesis Method) :** विश्लेषण के विपरीत विधि को संस्लेषण विधि कहते हैं। संस्लेषण से तात्पर्य है, अलग अलग वस्तुओं को एकत्र करने की प्रक्रिया। समस्या के अलग अलग भागों को एकत्रित करते हुए ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ा जाता है। परिकल्पना करते हुए अज्ञात कथनों से जोड़कर, निष्कर्ष को प्राप्त किया जाता है।

   चूँकि यह विधि लम्बी नहीं होती अतः इससे समय की बचत होती। गणित एवं विज्ञान जैसे विषयों के लिए ये विधि अधिक उपयुक्त है। यह विधि अपेक्षाकृत अधिक सरल, संक्षिप्त एवं सुचारू है।

   परन्तु वहीँ दूसरी ओरमी बनी रहती, यह विधि विद्याथियों में रटने की ओर ले जाती है और उन्हें निष्क्रिय बनाती है। विद्यार्थियों के में में कई शंकाएं उत्पन्न होती है और उनके संतोषजनक उत्तर ने मिल पाने की स्थिति में अन्दर आत्मविश्वास की कमी हो जाती है। इस विधि में तर्क की कमी बनी रहती है , न ही सम्पूर्ण समझ विकसित हो पाती है न ही विद्यार्थियों माँ आत्मविश्वास। अतः इस विधि को अमनोवैज्ञानिक विधि भी कहा जाता है।

   निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है की विश्लेषण एवं संस्लेषण विधि एक दुसरे के प्रतियोगी नहीं वरन पूरक हैं। विश्लेषण के माध्यम से रचना को करने का कारण और पद के प्रयोग का चुनाव करके और फिर संस्लेषण विधि से इस समस्या को क्रमबद्ध एवं सुसगठित ढंग से हल करना सबसे उचित होगा।

ज्ञान के स्रोत :

ज्ञान के प्रमुख स्रोत निम्न प्रकार से है

i. **इन्द्रिय अनुभव :** ज्ञानेन्द्रियाँ व्यक्ति को संसार की वस्तुओं के संपर्क में लाता है और व्यक्ति के अन्दर संवेदना उत्पन्न करता है। यही संवेदना वास्तु का जज्ञान प्रदान करती है। वस्तुओं के प्रत्यक्षीकरण होने से ही संवेदनाओं को भली भाँतीसमझा जा सकता है। प्रत्याक्षी करण चेतन मन में अवधारणा उत्पन्न करता है और हमारा ज्ञान इन अवधारणाओं पर ही निर्भर करता है। अनुभववादी, तार्किक प्रत्यक्षवादी, यथार्थवादी, तथा विज्ञानवादी , इन्द्रिय अनुभव को ही मुख्य स्रोत मानते है। यह ध्यान देने योग्य है कि इन इन्द्रिय अनुभव से प्राप्त ज्ञान की विश्वसनीयता का आकलन तो संभव है किन्त इसकी वैद्यता ज्ञात करना कठिन कार्य है।

ii. **साक्ष्य** :साक्ष्य दूसरों के प्राप्त अनुभव एवं निरिक्षण को आधार मानते हुए ज्ञान प्राप्त करना साक्ष्य कहलाता है। स्वयं करने की अपेक्षा, व्यक्ति दूसरों के निरिक्षण से ही तथ्य प्राप्त करके ज्ञान अर्जित करता है। औरों के अनुभव पर आधारित इस साक्ष्य का बहुत उपयोग होता है। व्यक्ति

यदि किसी स्थान को नहीं देखा हुआ होता है परन्तु दुसरे के अनुभव और दिए गए वर्णन से उस स्थान के अस्तित्व पर विश्वास कर लेता है। अतः उसके ज्ञान में वृद्धि होती है। साक्षा के स्रोत से व्यक्ति कई ऐसे तथ्यों के बारे में जानकारी प्रापत कर लेता है।

iii. **तर्कबुद्धि** :तर्क एक मानसिक प्रक्रिया है और हमारा अधिकाँश तर्क पर आधारित होता है। तर्क द्वारा हम अनुभव से प्राप्त ज्ञान की संवेदनाओं को संगठित करके संपूर्ण ज्ञान का निर्माण करते हैं। अतः यह कहा जा सकता है की तर्क अनुभव पर कार्य करता है और उसे ज्ञान में परिवर्तित करता है।

iv. **अंतः प्रज्ञा :**किसी तथ्य को अपने मन में पा जाना अंतः प्रज्ञा है। इस ज्ञान पर हमारा पूर्ण विश्वास होता है। इसको किसी तर्क की आवश्यकता नहीं होती। न ही हमें इसकी निश्चितता या वैद्ता पर कोई होता है। अंतः दृष्टि ज्ञान प्राप्त करने का ऐसा साधन है जिसका उल्लेख दार्शनिको द्वारा किया गया है। अंतः दृष्टि प्रतिभाशाली लोगों को अकस्मात् ही अनुभव हो जाता है। जैसे उदाहरण के लिए, महात्मा बुद्ध को बोधि वृक्ष के नीचे बैठ कर ज्ञान प्राप्त हुआ। एक बिजली की कौंध की तरह ऐसा ज्ञान मस्तिष्क में अचानक ही उदय हो जाता है। एक अन्य उदाहरण में जब मूसा को दस महत्वपूर्ण ईश्वरीय सूत्र एक पर्वत पर बैठ कर प्राप्त हुए वह भी एक अंतः दृष्टि ही कही जायेगी। इस्लाम के साहित्य में इसे ´इल्हाम ' कहा जाता है। इसकी चर्चा भारतीय दर्शन में भी की गयी है। अन्तःदृष्टि पर नए तरह का प्रकाश मनोविज्ञानों की खोजों से डाला गया। जर्मनी के मनोवैज्ञानिक कोह्लेर ने ये अन्वेषण किया कि पशु भी किसी समस्या से जूझते हुए अकस्मात् उसका हल निकाल ही लेते हैं। पर यह भी तभी संभव है जब वह समस्या की सम्पूर्णता की जानकारी पा जाता है। ऐसा ही निष्कर्ष बालकों पर भी प्रयोग करके के ज्ञात हुआ। अतः अन्तःद्रिष्टि के साधन की व्याख्या की जा सकती है। इसका उत्तम लाभ शिक्षा के क्षेत्र में उपयोग करके भी मिल जाता है। अन्ता दृष्टि गंभीर चिंतन का ही परिणाम है। समस्याओं से संघर्ष करके , कई असफलता के बाद अन्तःद्रिष्टि प्राप्त होती है। महान दार्शनिकों एवं विद्वानों का यही मत है। विद्याथियों के सृजनात्मकता के विकास में सहायक होने के साथ ही पाठ्य की योजनाओं के बनाने में भी "इकाइ ज्ञान" का प्रयोग किया जाता है। ऐसा करने से विद्यार्थियों को विषय की सम्पूर्णता अबोध हो जाता है। शिक्षा की दृष्टि से देखा जाए तो यह वैज्ञानिक व्याख्या अति महत्त्वपूर्ण है।

v. **सत्ता आधिकारिक ज्ञान :**यह सर्व विदित है कि मानव समाज में व्यक्तिगत भिन्नताएं हैं। कुछ की प्रतिभा बिरले ही होती है और ये प्रतिभाशाली मानव ही ज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान देते हैं। इनके द्वारा दिया गया ज्ञान प्रतिभा ज्ञान कहलाता है। सामान्य व्यक्तियों को इन प्रतिभाशाली व्यक्तियों के विचार एवं सिद्धांतों को मान लेना चाहिए। शिक्षा में संचालित समस्त पाठ्यक्रम इन विद्वानों जीवन के अनुभवों को मथकर निकाले गए माखन से परिपूर्ण होता है। शिक्षा क्रम को बनाये रखने के लिए इन पर विश्वास करना महत्वपूर्ण हो जाता है। ज्ञान के इस स्रोत की भारी कमी यह है कि यदि इन विचारों से इतना अधिक प्रभावित हो गए तो यह स्वयं

की चिंतन की शक्ति को समाप्त कर सकती है। अतः अन्धविश्वासी न बनके , अपने स्वयं के चिंतन को बनाये रखने की भी उतनी ही आवश्यकता है नहीं तो ज्ञान का विकास का मार्ग अवरुद्ध हो जाएगा।

अभ्यास प्रश्न

1. आगमनात्मक ज्ञान के मुख्य प्रवर्तक ________ थे।
2. ________ज्ञान अनुभव से स्वतंत्र होने की बात कहता है
3. इन्द्रिय अनुभव से प्राप्त ज्ञान की विश्वसनीयता का आकलन तो संभव है किन्त इसकी वैद्यता ज्ञात करना कठिन कार्य है।
4. दूसरों के प्राप्त अनुभव एवं निरिक्षण को आधार मानते हुए ज्ञान प्राप्त करना ______कहलाता है।
5. इस्लाम के साहित्य में ________ 'इल्हाम ' कहा जाता है।
6. ज्ञान के ________ स्रोत का कमी यह है कि यह स्वयं की चिंतन की शक्ति को समाप्त कर सकती है।

1.4 समंक, सूचना एवं ज्ञान में अंतर

सभ्यता की शुरुआत से ही मानव को सूचना की आवश्यकता रही है। इसीलिए वह समय समय पर सूचना को एकत्रित करने व उन सूचनाओं के आधार पर सही व उचित निर्णय लेने के नए व विकसित तरीके खोजते रहा है। सूचना की आवश्यकता व महत्त्व के कारण ही सबसे पहला आविष्कार कागज़ व कलम का हुआ। फिर जैसे जैसे मानव का विकास होता गया वैसे वैसे उसने नए शहर, राज्य व देश बनाये और उन देशों के बीच व्यापार व वाणिज्य के विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध बने और आज केवल व्यापार व वाणिज्य ही नहीं बल्कि जीवन की लगभग हर सूचना का इन्टरनेट के माध्यम से इन देशों के बीच आदान प्रदान हो रहा है ।सरल शब्दों में, कृषि क्रान्ति एवं औद्योगिक क्रान्ति के बाद आज हम सूचना क्रान्ति के युग जा रहे हैं और किसी भी अन्य क्रान्ति की तुलना में सूचना क्रान्ति का विकास बहुत ही ज्यादा तेज़ गति से हुआ है। सभ्यता की शुरुआत में सूचनाओं को मिटटी के बर्तनों पर चित्रात्मक रूप में व शब्दों के रूप में लिखा जाता था। फिर कागज़ व कलम के विकास के साथ ही विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को कागज़ के रूप में store करके रखा जाने लगा और आज हम इन्ही सूचनाओं को computer पर manage करते हैं। विभिन्न प्रकार के आंकड़ों (data) का संकलन (collection) करना और फिर उन आंकड़ों को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत (classify) करके उनका विश्लेषण (analysis) करना तथा उचित समय पर उचित निर्णय लेने की क्षमता प्राप्त करना, इस पूरी प्रक्रिया को कंप्यूटर की भाषा में data processing करना कहा जाता है।

1.4.1 समंक

असिद्ध तथ्य (facts) अंक (figures) व सांख्यिकी (static) का वह समूह जिस पर प्रक्रिया (processing)करने पर एक अर्थपूर्ण सूचना प्राप्त हो, समंक कहलाती है ।आंकड़े मान या मानों का एक समूह होता है, जिसके आधार पर हम निर्णय लेते हैं। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। संख्याएं दस ही होती है परन्तु यदि इसे व्यवस्थित क्रम में रखा जाए तो ये एक सूचना generate होती है। इसलिए ये संख्याएं data है ।इसी तरह से अंगेजी भाषा में small व capital letters के कुल 52 characters ही होते हैं, परन्तु यदि इन्हें एक सुव्यवस्थित क्रम में रखा जाए, तो हज़ारों पुस्तकें बन जाती है। इसलिए ये characters भी data हैं। जैसे किसी विद्यालय के विभिन्न विद्यार्थियों की ये जानकारी रखनी हो तो किसी कक्षा में कौन कौन से विद्यार्थी हैं उनका serial no. क्या है और वे किस पते पर रहते हैं, तो ये सभी तथ्य असिद्ध रूप में data है।

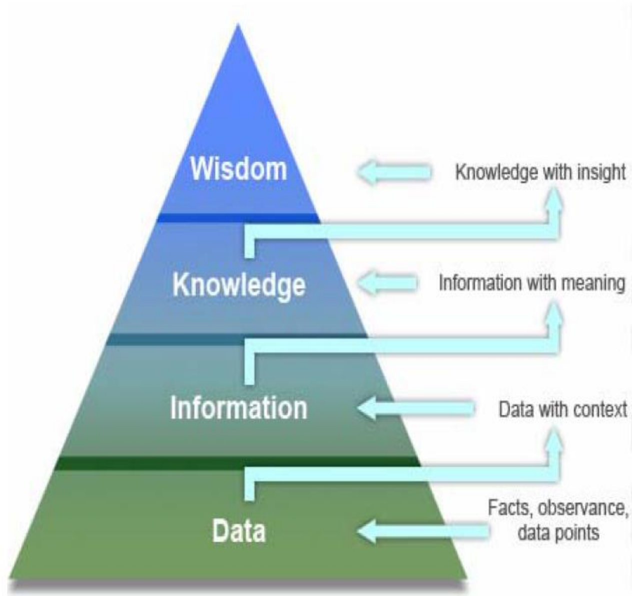

The Pyramid of Knowledge Hierarchy

समंक तथ्यों के समूह होते हैं इन्हें संख्या में व्यक्त किया जाता है। समंकों का संकलन गणना द्वारा अथवा यथोचित शुद्धता से किये गए अनुमान द्वारा होता है। समंक पर्याप्त मात्रा में अनेक कारणों से प्रभावित होते हैं। समंकों का संकलन या तो आगणन द्वारा किया जा सकता है या तो अनुमान द्वारा। यदि किसी अनुसंधान का क्षेत्र सीमित है तो समंकों का संकलन गणना द्रारा किया जाता है। अनुसंधान का क्षेत्र व्यापक होने पर गणना विधि का प्रयोग करना कठिन हो जाता है। ऐसी दशा में अनुमान विधि का सहारा लिया जाता है। समंकों का संकलन पूर्ण निर्धारित उद्देश्य के लिए व्यवस्थितढंग से किया जाता है।

1.4.2 सूचना

आंकड़ों पर processing होने के पश्चात जो अर्थपूर्ण परिणाम निकलता है उसे सूचना कहते हैं। सूचना वह सन्देश है जिसमे अर्थ है , और निर्णय लेने के लिए एक आधार है। सूचना वर्तमान एवं एतिहासिक स्रोतों से प्राप्त हो सकती है। किसी समस्या के समाधान के लिए या फिर किसी अवसर को प्राप्त करने के लिए सूचना एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

1.4.3 ज्ञान

ज्ञान को इस संसार के वस्तुनिष्ठ गुणों और संबंधों, प्राकृतिक और मानवीय तत्त्वों के बारे में विचारों की अभिव्यक्ति के रूप में देखा जा सकता है। ज्ञान में मनुष्य की विविध परक की शक्तियों को संचित करती है तथा विषयीकृत होती है। एक सुगठित सूचना ही ज्ञान का रूप ले सकती है। ऐसी सूचना जिसे मानव मस्तिष्क समझते हुए किसी निर्णय को लेने में सक्षम होता है, उसके ज्ञान में वृद्धि करता है। ज्ञान सूचना नहीं है और सूचना समंक नहीं है। ज्ञान सूचना से प्राप्त होता है, जिस तरह से सूचना समंक से प्राप्त होती है।

1.4.4 समंक, सूचना एवं ज्ञान में अंतर

समंक	सूचना	ज्ञान
समंक असंगठित और अप्रसारित तथ्यों का प्रतिनिधित्व करता है। आमतौर पर समंक प्रकृति में स्थिर है। यह घटनाओं के बारे में असतत तथ्यों का एक सेट का प्रतिनिधित्व कर सकता है समंक सूचना के लिए एक शर्त है।	सूचना को संसाधित समंक के रूप में माना जा सकता है जिससे निर्णय आसान हो जाता है। सूचना को आमतौर पर कुछ अर्थ और उद्देश्य मिलते हैं	उचित अध्ययन और अनुभव के माध्यम से प्राप्त किया गये मानव के समझ को ज्ञान कहा जा सकता है। ज्ञान आमतौर पर अधिगम , समस्या की समझ , सोच और उचित समझ पर आधारित है । ज्ञान को प्रासंगिकता के आधार पर सूचना की समझ के रूप में देख सकते हैं। इसे मानवीय संकल्पनात्मक प्रक्रियाओं के एकीकरण के रूप में माना जा सकता है जो की सार्थक निष्कर्ष निकालने में मदद करता है

अभ्यास प्रश्न

7. वर्तमान युग को क्रान्ति का युग कहा जा सकता हैं।
8. आंकड़े __________होता है, जिसके आधार पर हम निर्णय लेते हैं।
9. __________ असंगठित और अप्रसारित तथ्यों का प्रतिनिधित्व करता है।
10. संसाधित समंक को __________ के रूप में माना जा सकता है।
11. ज्ञान सूचना नहीं है और सूचना समंक है। (सत्य /असत्य)
12. ज्ञान सूचना से प्राप्त होता है, जिस तरह से सूचना समंक से प्राप्त होती है।(सत्य /असत्य)

1.5 सारांश

शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान प्रदान करना है। त्य का अस्तित्व तभी मान्य है जब उसका ज्ञान हो। सत्य को ज्ञान से अलग नहीं किया जा सकता । इसीलिए तत्वमीमांसा के साथ ज्ञान मीमांसा जुडी होती है । ज्ञान और सत्य एक ही है क्यूँकि यह व्यक्ति के मन में होता है।

शिक्षा की दृष्टि से ज्ञान की सक्रियता एवं असक्रियता को ज्ञात कर लेना अति आवयशक है। शिक्षक द्वारा पाठ योजना का स्वरुप बनाना जिससे कि वह विद्यार्थियों को ज्ञान का अर्जन करवाने के लिए उचित स्थितियों का निर्माण कर सके , सक्रिय ज्ञान की श्रेणी में आता ज्ञान के दो पक्ष होते हैं: प्रत्यक्ष ज्ञान एवं अप्रत्यक्ष ज्ञान । ऐसा ज्ञान जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त होता है , जिसे व्यक्ति अपने जीवन में स्वयं प्राप्त करता है, प्रत्यक्ष ज्ञान है। वही दूसरी ओर वह ज्ञान जो कथनों एवं पुस्तकों से प्राप्त किया जाता है, परोक्ष ज्ञान होता है। ज्ञान के चार प्रकार होते हैं: अनुभवजन्य ज्ञान , प्रागुनभाव ज्ञान, विश्लेषण ज्ञानएवं संश्लेषण ज्ञान

ज्ञान के प्रमुख स्रोत निम्न प्रकार से हैं :-

1. **इन्द्रिय अनुभव :** ज्ञानेन्द्रियाँ व्यक्ति को संसार की वस्तुओं के संपर्क में लाता है और व्यक्ति के अन्दर संवेदना उत्पन्न करता है। यही संवेदना वास्तु का जज्ञान प्रदान करती है।
2. **साक्ष्य:** साक्ष्य दूसरों के प्राप्त अनुभव एवं निरिक्षण को आधार मानते हुए ज्ञान प्राप्त करना साक्ष्य कहलाता है। स्वयं करने की अपेक्षा, व्यक्ति दूसरों के निरिक्षण से ही तथ्य प्राप्त करके ज्ञान अर्जित करता है।
3. **तर्कबुद्धि :** तर्क एक मानसिक प्रक्रिया है और हमारा अधिकाँश तर्क पर आधारित होता है। तर्क द्वारा हम अनुभव से प्राप्त ज्ञान की संवेदनाओं को संगठित करके संपूर्ण ज्ञान का निर्माण करते हैं। अतः यह कहा जा सकता है की तर्क अनुभव पर कार्य करता है और उसे ज्ञान में परिवर्तित करता है।
4. **अंतः प्रज्ञा:** किसी तथ्य को अपने मन में पा जाना अंतः प्रज्ञा है। इस ज्ञान पर हमारा पूर्ण विश्वास होता है। इसको किसी तर्क की आवश्यकता नहीं होती। न ही हमें इसकी निश्चितता या वैद्ता पर कोई होता है। अंतः दृष्टि ज्ञान प्राप्त करने का ऐसा साधन है जिसका उल्लेख दार्शनिको द्वारा किया गया है।
5. **सत्ता आधिकारिक ज्ञान:** यह सर्व विदित है कि मानव समाज में व्यक्तिगत भिन्नताएं हैं। कुछ की प्रतिभा बिरले ही होती है और ये प्रतिभाशाली मानव ही ज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान देते हैं। इनके द्वारा दिया गया ज्ञान प्रतिभा ज्ञान कहलाता है।

समंक असंगठित और अप्रसारित तथ्यों का प्रतिनिधित्व करता है ।आमतौर पर समंक प्रकृति में स्थिर है। यह घटनाओं के बारे में असतत तथ्यों का एक सेट का प्रतिनिधित्व कर सकता है समंक सूचना के लिए एक शर्त है।सूचना को संसाधित समंक के रूप में माना जा सकता है जिससे निर्णय आसान हो जाता है। सूचना को आमतौर पर कुछ अर्थ और उद्देश्य मिलते हैं उचित अध्ययन और अनुभव के माध्यम से प्राप्त किया गये मानव के समझ को ज्ञान कहा जा सकता है। ज्ञान आमतौर पर अधिगम , समस्या की समझ ,

सोच और उचित समझ पर आधारित है। ज्ञान को प्रासंगिकता के आधार पर सूचना की समझ के रूप में देख सकते हैं। इसे मानवीय संकल्पनात्मक प्रक्रियाओं के एकीकरण के रूप में माना जा सकता है जो की सार्थक निष्कर्ष निकालने में मदद करता है

1.6 शब्दावली

1. **अंतः प्रज्ञा :** किसी तथ्य को अपने मन में पा जाना अंतः प्रज्ञा है
2. **प्रागनुभव ज्ञान:** ऐसा ज्ञान जो अनुभव से स्वतंत्र हो।

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. जॉन लोक
2. प्रागनुभव
3. इन्द्रिय अनुभव
4. साक्ष्य
5. अंतः प्रज्ञा
6. सत्ता आधिकारिक ज्ञान
7. सूचना
8. मान या मानों का एक समूह
9. समंक
10. सूचना
11. असत्य
12. सत्य

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पाण्डेय रामशल (2007), 'शिक्षा के दार्शनिक सिद्धांत , आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन।
2. ओड़ लमीलाल के. (2009), 'शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि',जयपुर , राजथान हिंदी अकादमी।
3. रूहेला , सत्यपाल , (2014), 'शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार , आगरा , अग्रवाल पब्लिकेशन
4. Best, J.W., & Kahn, J.V. (1996). Research In Education. Prentice-Hall, New Delhi.

5. Bhatia, K. & Bhatia, B. (1997). The Philosophical and Sociological Foundations, New Delhi Doaba House.
6. Biswas. A. (1992). Educatlon in India, Arya Book Depot. New Delhl
7. Solomon Robert C. (2008), 'Introducing Philosophy', Oxford University Press, New York.
8. Masih, Y. (1992). Saamaanya Dharmadarshan Evam Daarshnik Vishleshan, Moti Lal and Banarsi Das, New DelhiIndia.
9. Weber. O.C. (1990). Basic Philosophies of Education, New York Holt, Rinehart and Winston.

1.8 सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. सिंह , एन . पी.(2003), शिक्षा दर्शन , नई दिल्ली , नीलकमल पब्लिकेशन
2. पाठक एंड यागी (2005), शिक्षा के सिद्धांत , आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर ।
3. ओड़ लमीलाल के. (2009), 'शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि',जयपुर , राजथान हिंदी अकादमी।
4. रूहेला , सत्यपाल , (2014), 'शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार , आगरा , अग्रवाल पब्लिकेशन
5. Solomon Robert C. (2008), 'Introducing Philosophy', Oxford University Press, New York.
6. Masih, Y. (1992). Saamaanya Dharmadarshan Evam Daarshnik Vishleshan, Moti Lal and Banarsi Das, New Delhi India.
7. Verma, Ashok Kumar (1991). Tattvamimamsa Evam Gyanmimamsa (Sankshipt Samanya Darshan), Motilal Banarsidass Publisher.

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. ज्ञान की धारणा से क्या अभिप्राय है?
2. प्रत्यक्ष ज्ञान एवं अप्रत्यक्ष ज्ञान से आप क्या समझते हैं अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।
3. ज्ञान प्राप्त करने के कौन से स्रोत हैं ? विवेचना कीजिए
4. ज्ञान प्राप्त की वैज्ञानिक विधि क्या है और इसकी क्या क्या विशेषताएं हैं?
5. ज्ञान का अस्तित्व क्या है और इसकी विभिन्न अवधारणाएं क्या हैं?
6. ज्ञान, सूचना एवं समंक में अंतर कीजिए।

इकाई 2- विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों /अनुशासनों के उद्भव और वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में उनका स्थान, विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों जैसे बागवानी और आतिथ्य के समावेशन की सार्थकता

Emergence of Various Disciplines and their Place in the Total Knowledge Scenario in the Present Times, Significance of the Inclusion of Work Related Subjects Namely Horticulture and Hospitality in the School Curriculum

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों /अनुशासनों के उद्भव और वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में उनका स्थान
2.4 विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों जैसे बागवानी और आतिथ्य के समावेशन की सार्थकता
  2.4.1 बागवानी के समावेशन की सार्थकता
  2.4.2 आतिथ्य के समावेशन की सार्थकता
2.5 सारांश
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची व कुछ उपयोगी पुस्तकें
2.8 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

अध्ययन क्षेत्रों /अनुशासनों के उद्भवन को औपचारिक शिक्षा के उद्भवन के समय से ही माना जाता है। शैक्षिक जगत के कुल संचित ज्ञान को विशिष्ट शाखाओं में वर्गीकरण के कारण कालांतर में विषयों की

जटिलता विषय की प्रकृति आदि के आधार पर विभिन्न अनुशासनों का उद्भवन हुआ। जिसका उदेश्य यह था की एक विषय के अनुभवों को उसी विषय उप विषय को तार्किक क्रम में व्यवस्थित करने से है। ज्यों-ज्यों विषयों का ज्ञान राशि बढती जाती है त्यों-त्यों विषय तथा अनुशासनों की संख्या भी बढती जाती है। अनुशासनों के वर्गीकरण के करण अधिगम, शिक्षण तथा अनुसन्धान में सहजता होती है।

वर्तमान इकाई में हम विभिन्न अध्ययनक्षेत्रों /अनुशासनों के उद्भव और वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में उनका स्थान तथा विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों जैसे बागवानी और आतिथ्य के समावेशन की सार्थकता का विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करेने के पश्चात आप -

1. विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों के उद्भव का अर्थ बता सकेंगे।
2. अध्ययन क्षेत्रों के उद्भव का महत्व अपने शब्दों में व्यक्त कर सकेंगे।
3. वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में विभिन्न विषयों के स्थान की व्याख्या कर सकेंगे।
4. विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों की सार्थकता की विवेचना कर सकेंगे ।
5. बागवानी और आतिथ्य विषय के समावेशन की सार्थकता का विश्लेषण कर सकेंगे।

2.3 विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों /अनुशासन के उद्भव और वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में उनका स्थान

अनुशासन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के discipulus शब्द से हुई है जिसका आशय शिष्य होता है, और disciplina जिसका अर्थ शिक्षण होता है । शैक्षिक अनुशासन सीखने का एक क्षेत्र अथवा एक शाखा है जिसका सम्बन्ध विश्वविद्यालय के एक शैक्षिक विभाग से होता है । जिसे अनुसन्धान तथा अधेतावृति की उन्नति के लिए स्थापित किया जाता है ।शैक्षिक अनुशासन की स्थापना व्यवसायिकों के प्रशिक्षण , शोधकर्ताओं, विद्वानों तथा विशेषज्ञों के लिए बनाया गया है ।

एक शैक्षिक अनुशासन अथवा क्षेत्र ज्ञान की एक शाखा के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमे विशेषज्ञता, जनमानस,प्रोजेक्ट,समुदाय चुनौतियाँ अध्ययन, परिक्षण और शोध का क्षेत्र होता है जो घनिष्ठ रूप से किसी विश्वविद्यालय के विभाग से जुड़ा होता है जैसे नामतः वैज्ञानिक अनुशासन में भौतिक विज्ञान, गणित, और रसायन विज्ञान आदि । शैक्षिक संस्थानों ने मूल रूप से विद्वानों द्वारा सृजित ज्ञान को तथा ज्ञान के विस्तारीकरण को संग्रह/सूचीबद्ध करने के लिए अनुशासन शब्द का प्रयोग किया। उन्नीसवी सताब्दी के दौरान जर्मन विश्वविद्यालयों में अनुशासनात्मक पद का उद्भव हुआ ।

अधिकांश शैक्षणिक विषयों की उत्पत्ति की जड़ें उन्नीसवी शताब्दी कके विश्वविद्यालयों से जुडी हैं जब परंपरागत पाठ्यक्रम अशास्त्रीय भाषा और साहित्य के साथ पूरक थे जिसमें अर्थशास्त्र,

राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, जैसे सामाजिक विज्ञान, प्राकृतिक विज्ञान भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान,जीव विज्ञान तथा तकनीकी विषयों इंजीनियरिंग आदि।

20 शताब्दी में शिक्षाशास्त्र तथा मनोविज्ञान जैसे नए शैक्षणिक विषयों का प्रादुर्भाव हुआ । 1970 और 1980 के दशक में नये शैक्षिक विषयों का विष्फोट हुआ जैसे जनसंचार, महिला अध्ययन, जनसँख्या अध्ययन, पर्यावरण अध्ययन आदि विषयों की उत्त्पत्ति हुई। कई विषयों की उत्पत्ति व्यवसायिक दृष्टिकोण से हुई जिसमें प्रमुखतः नर्सिंग, होटल मैनेजमेंट, हार्टिकल्चर आदि हुई ।कई अन्तः विषयों की उत्त्पत्ति हुई जिसमे भूविज्ञान, जैव रसायन, कम्पूटर साइंस, बायोटेक्नोलोजी आदि विषयों को व्यापक मान्यता प्राप्त हुई।

बीसवीं शताब्दी तक पहुँचने के पश्चात् इन पदनामों को धीरे धीरे अन्य देशों में अपनाया गया और सर्व स्वीकृत विषय के रूप में स्थापित हो गए। हालांकि भिन्न भिन्न देशों में इन्हें एक ही नाम से जाना जाए ये जरूरी नहीं होता है। बीसवी शताब्दी में शामिल विषयों में विज्ञान में भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, भूविज्ञान, खगोल विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञानों में अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, और मनोविज्ञान थे। बीसवीं शताब्दी से पूर्व बिभिन्न अनुशासन प्रायः व्यापक और सामान्य थी जो उस समय विज्ञान में कम रूचि के करण थी।शैक्षणिक व्यवस्था के बाहर एक व्यवसाय के रूप में विज्ञान के लिए कुछ अवसर मौजूद थे। उच्च शिक्षा ने वैज्ञानिक जांच के लिए संस्थागत संरचना प्रदान की साथ ही साथ आर्थिक सहायता भी प्रदान की जिसके फलस्वरूप वैज्ञानिक ज्ञान की मात्र में बहुत तीव्र वृद्धि हुई और अध्ययनकर्ताओं द्वारा वैज्ञानिक गतिविधियों के सूक्ष्म भागों पर ध्यान केन्द्रित किया जाने लगा अतः इस करण वैज्ञानिक विशेषज्ञता का दौर चला ।जिस प्रकार इन विशेषज्ञताओं का विकास हुआ, विश्वविद्यालयों में आधुनिक वैज्ञानिक विषयों में भी सुधार हुआ । अंततः शिक्षा की पहचान किये गए विषयों विशेष विषयों तथा विशिष्ट रुचिओं के केंद्र बन गए।

एंथोनी बिग्लन के अनुसार "एक शैक्षिक अनुशासन अथवा अध्ययन का क्षेत्र ज्ञान की शाखा के रूप में है। जिसके विचार और शोध उच्च शिक्षा का भाग होता है।"

ड़ेंज़, जेड. के अनुसार शैक्षिक अनुशासन सीखने का एक क्षेत्र है जो विश्वविद्यालय के किसी शैक्षिक विभाग से सम्बंधित होता है । इसकी स्थापना शोध तथा अध्ययन की उन्नति की जाती है । यह शोधकर्ताओं, शिक्षकों तथा विशेषज्ञों के व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए बनाया जाता है।

अतः एक शैक्षिक अनुशासन ज्ञान सीखने की शाखा के रूप में अथवा एक शैक्षिक अन्वेषण के रूप में जाना जाता है जो विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से स्नातक तथा परास्नातक स्तर पर अध्ययन की संरचना अथवा कार्यक्रम को तय करता है अध्ययन क्षेत्र से तात्पर्य किसी विषय के अध्ययन क्षेत्र से है और इसके दो पक्ष होते हैं - सैद्धान्तिक पक्ष और व्यावहारिक पक्ष। सैद्धान्तिक पक्ष में विषय के तथ्यों, सिद्धांतों एवं नियमों का अध्ययन और विश्लेषण किया जाता है जबकि व्यावहारिक पक्ष मूलतः विषय की शिक्षण विधियों का प्रयोग, अनुसन्धान क्षेत्र आदि का अध्ययन म्वाव व्यवहार को केंद्र में रखकर किया जाता है। विषयों के अनुशासन को आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के अनुसार शैक्षिक अनुदेशनों के

अधिगम अनुभवों की एक शाखा के रूप जाना जाता है, जिसमें एक शैक्षिक अनुशासन की विशिष्ट जटिल प्रशिक्षण का रूप दर्शाता है।

आर्थर डर्क्स ने अनुशासन को शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में बताते हुए यह कहते हैं कि यह एक विशिष्ट वर्ग के अध्ययन के अभ्यास से सम्बंधित है, इसकी शोध प्राविधि, विषयों के बारे में सत्य की खोज करता है, इसके मौलिक सिद्धांत, तथ्य एवं शब्दावली होती है तथा यह बताता है की जिस विषय वस्तु को अपना रहें है उसका अभ्यास करना है।

मोती निस्संनी (1997) के अनुसार एक अनुशासन को अध्ययन की सुविधा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो तुलनात्मक रूप से अपने ही तरह के विषय विशेषज्ञों के समुदाय के पास उपलब्ध ज्ञान के रूप में जाना जाता है।

अकादमिक अनुशासन की विशेषताएं

i. ज्ञान का विशेषीकृत क्षेत्र
ii. स्वयं की विशिष्ट अवधारणायें एवं सिद्धांत
iii. विशिष्ट शब्दावली
iv. शोध के विशिष्ट उदेश्य
v. निश्चित शोध-प्रविधि
vi. निश्चित विषय-वस्तु पर व्यावसायिक संगठनों से चर्चा

सामाजिक विज्ञान विषय के बारे में एक आमधारणा बन चुकी है कि इसमें नदी, जंगल, पहाड़, राजा-रानियों की कहानियाँ, सत्ता और उसमें लोगों की भागीदारी और रोजी-रोटी यानी अर्थव्यवस्था की बातें बताई जाती हैं और इन बातों को पढ़ने से उन्हें कुछ नहीं मिलने वाला। दैनिक जीवन जीने के लिए तकनीकी कुशलता होनी चाहिए और इसके लिए विज्ञान और गणित विषयों की पढ़ाई अधिक जरूरी है। भौतिकवादी जीवन जीना एकमात्र लक्ष्य हो गया है तो सामाजिक संस्कारों की बात, अच्छे नागरिक की अवधारणा, नैतिकता आदि चीजें गौण लगने लगी हैं। विकास की अंधी दौड़ में शामिल होकर सामाजिक और नैतिक मूल्यों को तुच्छ समझा जाने लगा है। परन्तु सच्चाई यह है कि मानव में नैतिक मूल्यों का विकास करके ही एक अच्छे नागरिक का निर्माण किया जा सकता है।

शिक्षा के विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों की उत्पत्ति के कई कारक होते हैं जिनमें से निम्नलिखित प्रमुख कारक हैं:-

i. तकनीकी उन्नति
ii. इतिहास ज्ञान
iii. स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान
iv. गणितीय क्षमताओं का ज्ञान
v. सभ्यता और संस्कृति के ज्ञान से अवगत कराना

vi. संस्कृति के द्वारा नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षा को बढ़ावा
vii. संस्कृति का संरक्षण
viii. नारी सशक्तिकरण
ix. राष्ट्रीय आर्थिक वृद्धि
x. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार
xi. भाषायी विभिन्नता को समझना
xii. मिडिया की उत्पत्ति
xiii. औद्योगीकरण में रोजगार के अवसर
xiv. फैशन
xv. तुलनात्मक शिक्षा का ज्ञान
xvi. समाज के उत्थान के लिए सरकारी नीतियों के किर्यान्वयन का ज्ञान

सभी विषयों का अपना एक स्वतंत्र क्षेत्र, स्वतंत्र पाठ्यक्रम और शिक्षण विधि तथा अनुसन्धान क्षेत्र होता है। किसी भी विषय को अनुशासित बनाने के लिए उसमें निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए

i. प्रसंग
ii. विषय वस्तु
iii. पाठ्यक्रम
iv. प्रकरण
v. मुद्दे
vi. मूल प्रश्न
vii. संकाय
viii. अनुसन्धान केंद्र
ix. शोध पुस्तिका
x. उत्प्रेरणात्मक उद्देश्य

सामाजिक अध्ययन

सामाजिक अध्ययन से अभिप्राय ऐसे विषय से है जो मानवीय संबंधों की जानकारी प्रदान करता है। सामाजिक अध्ययन का जन्म अमेरिका में हुआ। इसमें भूगोल, इतिहास, राजनीति शास्त्र तथा अर्थशास्त्र का समावेश था। 1911 में कमेटी ऑफ टेन ने इसे समाज शास्त्र से जोड़ कर सामाजिक अध्ययन बना दिया। सामाजिक अध्ययन की धारणा को स्पष्ट करने के लिए कई विद्वानों ने इसको अलग अलग परिभाषित किया है:

जे० एफ० फोरेस्टर के अनुसार " सामाजिक अध्ययन समाज का अध्ययन है और इसका प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों को उस संसार को समझने में सहायता प्रदान करना है जिसमें उन्हीं रहना है ताकि वे उसके

उत्तरदायी सदस्य बन सकें। इसका ध्येय विवेचनात्मक चिंतन और सामाजिक परिवर्तन की तत्परता को प्रोत्साहित करना है, सामान्य कल्याण के लिए कार्य करने की आदत को विकसित करना, दूसरी संस्कृतियों के प्रति सराहना तथा यह दृस्टिकोण रखना की सभी मानव तथा राष्ट्र एक दुसरे पर आश्रित हैं "।

शैक्षिक अनुसंधान विश्वकोष के अनुसार " सामाजिक अध्ययन वह अध्ययन है जो हर मानव के रहन सहन के ढंग, उसकी आवश्यकताओं तथा उन्हें पूरा करने से सम्बंधित विभिन्न क्रियाकलापों और उसके द्वारा विकसित संस्थाओं के बारे में ज्ञान प्रदान करता है"।

सामाजिक अध्ययन शिक्षण के उद्देश्य :-

a. उत्तम नागरिकता के गुणों का विकास
b. सामाजिकता के गुणों का विकास
c. बौद्धिक और मानसिक शक्तियों का विकास
d. नैतिकता और सदाचरण के गुणों का विकास
e. व्यक्तिव के सर्वांगीण विकास में सहायक
f. सामाजिक परिवर्तन लाने में सहायक

वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में सामाजिक अध्ययन का स्थान

आज सामाजिक विज्ञान विषय देश भर के स्कूलों में किसी न किसी रूप में पढ़ाए जा रहे हैं। पहले आम तौर पर ऐसी स्थिति नहीं थी। आजादी के पहले समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान और यहाँ तक कि अर्थशास्त्र की शिक्षा भी मुख्य रूप से विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों तक सीमित थी। आजादी के बाद सामाजिक विज्ञान के विषयों की शिक्षा में निरन्तर विस्तार हुआ तथा जल्दी ही इन्हें स्कूलों में पढ़ाए जाने की माँग बढ़ने लगी। अर्थव्यवस्था, राजनीति और समाज किस तरह काम करते हैं, इसके बारे में सामान्य जानकारी होने से विद्यार्थियों को उनकी आगे की जिन्दगी में यह समझने में मदद मिलेगी कि सार्वजनिक जीवन में नीतियों की क्या भूमिका होती है। यह उन्हें इस बारे में एक शिक्षित दृष्टिकोण बनाने का आधार प्रदान कर सकता है कि कुछ खास नीतियाँ ही क्यों अपनाई जाती हैं और अन्य क्यों नहीं। साथ ही अपनाई जाने वाली नीतियों में से कुछ ही क्यों सफल होती हैं और बाकी क्यों नहीं।

सामाजिक विज्ञान का ज्यादा महत्वपूर्ण योगदान नीति-निर्धारण के लिए प्रशिक्षित करने में नहीं है बल्कि शिक्षित व समझदार नागरिक तैयार करने में है। लोकतंत्र के अच्छे संचालन के लिए शिक्षित नागरिक वर्ग का होना अपरिहार्य है। कोई व्यक्ति अच्छे नागरिक होने के गुण अनायास हवा में से नहीं पकड़ता, उन्हें हासिल करने और बढ़ावा देने के लिए एक खास प्रकार की शिक्षा की जरूरत होती है। एक अच्छा नागरिक होने के लिए सिर्फ भौतिक व जैविक क्रियाकलापों का जानकार होना ही काफी नहीं होता, अच्छे नागरिक को उस सामाजिक संसार के बारे में भी समझ होना जरूरी है जिसका वह हिस्सा है। सामाजिक विज्ञान मानव समाज का अध्ययन करने वाली शैक्षिक विधा है। यह प्राकृतिक विज्ञानों के अतिरिक्त अन्य

विषयों का एक समूह है। इन विषयों की अपनी अलग-अलग सीमाएँ हैं I परन्तु हमें इन सीमाओं को खोलना है। जब तक हम सभी विषयों के आपसी सम्बन्धों और जुड़ाव को बच्चों को अच्छे से नहीं समझाएँगे तब तक सामाजिक विज्ञान के शिक्षण का उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता। अर्थव्यवस्था, राजनीति और समाज किस तरह काम करते हैं, इसके बारे में सामान्य जानकारी होने से विद्यार्थियों को उनकी आगे की जिन्दगी में यह समझने में मदद मिलेगी कि सार्वजनिक जीवन में नीतियों की क्या भूमिका होती है। जब हम इतिहास पढ़ाते हैं तो हमें बच्चों को यह समझाना होगा कि इतिहास केवल घटनाओं और तिथियों का विषय नहीं है बल्कि इसकी सहायता से संसार को और भी सुन्दर बनाया जा सकता है। सामाजिक विज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण कार्य शिक्षित व समझदार नागरिक तैयार करना है। लोकतंत्र के अच्छे संचालन के लिए शिक्षित नागरिक वर्ग का होना आवश्यक है। अच्छे नागरिक के गुण हासिल करने और बढ़ावा देने के लिए एक खास प्रकार की शिक्षा की जरूरत होती है। एक अच्छा नागरिक बनने के लिए उसे उस सामाजिक संसार के बारे में भी समझना होगा जिसका वह हिस्सा है। इसके लिए यह जरूरी है कि उन्हें सामाजिक व प्राकृतिक दुनिया के बारे में स्पष्टता से और व्यवस्थित ढंग से सोचने के लिये प्रोत्साहित किया जाए। इसी कारण से सामाजिक अध्ययन का कुल ज्ञान परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण स्थान है।

प्राकृतिक विज्ञान

विज्ञान मानव के द्वारा किया गया एक प्रयास है। प्रागैतिहासिक काल से मानव ने अपने कल्याण के लिए प्रकृति को अपने वश में करने की कोशिश की। प्रकृति को समझने और उस समझ का प्रकृति को नियंत्रित करने के ले लिए इस्तेमाल करने की प्रक्रिया ही विज्ञान है। प्राकृतिक विज्ञान प्रकृति और भौतिक दुनिया का व्यवस्थित ज्ञान होता है, या फ़िर इसका अध्ययन करने वाली इसकी कोई शाखा। असल में विज्ञान शब्द का प्रयोग लगभग हमेशा प्रकृतिक विज्ञानों के लिये ही किया जाता है। प्राकृतिक विज्ञान आनुभविक विज्ञान की वह शाखा है प्राकृतिक जगत का प्रतिनिधित्व करती है तथा प्रसंभाव्य मात्रात्मक नियमों अथवा वैज्ञानिक प्रतिमानों को बनाने और उनकी शुद्धता का परीक्षण करती है।

मानव स्वाभाव से जिज्ञासु होता है और जो कुछ भी उसके सामाजिक और प्राकृतिक क्षेत्र में घटित होती है उसके बारे में जानने की जिज्ञासा सहज और स्वाभाविक है। इन्हीं प्रश्नों के उत्तर खोजने में लगे रहने के कार्य को विज्ञानं कहा जाता है। विज्ञान मानव की विभिन्न कठिनाइयों एवं समस्याओं के निवारण हेतु सशक्त साधन है।

प्राकृतिक विज्ञान को मुख्य रूप से तीन शाखाओं में विभाजित किया जा सकता है :-

a. प्राकृतिक विज्ञान- इसमें प्राकृतिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है।
b. औपचारिक विज्ञान - जिसमें घटनाएं तथ्यात्मक व विधिवत विज्ञान से विपरीत चलती है।
c. सामाजिक विज्ञान - जिसमें मानव व्यवहार व् समाज का अध्ययन किया जाता है।

प्राकृतिक विज्ञान की दो शाखाएं होती है - भौतिक विज्ञान और जीव विज्ञान। भौतिक विज्ञान के अन्तर्गत भौतिक विज्ञान, रसायनशास्त्र, पृथ्वी विज्ञान, परिस्थिति विज्ञान, समुद्र विज्ञान, भूविज्ञान आदि शाखाएं

आती हैं। जीव विज्ञान के अन्तर्गत जीव विज्ञान, प्राणी विज्ञान, मानव जीवन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान आदि शाखाएं आती हैं। विज्ञान की अन्य शाखाएं जो व्यवहार पैर आधारित है जैसे व्यवहारिक विज्ञान, मेडिकल विज्ञान इत्यादि।

प्राकृतिक विज्ञान की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :-

a. विज्ञान क्या था या क्या होना चाहिए इसपर विचार नहीं करती बल्कि क्या है, क्या हो रहा है और इसका क्या परिणाम होगा इसपर विचार करती है।
b. विज्ञान के अध्ययन की एक विशेष पद्धति होती है जिसे वैज्ञानिक विधी का नाम दिया जाता है।
c. विज्ञान के अध्ययन के लिए सभी साधन, उपकरण और माध्यम पूर्णतया वैज्ञानिक होते हैं।
d. विज्ञान वस्तुओं और घटनाओं का पूर्व विश्लेषण करने में सक्षम होती है।
e. विज्ञान में ज्ञान को संगठित करने वाली विधि अन्य विषयों की विधि से भिन्न होती है।

विज्ञान विषय का उद्देश्य और लक्ष्य

विज्ञान विषय की शिक्षा का निम्नलिखित उद्देश्य है :-

a. वैज्ञानिक जानकारी बढ़ाना
b. व्यावहारिक उद्देश्य
c. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास
d. सांस्कृतिक उद्देश्य
e. जीविकोपार्जन संबंधी उद्देश्य
f. मनोवैज्ञानिक उद्देश्य
g. अन्य विषयों के अद्ययन में आवश्यक
h. प्रयोग संबंधी कुशलता उत्पन्न करने में सहायक

वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में प्राकृतिक विज्ञान का स्थान

विज्ञान ने मानव की प्रगति में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज विज्ञान मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सहयोग कर रहा है फिर चाहे वो संचार, यातायात, चिकित्सा, शिक्षा, कृषि, उद्योग, मनोरंजन, विद्युत्, परमाणु शक्ति, भवन निर्माण, वास्तु कला। इसलिए प्राकृतिक विज्ञान का ज्ञान के क्षेत्र में अत्यंत ही महत्वपूर्ण स्थान है।

भाषाविज्ञान

भाषाविज्ञान भाषा के अध्ययन की वह शाखा है जिसमें भाषा की उत्पत्ति, स्वरूप, विकास आदि का वैज्ञानिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है। भाषाविज्ञान के अध्ययेता 'भाषाविज्ञानी' कहलाते हैं। भाषाविज्ञान, व्याकरण से भिन्न है। व्याकरण में किसी भाषा का कार्यात्मक अध्ययन किया जाता है

जबकि भाषाविज्ञानी इसके आगे जाकर भाषा का अत्यन्त व्यापक अध्ययन करता है। अध्ययन के अनेक विषयों में से आजकल भाषा-विज्ञान को विशेष महत्त्व दिया जा रहा है।

आधुनिक विषय के रूप में भाषा-विज्ञान का सूत्रपात यूरोप में सन 1786 ई0 में सर विलियम जोन्स नामक विद्वान द्वारा किया गया माना जाता है। संस्कृत भाषा के अध्ययन के प्रसंग में सर विलियम जोन्स ने ही सर्वप्रथम संस्कृत, ग्रीक और लैटिन भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इस संभावना को व्यक्त किया था कि संभवतः इन तीनों भाषाओं के मूल में कोई एक भाषा रूप ही आधार बना हुआ है। अतः इन तीनों भाषाओं (संस्कृत, ग्रीक और लैटिन) के बीच एक सूक्ष्म संबंध सूत्र अवश्य विद्यमान है। भाषाओं का इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन ही आधुनकि भाषा-विज्ञान के क्षेत्र का पहला कदम बना।

डॉ॰ श्यामसुन्दर दास ने अपने ग्रन्थ भाषा रहस्य में लिखा है-"भाषा-विज्ञान भाषा की उत्पत्ति, उसकी बनावट, उसके विकास तथा उसके ह्रास की वैज्ञानिक व्याख्या करता है।" मंगल देव शास्त्री (तुलनात्मक भाषाशास्त्र) के शब्दों में- "भाषा-विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं जिसमें (क) सामान्य रूप से मानवी भाषा (ख) किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का और अन्ततः (ग) भाषाओं या प्रादेशिक भाषाओं के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक विचार किया जाता है।" डॉ॰ भोलानाथ तिवारी के 'भाषा-विज्ञान' ग्रन्थ में यह परिभाषा इस प्रकार दी गई है- "जिस विज्ञान के अन्तर्गत वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन के सहारे भाषा की उत्पत्ति, गठन, प्रकृति एवं विकास आदि की सम्यक व्याख्या करते हुए, इन सभी के विषय में सिद्धान्तों का निर्धारण हो, उसे भाषा विज्ञान कहते हैं।"

वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में भाषा-विज्ञान का स्थान

भाषा-विज्ञान के अध्ययन से हमें अनेक लाभ होते हैं, जैसे-

a. अपनी चिर-परिचित भाषा के विषय में जिज्ञासा की तृप्ति या शंकाओं का निर्मूलन।
b. ऐतिहासिक तथा प्रागैतिहासिक संस्कृति का परिचय।
c. किसी जाति या सम्पूर्ण मानवता के मानसिक विकास का परिचय।
d. प्राचीन साहित्य का अर्थ, उच्चारण एवं प्रयोग सम्बन्धी अनेक समस्याओं का समाधान।
e. विश्व के लिए एक भाषा का विकास।
f. विदेशी भाषाओं को सीखने में सहायता।
g. अनुवाद करने वाली तथा स्वयं टाइप करने वाली एवं इसी प्रकार की मशीनों के विकास और निर्माण में सहायता।
h. भाषा, लिपि आदि में सरलता, शुद्धता आदि की दृष्टि से परिवर्तन-परिवर्द्धन में सहायता।
i. इन सभी लाभों की दृष्टि से आज के युग में भाषा-विज्ञान को एक अत्यन्त उपयोगी विषय माना जा रहा है और उसके अध्ययन के क्षेत्र में नित्य नवीन विकास हो रहा है।

अभ्यास प्रश्न

1. अनुशासन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के__________ शब्द से हुई है
2. अकादमिक अनुशासन की क्या विशेषताएं है ?
3. आधुनिक विषय के रूप में भाषा-विज्ञान का सूत्रपात यूरोप में सन 1786 ई0 में__________नामक विद्वान द्वारा किया गया माना जाता है।
4. प्राकृतिक विज्ञान की दो शाखाएं __________और __________है।
5. किसी भी विषय को अनुशासित बनाने के लिए उसमें क्या विशेषताएँ होनी चाहिए ?

2.4 विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों जैसे बागवानी और आतिथ्य के समावेशन की सार्थकता

समाज के किसी भी घटक के विकास एवं उन्नति के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है। शिक्षा हमारे जीवन की सुव्यवस्था के काम आती है। शिक्षा के अभाव में कुछ भी अर्थपूर्ण हांसिल नहीं किया जा सकता।शिक्षा के माध्यम से ही जीवन के सभी प्राप्तव्य प्राप्त किये जा सकते है । यह लोगों के जीवन स्तर में सुधार तथा उनके जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने हेतु क्षमताओं का निर्माण कर उनके लिए बेहतर रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के मामले में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।इस भौतिक संसार में सफलतापूर्वक जीवन यापन करने हेतु समाज की प्रत्येक इकाई को आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बनाने में भी महती भूमिका निभाती है । जीविकाजीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। अपनी योग्यता के अनुसार एक विशेष व्यवसाय का चुनाव जो हम अपने भविष्य के लिये करते हैं विद्यार्थी जिस वृत्ति का चुनाव करते हैं वही आपके भविष्य की आधरशिला है। पूर्व में , लोग पहले अपनी शिक्षा पूरी करते थे, फिर अपनी जीविका का निर्णय करते थे। लेकिन आज की पीढ़ी अपनी विद्यालयी शिक्षा पूरी करने से पहले ही अपने भविष्य निर्माण की दिशा में कदम बढ़ा लेती है। जीविका का चुनाव किसी व्यक्ति की जीवन शैली को अन्य किसी घटना की तुलना में सबसे अधिक प्रभावित करता है। कार्य हमारे जीवन के कई रूपों को प्रभावित करते हैं। हमारे जीवन में मूल्यों, दृष्टिकोण एवं हमारी प्रवृत्तियों को जीवन की ओर प्रभावित करता है। इस भीषण प्रतियोगिता की दुनिया में प्रारम्भ में ही जीविका सम्बन्धी सही चुनाव अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसीलिए एक ऐसी प्रक्रिया की आवश्यकता है, जो किसी व्यक्ति को विभिन्न जीवन वृत्तियों से उसके शिक्षा काल में ही अवगत कराए। यदि शिक्षा ग्रहण करने के समय ही उसकी पाठ्यचर्या में विविध व्यावसायिक विषयों का समवेश ही जाए तब विद्यार्थोयों को शिक्षा ग्रहण करते समय ही अपनी रुचियों क्षमताओं और मनोवृतियों का उसे और उसकी शिक्षा से जुड़े सभी हितकारको को सहायता मिल जाएगी ।तथा बेरोजगारों की संख्या में भी कमी आएगी तथा इस पहल से उसके अर्थोपार्जन की क्षमता बढ़ती है। पाठ्यचर्या में काम से सम्बंधित विषयों के समावेशन से विभिन्न शिल्प एवं कला–कौशल का अभ्यास

भी हो जाता है और व्यसाय के अवसरों से भी वो प्रारम्भ से ही परिचित हो जाता हैं। इन आधारों पर मनुष्य नौकरी अथवा स्वावलम्बी उपार्जन में अधिक सफल होता है। ऐसे–ऐसे अनेक लाभों को ध्यान में रखते हुए शिक्षा में विविध व्यावसायिक कार्यक्रमों का समावेश किया गया। महात्मा गाँधी के शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो की रोजगार परक हो। उनका मानना था कि भारत में बच्चों को 3H की शिक्षा अर्थात् head, hand, heart की शिक्षा दी जाए। गांधीजी के अनुसार शिक्षा ऐसी हो जो आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके बालक आत्मनिर्भर बन सके तथा बेरोजगारी से मुक्त हो।चुने हुए शिल्प की शिक्षा देकर अच्छा शिल्पी बनाकर स्वावलम्बी बनाया जाए। बच्चों को प्ररम्भ से ही शारीरिक श्रम को महत्व बताया जाये ताकि सीखे हुए शिल्प के द्वारा जीविकोपार्जन कर सके। शिक्षा बालकों के जीवन, घर, ग्राम तथा ग्रामीण उद्योगों, हस्तशिल्पों और व्यवसाय घनिष्ट रूप से संबंधित हों।बच्चों द्वारा बनाई गई वस्तुएं जिनका प्रयोग कर सके एवं उनको बेचकर। चूंकि बुनियादी शिक्षा राष्ट्रीय सभ्यता, संस्कृति के का प्रचलन किया गया है। मस्तिष्कीय विकास की दृष्टि से- अर्थोपार्जन जैसी आवश्यकता पूरी करने की दृष्टि से –अति आवश्यक शिक्षा का विकास होना ही चाहिए- उससे हर व्यक्ति को लाभान्वित होना ही चाहिए। इसमें दोरायें नहीं हो सकतीं।ज्ञान, अर्थोपार्जन, शिल्प, कला आदि का अपना महत्व और कार्यक्षेत्र है। भौतिक प्रगति के लिए उन सबकी जरूरत है। गांधीजी ने बुनियादी शिक्षा के पाठ्क्रम के अंतर्गत आधारभूत शिल्प जैसे: कृषि, कताई-बुनाई, लकड़ी, चमड़े, मिट्टी का काम, पुस्तक कला, मछली पालन, फल व सब्जी की बागवानी, बालिकाओं हेतु गृहविज्ञान तथा स्थानीय एवं भौगोलिक आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षाप्रद हस्तशिल्प इसके अलावा मातृभाषा, गणित, सामाजिक अध्ययन एवं सामान्य विज्ञान, कला, हिंदी, शारीरिक शिक्षा आदि रखा। शिक्षण विधि को शिक्षण का वास्तविक कार्य-क्रियाओं और अनुभवों पर अनिवार्य रूप से आधारित किया। सामुदायिक जीवन के आधारभूत व्यवसायों से जुड़ी हुई थी। तथा सीखे हुए आधारभूत शिल्प के द्वारा व्यक्ति अपने जीवन का निर्वाह कर सकता था। अतः यह शिक्षा हमारे जीवन के बुनियाद या आधार से जुड़ी हुई थी इसलिए इसका नाम बुनियादी या आधारभूत शिक्षा रखा गया। उनका मानना था की बच्चों को विभिन्न विषयों की शिक्षा किसी आधारभूत शिल्प के माध्यम से दी जाए। गांधीजी ने बुनियादी शिक्षा में सीखने की समवाय पद्धति का उपयोग किया। जिसक अंतर्गत उन्होंने समस्त विषयों की शिक्षा किसी कार्य या हस्तशिल्प के माध्यम से दी।कोठारी आयोग (1964) ने शिक्षा को काम से समन्वित करने के उद्देश्य से "कार्यानुभव" को शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षा का अभिन्न अंग बनाने की सिफारिश की तथा इस आयोग ने 10+2+3 शिक्षा योजना में +2 पर अकादमिक धारा के अतिरिक्त दूसरी धारा "व्यावसायिक धारा" पाठ्यक्रम में रखने तथा 50% विद्यार्थियों को इस धारा से जोड़ने की सिफारिश की थी। 1951 – 52 में पंचवर्षीय योजना आरंभ करने के अवसर पर आचार्य विनोबा भावे ने कहा था किसी भी राष्ट्रीय योजना की पहली शर्त सबको रोजगार देना है। यदि योजना से सबको रोजगार नहीं मिलता, तो यह एकपक्षीय होगा, राष्ट्रीय नहीं। कार्यानुभव को, सभी स्तरों पर दी जाने वाली शिक्षा का एक आवश्यक अंग होना चाहिए। कार्यानुभव एक ऐसा उद्देश्यपूर्ण और सार्थक शारीरिक काम है जो सीखने की प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है जिससे समाज को वस्तुएँ या सेवाएँ मिलती हैं। यह अनुभव एक सुसंगठित और क्रमबद्ध कार्यक्रम के द्वारा दिया जाना

चाहिए। कार्यानुभव की गतिविधियाँ विद्यार्थियों की रूचियों, योग्यताओं और आवश्यकताओं पर आधारित होंगी। शिक्षा के स्तर के साथ ही कुशलताओं और ज्ञान के स्तर में वृद्धि होती जाएगी। इसके द्वारा प्राप्त किया गया अनुभव आगे चलकर रोजगार पाने में बहुत सहायक होगा। माध्यमिक स्तर पर दिए जाने वाले पूर्व-व्यावसायिक कार्यक्रमों से उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के चुनाव में सहायता मिलेगी। शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए की छात्र को इस योग्य बनाये की वो अपनी जीविका और ज़रूरतों को स्वयं पूरा कर सके। शिक्षा तभी सार्थक सिद्ध होगी जब वह प्रत्येक छात्र को किसी कार्य के योग्य बनाएगी। इसलिए व्यवसाय के लिए शिक्षा न केवल ऐच्छिक बल्कि अनिवार्य शर्त है। शिक्षा में औपचारिकता एवं मौखिकता को दूर करने के लिए व्यावसायिक कार्यानुभव आवश्यक है। गांधीजी ने भी बेसिक शिक्षा प्रणाली द्वारा हस्तकला या कार्यधारित शिक्षा प्रणाली पैर बल दिया क्योंकि उन्होंने आत्मनिर्भरता को शिक्षा का महत्वपूर्ण आधार माना। आज के औद्योगिक युग में शिक्षा का व्यवसायीकरण महत्वपूर्ण है। यह एक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आवश्यकता है। प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ करने की प्राकृतिक लगन होती है और शिक्षा को चाहिए की उनकी उस इच्छा की संतुष्टि करे ताकि वो अपनी योग्यताओं और क्षमताओं को पूर्णतया दर्शा सकें। गांधीजी के शब्दों में सच्ची शिक्षा बेरोजगारी के विरुद्ध बीमें के रूप में होनी चाहिए। कोठारी आयोग ने भी समाज उपयोगी उत्पादन कार्य अथवा कार्यानुभव (S. U. P. W.) पर बल दिया है। उन्होंने शिक्षा को कार्यधारित बनाने पर बल दिया है और यू. जी. सी. के निर्देशन में इस कार्य के लिए आर्थिक सहायता भी जुटाई ताकि देश के बहुत से महाविद्यालयों में व्यावसायिक पाठ्यक्रम चलाया जा सके। मानव का सम्पूर्ण विकास आवश्यक है। व्यावसायिक पक्ष व्यक्तित्व का एक भाग है, परंतु जीवन को सम्पूर्ण बनाने के लिए दुसरे पक्षों का विकास भी ज़रूरी है अर्थात व्यावसायिक के साथ साथ नैतक और बौद्धिक विकास भी ज़रूरी है। हमारे देश में बेरोजगारी की इस भीषण समस्या के अनेक कारण हैं । उन कारणों में लॉर्ड मैकॉले की दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति, जनसंख्या की अतिशय वृद्धि, बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना के कारण कुटीर उद्योगों का ह्रास आदि प्रमुख हैं । शिक्षा प्रणाली में रोजगारोन्मुख शिक्षा व्यवस्था का समावेशन से ही इन समस्याओं से निज़ात पाया जा सकता है । हमारी परम्परागत शिक्षा भी इसी ओर इंगित करती है कहा गया हैं की अर्थकरी च विद्या अर्थात विद्या ऐसी हो जो हमें अर्थोपार्जन के योग्य बनाए।

विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों के समावेशन के उद्देश्य:

- कार्य से सम्बंधित शिक्षा विद्यार्थी को उसकी उसकी , उसके परिवार तथा समुदाय की आवश्यकताओं भोजन, स्वास्थ्य और स्वच्छता, वस्त्र, आवास, मनोरंजन और सामाजिक सेवा के संबंध में की पहचान करने में सहायता करती है ।
- समुदाय में उत्पादक गतिविधियों के साथ उसे परिचित करती है ।
- कच्चे माल के स्रोतों को जानने और माल और सेवाओंके उत्पादन में उपकरण और उपकरणों के उपयोग को जानने में सहायता करती है।
- विविध प्रकार के कार्यों में शामिल वैज्ञानिक तथ्यों और सिद्धांतों को जानने में सहायक है ।

- उत्पादक कार्यों की योजना एवं नियोजन प्रक्रिया को समझने में सहायक ।
- उत्पादक कार्यों के चयन, खरीद, व्यवस्था और उपकरण और उत्पादक कार्य के विभिन्न रूपों के लिए सामग्री के उपयोग के लिए कौशल का विकास करना।
- उत्पादक कार्य एवं समाज सेवा स्थितियों में समस्या को सुलझाने के तरीकों के कौशल का विकास करना।
- मैनुअल काम और मैनुअल श्रमिकों के प्रति सम्मान का विकास करना।
- आत्मनिर्भरता, समबद्धता, अनुशासन ,सहयोग , दृढ़ता, सहनशीलता, आदि के वांछनीय मूल्यों का विकास।
- उत्पादक कार्य और सेवाओं के क्षेत्र में उपलब्धियों के माध्यम से आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास का विकास करना।
- पर्यावरण के लिए चिंतन और अपनेपन, जिम्मेदारी और समाज के लिए प्रतिबद्धता की भावना का विकास करना।
- समाज के सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के बारे में जागरूकता का विकास करना।

2.4.1 बागवानी या उद्यान विज्ञान के समावेशन की सार्थकता

बागवानी'लैटिन शब्द 'Hortus' (उद्यान) और 'संस्कृति' (खेती) में बगीचा खेती अर्थ से ली गई है। बागवानी विज्ञान फल, सब्जियों, फूल, मसाले, सजावटी पौधे, वृक्षारोपण फसलों, कंद फसलों, औषधीय और सुगंधित पौधों की खेती के साथ जुड़ा हुआ है । यह एक कला और विज्ञान है। पौधे ,फल और सब्जियों इत्यादि हमारी रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े हुए हैं । बागवानी का अध्ययन भारत जैसे कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में बहुत महत्व का है। बागवानी एक अनुप्रयोगित विज्ञान है । बागवानी या उद्यान विज्ञान के प्रकार में फल विज्ञान, पुष्प विज्ञान, सब्जी विज्ञान, फल सब्जी परिरक्षणके अलावा बागवानी चिकित्सा भी शामिल है । अत : यह विषय आकर्षक व्यवसाय अवसरों को प्रदान करती है । इस क्षेत्र में न केवल ज्ञान या आसपास के सौंदर्यीकरण बल्कि संयंत्र प्रचार और खेती, फसल उत्पादन, मिट्टी की तैयारी, प्लांट ब्रीडिंग और जेनेटिक इंजीनियरिंग, संयंत्र जैव रसायन और प्लांट फिजियोलॉजी के साथ भी संबंधित है। बागवानी लगभग किसी भी क्षेत्र में इच्छुक व्यक्ति के लिए कैरियर के अवसरों के साथ एक बहुत ही विविध क्षेत्र है। नौकरी पीएच.डी. के साथ उन लोगों के लिए बागवानी में लगभग हर किसी के लिए मौजूद हैं ।

2.4.2 आतिथ्य के समावेशन की सार्थकता: आतिथ्य

अंग्रेज़ी के शब्द hospitality, अर्थात आतिथ्य, का उद्गम लैटिन शब्द hospes से हुआ है; तथा hospes की उत्पत्ति hostis से हुई है, जिसका मूल अर्थ है, शक्ति होना. शाब्दिक रूप से "मेजबान" का अर्थ

"अजनबियों का स्वामी" होता है। अत: आतिथ्य का तात्पर्य अजनबी को मेजबान के बराबर/समतुल्य रखना, उसकी देखभाल करना तथा उसे सुरक्षित महसूस कराना होता है, तथा उसकी मेजबानी के अंत में उसे अगले पड़ाव का मार्गदर्शन प्रदान करना होता है।भारत संसार की सबसे पुरानी सभ्यताओं में से एक है, तथा अतिथियों के ईश्वर के समतुल्य मानने की इसकी प्राचीन संस्कृति है "अतिथि देवो भव" के दर्शन शास्त्र में विश्वास रखते हैं। आतिथ्य आचार शास्त्र अनुप्रयुक्त आचार शास्त्र की एक शाखा है। व्यवहार में, यह अनुप्रयुक्त आचार शास्त्र की अन्य शाखाओं के संबंधों को मिलाता है, जैसे कि व्यापार आचार शास्त्र, पर्यावरणीय आचार शास्त्र, व्यावसायिक आचार शास्त्र, एवं अन्य। चूँकि आतिथ्य एवं पर्यटन सम्मिलित रूप से विश्व में सबसे बड़े सेवा उद्योगों का सृजन करता है, अतः आतिथ्य एवं पर्यटन से जुड़े व्यक्तियों के लिये अच्छे और कार्यों की बहुत संभावनायें हैं।

अभ्यास प्रश्न

6. 3H की शिक्षा अर्थात् __________, __________और__________
7. __________ने कहा था किसी भी राष्ट्रीय योजना की पहली शर्त सबको रोजगार देना है।
8. लैटिन शब्द __________का अर्थ उद्यान है।

2.5 सारांश

एक शैक्षिक अनुशासन अथवा क्षेत्र ज्ञान की एक शाखा के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमे विशेषज्ञता, जनमानस,प्रोजेक्ट,समुदाय चुनौतियाँ अध्ययन, परिक्षण और शोध का क्षेत्र होता है जो घनिष्ठ रूप से किसी विश्वविद्यालय के विभाग से जुड़ा होता है जैसे नामतः वैज्ञानिक अनुशासन में भौतिक विज्ञान, गणित, और रसायन विज्ञान आदि। शैक्षिक संस्थानों ने मूल रूप से विद्वानों द्वारा सृजित ज्ञान को तथा ज्ञान के विस्तारीकरण को संग्रह/सूचीबद्ध करने के लिए अनुशासन शब्द का प्रयोग किया। उन्नीसवी सताब्दी के दौरान जर्मन विश्वविद्यालयों में अनुशासनात्मक पद का उद्भव हुआ।

अधिकांश शैक्षणिक विषयों की उत्पत्ति की जड़ें उन्नीसवी शताब्दी कके विश्वविद्यालयों से जुडी हैं जब परंपरागत पाठ्यक्रम अशास्त्रीय भाषा और साहित्य के साथ पूरक थे जिसमें अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, जैसे सामाजिक विज्ञान, प्राकृतिक विज्ञान भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान,जीव विज्ञान तथा तकनीकी विषयों इंजीनियरिंग आदि।

20 शताब्दी में शिक्षाशास्त्र तथा मनोविज्ञान जैसे नए शैक्षणिक विषयों का प्रादुर्भाव हुआ। 1970 और 1980 के दशक में नये शैक्षिक विषयों का विष्फोट हुआ जैसे जनसंचार, महिला अध्ययन, जनसँख्या अध्ययन, पर्यावरण अध्ययन आदि विषयों की उत्पत्ति हुई। कई विषयों की उत्पत्ति व्यवसायिक दृष्टिकोण से हुई जिसमें प्रमुखतः नर्सिंग, होटल मैनेजमेंट, हार्टिकल्चर आदि हुई।कई अन्तः विषयों की

उत्पत्ति हुई जिसमे भूविज्ञान, जैव रसायन, कम्पूटर साइंस, बायोटेक्नोलोजी आदि विषयों को व्यापक मान्यता प्राप्त हुई।

बीसवीं शताब्दी तक पहुँचने के पश्चात् इन पदनामों को धीरे धीरे अन्य देशों में अपनाया गया और सर्व स्वीकृत विषय के रूप में स्थापित हो गए। हालांकि भिन्न भिन्न देशों में इन्हें एक ही नाम से जाना जाए ये जरूरी नहीं होता है। बीसवी शताब्दी में शामिल विषयों में विज्ञान में भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, भूविज्ञान, खगोल विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञानों में अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, और मनोविज्ञान थे। बीसवीं शताब्दी से पूर्व बिभिन्न अनुशासन प्रायः व्यापक और सामान्य थी जो उस समय विज्ञान में कम रूचि के करण थी।शैक्षणिक व्यवस्था के बाहर एक व्यवसाय के रूप में विज्ञान के लिए कुछ अवसर मौजूद थे। उच्च शिक्षा ने वैज्ञानिक जांच के लिए संस्थागत संरचना प्रदान की साथ ही साथ आर्थिक सहायता भी प्रदान की जिसके फलस्वरूप वैज्ञानिक ज्ञान की मात्र में बहुत तीव्र वृद्धि हुई और अध्ययनकर्ताओं द्वारा वैज्ञानिक गतिविधियों के सूक्ष्म भागों पर ध्यान केन्द्रित किया जाने लगा अतः इस करण वैज्ञानिक विशेषज्ञता का दौर चला ।जिस प्रकार इन विशेषज्ञताओं का विकास हुआ, विश्वविद्यालयों में आधुनिक वैज्ञानिक विषयों में भी सुधार हुआ । अंततः शिक्षा की पहचान किये गए विषयों विशेष विषयों तथा विशिष्ट रुचिओं के केंद्र बन गए।

इस भीषण प्रतियोगिता की दुनिया में प्रारम्भ में ही जीविका सम्बन्धी सही चुनाव अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसीलिए एक ऐसी प्रक्रिया की आवश्यकता है, जो किसी व्यक्ति को विभिन्न जीवन वृत्तियों से उसके शिक्षा काल में ही अवगत कराए। यदि शिक्षा ग्रहण करने के समय ही उसकी पाठ्यचर्या में विविध व्यावसायिक विषयों का समवेश ही जाए तब विद्यार्थीयों को शिक्षा ग्रहण करते समय ही अपनी रुचियों क्षमताओं और मनोवृतियों का उसे और उसकी शिक्षा से जुड़े सभी हितकारको को सहायता मिल जाएगी ।तथा बेरोजगारों की संख्या में भी कमी आएगी तथा इस पहल से उसके अर्थोपार्जन की क्षमता बढ़ती है। पाठ्यचर्या में काम से सम्बंधित विषयों के समावेशन से विभिन्न शिल्प एवं कला–कौशल का अभ्यास भी हो जाता है और व्यसाय के अवसरों से भी वो प्रारम्भ से ही परिचित हो जाता हैं। इन आधारों पर मनुष्य नौकरी अथवा स्वावलम्बी उपार्जन में अधिक सफल होता है। ऐसे–ऐसे अनेक लाभों को ध्यान में रखते हुए शिक्षा में विविध व्यावसायिक कार्यक्रमों का समावेश किया गया । महात्मा गाँधी के शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो की रोजगार परक हो । उनका मानना था कि भारत में बच्चों को 3H की शिक्षा अर्थात् head hand heart की शिक्षा दी जाए । गांधीजी के अनुसार शिक्षा ऐसी हो जो आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके बालक आत्मनिर्भर बन सके तथा बेरोजगारी से मुक्त हो।चुने हुए शिल्प की शिक्षा देकर अच्छा शिल्पी बनाकर स्वावलम्बी बनाया जाए। बच्चों को प्ररम्भ से ही शारीरिक श्रम को महत्व बताया जाये ताकि सीखे हुए शिल्प के द्वारा जीविकोपार्जन कर सके। शिक्षा बालकों के जीवन, घर, ग्राम तथा ग्रामीण उद्योगों, हस्तशिल्पों और व्यवसाय घनिष्ट रूप से संबंधित हों।बच्चों द्वारा बनाई गई वस्तुएं जिनका प्रयोग कर सके एवं उनको बेचकर ।चूंकि बुनियादी शिक्षा राष्ट्रीय सभ्यता, संस्कृति के का प्रचलन किया गया है। मस्तिष्कीय विकास की दृष्टि से—अर्थोपार्जन जैसी आवश्यकता पूरी करने की

दृष्टि से –अति आवश्यक शिक्षा का विकास होना ही चाहिए—उससे हर व्यक्ति को लाभान्वित होना ही चाहिए।

बागवानी विज्ञान फल, सब्जियों, फूल, मसाले, सजावटी पौधे, वृक्षारोपण फसलों, कंद फसलों, औषधीय और सुगंधित पौधों की खेती के साथ जुड़ा हुआ है । यह एक कला और विज्ञान है। पौधे ,फल और सब्जियों इत्यादि हमारी रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े हुए हैं । बागवानी का अध्ययन भारत जैसे कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में बहुत महत्व का है। बागवानी एक अनुप्रयोगित विज्ञान है । बागवानी या उद्यान विज्ञान के प्रकार में फल विज्ञान, पुष्प विज्ञान, सब्जी विज्ञान, फल सब्जी परिरक्षणके अलावा बागवानी चिकित्सा भी शामिल है । अत : यह विषय आकर्षक व्यवसाय अवसरों को प्रदान करती है ।: आतिथ्य का तात्पर्य अजनबी को मेजबान के बराबर/समतुल्य रखना, उसकी देखभाल करना तथा उसे सुरक्षित महसूस कराना होता है, तथा उसकी मेजबानी के अंत में उसे अगले पड़ाव का मार्गदर्शन प्रदान करना होता है।भारत संसार की सबसे पुरानी सभ्यताओं में से एक है, तथा अतिथियों के ईश्वर के समतुल्य मानने की इसकी प्राचीन संस्कृति है "अतिथि देवो भव" के दर्शन शास्त्र में विश्वास रखते हैं । आतिथ्य आचार शास्त्र अनुप्रयुक्त आचार शास्त्र की एक शाखा है।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. Discipulus
2. अकादमिक अनुशासन की विशेषताएं निम्नलिखित हैं
   a. ज्ञान का विशेषीकृत क्षेत्र
   b. स्वयं की विशिष्ट अवधारणायें एवं सिद्धांत
   c. विशिष्ट शब्दावली
   d. शोध के विशिष्ट उदेश्य
   e. निश्चित शोध-प्रविधि
   f. निश्चित विषय-वस्तु पर व्यावसायिक संगठनों से चर्चा
3. सर विलियम जोन्स
4. भौतिक विज्ञान और जीव विज्ञान।
5. किसी भी विषय को अनुशासित बनाने के लिए उसमें निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए :-
   a. प्रसंग
   b. विषय वस्तु
   c. पाठ्यक्रम
   d. प्रकरण
   e. मुद्दे
   f. मूल प्रश्न

   g. संकाय
   h. अनुसन्धान केंद्र
   i. शोध पुस्तिका
   j. उत्प्रेरणात्मक उद्देश्य
6. head hand and heart
7. आचार्य विनोबा भावे
8. Hortus

2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बिहारी, लाला रमन शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धांत, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
2. पचौरी, गिरीश, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, लायल बुक डिपो, मेरठ।
3. पाण्डे, रामशकल, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, विनोद पुस्तक मन्दिर।
4. National Education Commission. (1964-66). Ministry of Education, Government of India, New Delhi
5. National Policy on Education. (1986 & 92). Ministry of Human Resource Development Government of India, New Delhi.

2.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों के उद्भव का अर्थ बताईए ?
2. अध्ययन क्षेत्रों के उद्भव का महत्व अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।
3. वर्तमान समय में कुल ज्ञान परिदृश्य में विभिन्न विषयों के स्थान की व्याख्या कीजिए।
4. विद्यालयी पाठ्यचर्या में काम से संबंधित विषयों की सार्थकता की विवेचना कीजिए।
5. बागवानी और आतिथ्य विषय के समावेशन की सार्थकता का विश्लेषण कीजिए।

इकाई 3 - विभिन्न विषयों का विद्यालयी पाठ्यचर्या में भूमिका और स्थान

Role and Place of Various Subjects in the School Curriculum

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 पाठ्यचर्या में विभिन्न विषय

- 3.3.1 भाषा
- 3.3.2 गणित
- 3.3.3 विज्ञान
- 3.3.4 सामाजिक विज्ञान
- 3.3.5 कला
- 3.3.6 कम्प्यूटर विज्ञान
- 3.3.7 शारीरिक एवं स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा
- 3.3.8 शान्ति शिक्षा
- 3.3.9 काम और शिक्षा

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

3.8 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

विद्यालयी स्तर पर कई विषयों का अध्यापन किया जाता है। किसी भी विषय को पाठ में शामिल करने के पीछे एक व्यापक दृष्टि और संकल्प होता है। किसी भी पाठ्यचर्या निर्माण के पीछे जो उद्देश्य होते हैं उनमें यह निर्धारित किया जाता है कि विद्यार्थी को इस विषय के अंतर्गत क्या सीखना है, किन क्रियाओं के माध्यम से सीखना है, और कौन से अनुभव प्राप्त करने हैं। विद्यार्थियों से उस कक्षा के पश्चात् या उस स्तर

के बाद जिस व्यवहार परिवर्तन की आशा की जाती है उससे सम्बंधित पाठों को पाठ्यचर्या में जगह दी जाती है । इसमें से कुछ को पाठ्य-पुस्तकों में सम्मिलित किया जाता है जिसे शिक्षण के माध्यम से सम्पादित किया जाता है और कुछ को पाठ्यसहगामी क्रियाओं के माध्यम से दिए जाने का प्रयास किया जाता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के अध्ययन के पश्चात आप :-

1. भाषा का विद्यालयी पाठ्यचर्या में भूमिका और स्थान का वर्णन कर सकेंगे।
2. गणित की पाठ्यचर्या में भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे।
3. विज्ञान विषयों विद्यालयी पाठ्यचर्या में भूमिका और स्थान की विवेचना कर सकेंगे।
4. सामाजिक विज्ञान का विद्यार्थियों के लिए उपयोगिता को विवेचित कर सकेंगे।
5. कला और अन्य रचनात्मक विषयों में का विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में भूमिका का विश्लेषण कर सकेंगे।
6. शारीरिक शिक्षा और शांति शिक्षा जैसे विषयों की पाठ्यचर्या में उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।
7. विभिन्न विषयों का पाठ्यचर्या में भूमिका और महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।

3.3 पाठ्यचर्या में विभिन्न विषय

पाठ्यचर्या कैसी होना चाहिए के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि जो बालक के अन्तर्निहित योग्यताओं का विकास मे सहायता करने के साथ ही साथ उसके विकास का मूल्यांकन भी कर सके। पाठ्यचर्या के सम्बन्ध में सैलर और अलेकजेंडर का कहना है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में विद्यालय का सम्पूर्ण प्रयास होता है जिसके द्वारा विद्यालय और विद्यालय के बाहर की परिस्थितियों में वांछित उपलब्धि को प्रदर्शित करना संभव हो सके।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 जो अब तकभी पाठ्यचर्या विकास करने की आधारभूत दस्तावेज समझी जाती है उसमें प्रारंभ में ही सार संक्षेप में ही रविंद्रनाथ टैगोर के निबंध "सभ्यता और प्रगति को इस बात के लिए उल्लिखित किया गया है सृजनात्मक एवं उदार आनंद बचपन की कुंजी है और नासमझ वयस्क संसार द्वारा उनकी विकृति का खतरा है. पाठ्यचर्या का विकास करते समय इस बात का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है कि पाठ्यचर्या इस प्रकार की हो जो बच्चों में सृजन शक्तियों का विकास करे साथ ही साथ इस विकास के लिए वह बोझिल न हो जाए बल्कि रोचकता लिए हुए हो। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 के अनुसार विद्यालयी स्तर पर विभिन्न विषयों को पाठ्यचर्या में स्थान इसी आधार पर दिया गया है।

चित्र संख्या-1

पाठ्यचर्या में समाहित विभिन्न विषय

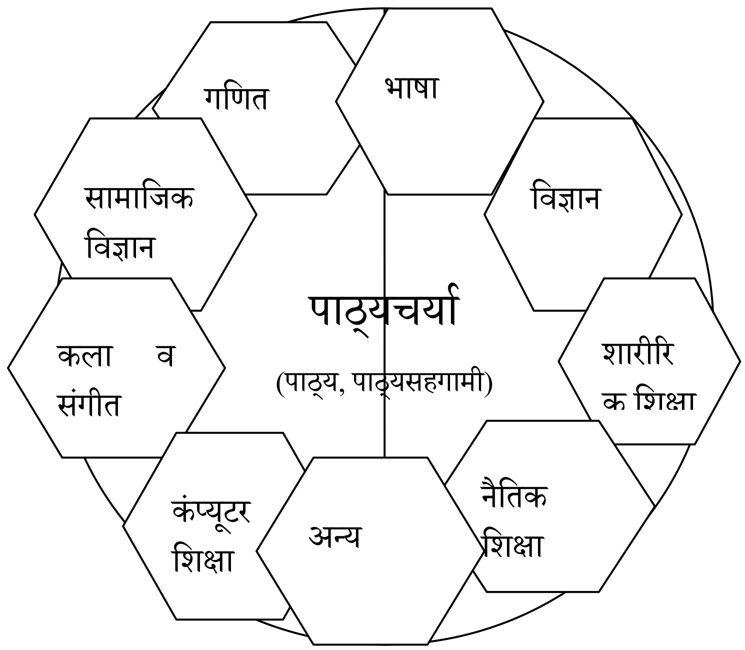

किसी भी पाठ्यचर्या का लक्ष्य यही होता है कि सभी बच्चों को इसप्रकार की शैक्षिक अवसर प्रदान किया जाए कि वह उनकी विशिष्टता की पहचान करे,उनके सामर्थ्य का विकास करे और उनकी प्रसिद्धि को सुनिश्चित करे। एक शिक्षार्थी के रूप में बालक आर विविध शिक्षण प्रविधियों का प्रयोग पाठ्यचर्या का अनिवार्य विशेष गुण है।

पाठ्यचर्या इस बात पर भी बल देता है कि जिन बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताएं विशिष्ट हैं उन पर अधिक ध्यान दिया जाए और उनके द्वारा क्रियात्मक साक्षरता एवं गणितीय ज्ञान को प्राप्त करने को महत्व देता है। यह कक्षा के अधिकांश विद्यार्थियों की शैक्षिक जरूरतों के साथ प्रतिभाशाली बच्चों की विशेष आवश्यकताओं की ओर भी ध्यान देता है।

उपर्युक्त चित्र (चित्र संख्या-1) से स्पष्ट है कि पाठ्यचर्या में गणित, भाषा, सामाजिक विषय,विज्ञान, कला, संगीत, इत्यादी भाषाओँ का महत्वपूर्ण स्थान है. विद्यालयी स्तर पर इन विषयों के पाठ्यचर्या में भूमिका और स्थान की चर्चा हम विस्तार से करेंगे.

3.3.1 भाषा

पाठ्यचर्या में सम्मिलित विभिन्न विषयों में भाषा मुख्य स्थान रखती है. यही कारण है कि प्राथमिक कक्षाओं में 3 R अर्थात पढ़ना, लिखना और गणितीय क्रियाओं (Reading, Writing,Arithmetic) को विशेष स्थान दिया गया है. परन्तु शिक्षा व्यवस्था में यह बात चिंताजनक है कि अधिकांश शिक्षक इस बात से अवगत तक नहीं कि भाषा को पाठ्यचर्या में क्यों रखा जाता है, विभिन्न कहानियों,कविताओं और निबंधों को पाठ्यचर्या में क्यों स्थान दिया गया है। भाषा एक ऐसा विषय है जो विद्यालयी पाठ्यचर्या में मुख्य रूप से प्राथमिक कक्षाओं में सबसे अहम् स्थान रखती है क्योंकि यह भाषा ही है जो किसी भी अन्य विषय में ज्ञान अर्जन के लिए आधार तैयार करती है। भाषा वह पहला विषय है जिससे सबसे प्रथम कक्षा में विद्यार्थी को परिचित कराया जाता है। भाषा मात्र एक विषय ही नहीं बल्कि यह वह माध्यम है जिसके द्वारा सूचनाओं और भावनाओं का आदान-प्रदान किया जाता है। मनुष्य के रूप में हम अपने पूर्वजों से इसी प्रकार भिन्न और श्रेष्ठ हैं कि हमारे पास स्वर ग्रंथि है।

भारत जैसे देश में जहाँ भाषायी विविधता इतनी अधिक हो वहां भाषा को किस प्रकार से पाठ्यचर्या में रखा जाए और उसकी भूमिका क्या होनी चाहिए यह वृहद् चर्चा का विषय है. भारत में लगभग 200 भाषाएँ और 1600 से अधिक बोलियाँ हैं ऐसे में पाठ्यचर्या में भाषा को सही स्थान देना चुनौतीपूर्ण है. इस भाषायी विविधता की चुनौती को ब्रिटिशकाल में भी समझा गया और यही कारन है कि वुड डिस्पैच 1854 में भी तीन भाषाओँ को पाठ्यक्रम में स्थान देने का सुझाव दिया गया. 1935 में महात्मा गाँधी ने बेसिक शिक्षा में त्रिभाषा सूत्र की सिफारिश की.

स्वतंत्रता के पश्चात् हम त्रिभाषा सूत्र का विद्यालयी शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान को दोहराते रहे हैं. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 ने भी भारत के कुछ राज्यों में त्रिभाषा सूत्र की पूर्ण अवहेलना और कुछ राज्यों में संतोषप्रद तरीके से लागू होता हुआ न देखकर इसे पूरी तरह से फिर से लागू करने के लिए पुनः प्रस्तावित किया. सम्पूर्ण राष्ट्र में तमाम बहसों और विचार विमर्श के बाद केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार समिति ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 को स्वीकृत किया जो कहती है कि द्विभाषिकता या बहुभाषिकता से निश्चित संज्ञानात्मक लाभ होते हैं। त्रिभाषा सूत्र के लिए कहती है कि यह भारत की भाषा-स्थिति की चुनौतियों और अवसरों को संबोधित करने का प्रयास है।

सामान्य तौर पर पाठ्यचर्या में जिन भाषाओँ को सम्मिलित करते हैं उनमें हिंदी भाषी राज्यों में पहली भाषा हिंदी होती है, दूसरी भाषा संस्कृत और तीसरी भाषा के रूप में अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पकड़ और उपयोगिता को देखते हुए अंग्रेजी को शामिल किया जाता है। कुछ विद्यालयों में हिंदी/संस्कृत की जगह कोई अन्य देशी या विदेशी भाषा शामिल की जाती है है। उन प्रदेशों में जहाँ मातृभाषा हिंदी नहीं है वहां पहली भाषा के रूप में वहाँ की मातृभाषा, दूसरी भाषा हिंदी और तीसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी शामिल की जाती है। परन्तु भारत के प्रत्येक राज्य में इस सूत्र का अनुसरण नहीं किया जाता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 के अनुसार भाषा शिक्षण में मात्र एक भाषा नहीं शामिल की जनि चैये बल्कि यह बहुभाषिक होनी चाहिए। प्राथमिक स्तर पर घरेलू भाषा को ही शिक्षण माध्यम के रूप में लेना चाहिए। गैर हिंदी राजों में हिंदी भाषा और हिंदी बोले जाने वाले राज्यों में वह भाषा पढ़ाई

जानी चाहिए जो उस क्षेत्र में नहीं बोली जाती या फिर आधुनिक भाषा के रूप में संस्कृत को शामिल किया जा सकता है। उच्च स्तरों पर शास्त्रीय और विदेशी भाषाओँ को स्थान दिया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

1. पाठ्यचर्या विकास करते समय मुख्य रूप से किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?
2. वुड डिस्पैच 1854 में भाषा शिक्षा के लिए क्या सुझाव दिए गए थे?

3.3.2 गणित

भाषा के पश्चात् प्राथमिक स्तर पर जिस विषय को महत्व दिया जाता है वह गणित है। प्रारंभिक स्तर पर गणित में मात्र अंकगणित का ज्ञान बच्चों को दिया जाता है पर बढ़ते स्तर के साथ (कक्षा 4 या 5) उसमें बीजगणित और फिर त्रिकोणमिति को सम्मिलित किया जाता है। प्रारंभिक स्तर पर बच्चों को गणित का ज्ञान देने का मुख्य उद्देश्य उन्हें अपने दैनिक जीवन में गणितीय क्रियाओं को कर सकने की क्षमता प्रदान करने के साथ उच्च स्तर के लिए उन्हें एक आधार प्रदान करना और उनके मस्तिष्क को तैयार करना भी है। गणित से मिला ज्ञान बच्चों को तार्किक तरीके से सोचने, समझने , समस्या समाधान करने, किसी तथ्य को गहराई से जांचने और अमूर्त अवधारणाओं को समझने की योग्यता विकसित करता है। जैसा कि हम जानते हैं हमारे दिनानुदिन का कार्य बिना गणितीय क्रियाओं के नहीं किया जा सकता अतः कक्षाओं में गणित को सम्मिलित करना आवश्यक है। गणित की प्रकृति या उपयोगिता को देखते हुए ही गणित की कक्षा को समय-सारिणी में पहले घंटे में रखने का सुझाव दिया जाता है।

हमारे विद्यालयों में गणित को मात्र एक कठिन और उबाऊ विषय बना कर रख दिया गया है। देखा गया है कि विद्यार्थी इस विषय से भयभीत होते हैं और परीक्षाओं में अधिकांश विद्यार्थी गणित में ही असफल होते हैं। इसके साथ ही समाज में एक पूर्वाग्रह है कि लिंग के आधार पर गणितीय कुशलताओं में अंतर पाया जाता है। पुरुष विद्यार्थी महिला विद्यार्थियों की तुलना में गणित में बेहतर होते हैं। कई बार शिक्षक भी इसी पूर्वाग्रह से ग्रसित होते हैं। विद्यार्थियों के मन में गणित के प्रति भय के पीछे कई कारण हैं। इसमें से पहला कारण पूर्वाग्रह और लोगों की धरना ही है जिसे विद्यार्थी बचपन से सुनते आते हैं। दूसरा कारण गणित में रूचि का अभाव है। शिक्षक अपनी कक्षा को रुचिकर नहीं बना पाते और उनका ज्ञान देने का तरीका गणितीय समस्याओं को मात्र श्यामपट्ट पर हल कर देना है। दूसरा यह कि पाठ्यचर्या में गणित को बहुत बोझिल तरीके से रखा जाता है और कई बार विद्यार्थी अपने दैनिक जीवन की समस्याओं से इन समस्याओं को सम्बंधित नहीं कर पाते हैं जिससे अधिगम का स्थानांतरण नहीं हो पाता है और हर अगली कक्षा के साथ विद्यार्थी पिछली कक्षा में पढ़ी चीजों को भूलते चले जाते हैं। एक और समस्या जिनका सामना विद्यार्थियों और शिक्षकों को करना पड़ता है कि पाठ्यपुस्तकों में दी अधिकतर समस्याएं चुनौतिउर्ण नहीं हैं और उनमें दोहराव है जिससे प्रतिभाशाली छात्र निराश होते हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षकों का कक्षा में पढ़ने का तरीका, बोझिल तरीके से अध्यापन, कई बार शिक्षकों के अन्दर

आत्मविश्वास की कमी, कक्षा लेने से पूर्व में की गयी तैयारी का अभाव इत्यादि भी छात्रों में गणित के प्रति वह रूचि उत्पन्न नहीं करती जो उसे करना चाहिए । एक समस्या कैलकुलेटर या कंप्यूटर का अत्यधिक प्रयोग भी है। पहले विद्यार्थी जहाँ अधिकतर गणनायें स्वयं करते थे और यह निरंतर अभ्यास उनकी कौशल शक्ति के विकास में योगदान करता था वहीँ आसन गणितीय क्रियाओं के लिए भी कैलकुलेटर या कंप्यूटर पर निर्भरता उन्हें आत्मनिर्भर नहीं बनने दे रही है।

प्राथमिक स्तर पर गणित शिक्षण के माध्यम से गणितीय कौशल के विकास के साथ-साथ इसका प्रयास करना चाहिए कि विद्यार्थियों में मूर्त ज्ञान को अमूर्त तक ले जाने कि योग्यता का विकास हो सके। और इस हेतु शिक्षक का यह प्रयास होना चाहिए कि वह विद्यार्थियों में गणित के प्रति रूचि और रुझान उत्पन्न करते हुए लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करे । उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए शिक्षकों का प्रयास उनके कक्षा में सीखे गए ज्ञान का सामान्यीकरण, प्राप्त सूचनाओं का विस्तारित उपयोग, कल्पना कौशलों का विस्तार तथा द्विआयामी और त्रिआयामी समझ को बढ़ाने हेतु होना चाहिए। माध्यमिक कक्षाओं में जब गणित एक अनुशासन का रूप लेने लगता है, इस स्तर पर विद्यार्थी सामान्यीकरण, अनुमान लगाना और नियमों तथा तार्किकता के आधार पर किसी भी तथ्य को सिद्ध करने की योग्यता का विकास किया जा सकता है। इसी तरह उच्चतर माध्यमिक स्तर पर जहाँ गणित पूर्ण रूप से एक अनुशासन के रूप में परिवर्तित हो जाता है वहाँ विद्यार्थियों को और उच्च स्तर के लिए तैयार करने के साथ विद्यार्थियों में सूक्ष्म अंतर्दृष्टि विकसित की जानी जरुरी है कि वे परस्पर विरोधी मांगो के बीच सावधानी से सही विकल्प का चुनाव कर सकें।

3.3.3 विज्ञान

मानव अपने इस स्वरुप में आने के बाद से ही खोजी और अन्वेषणक रहा है और मनुष्य के इसी स्वभाव ने विज्ञान को जन्म दिया। विज्ञान हमारे जीवन के प्रत्येक हिस्से में है. विज्ञान मात्र उतना ही नहीं है जितना हमारे पाठ्यपुस्तकों में दिया गया है बल्कि हमारे सोचने, समझने, देखने, विचार करने, और तद्पश्चात किसी निर्णय पर पहुँचने सभी में सम्मिलित है. विज्ञान को परिभाषित करते हुए विज्ञान की यही परिभाषा दी जाती है कि वह सभी ज्ञान जो क्रमबद्ध, व्यवस्थित एवं कार्य-कारण सम्बन्धों से सम्बंधित हो वह विज्ञान है।

विज्ञान को परिभाषित करते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 ने कहा है कि विज्ञान गत्यात्मक और निरंतर परिवर्धित ज्ञान का भण्डार है जिसमें अनुभव के नए-नए क्षेत्रों को शामिल किया जाता है। एक प्रगतिशील और भविष्योन्मुखी समाज में विज्ञान सचमुच मुक्तिदायी भूमिका निभा सकता है, इसके सहयोग से लोगों को गरीबी, अज्ञान और अन्धविश्वास के दुष्चक्र से निकाला जा सकता है। (राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005)।

विज्ञान की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह किसी भी ज्ञान को शाश्वत या सार्वभौमिक नहीं मानता. इसके अनुसार प्रत्येक दिन में हो रहे खोजों और अन्वेषणों के द्वारा नित नए ज्ञान की रचना हो रही

है और इसी कारण से किसी भी ज्ञान को शाश्वत रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता. उदहारणस्वरुप- कुछ वर्ष पूर्व तक प्लूटो सौर मंडल के नौ ग्रहों में नवाँ ग्रह था परन्तु बाद में खगोलशास्त्रियों ने उसे ग्रह नहीं माना और वर्तमान समय में सौर मंडल में 8 ग्रह है पर इनकी संख्या में भी परिवर्तन संभव है।

देखा गया है कि विज्ञान मात्र तकनीकी एवं प्रगति से नहीं जुड़ा है बल्कि यह सामाजिक विकास एवं सामाजिक प्रगति से भी सम्बंधित है. जो समाज वैज्ञानिक रूप से जितना ही विकसित होता है सामाजिक लचीलापन, खुलापन और परिवर्तन को स्वीकृत कर सकने की भावना उतनी ही अधिक होती है. अतः कक्षा में विज्ञान पढ़ाने का उद्देश्य मात्र वैज्ञानिक ज्ञान ही नहीं बल्कि सामाजिक विकास भी है, क्योंकि यह वैज्ञानिक तरीके से सोचने समझने की क्षमता का विकास करता है। पर यह हमारे देश का दुर्भाग्य ही है कि हम विज्ञान जैसे विषय को बोझिल बनाते हुए इसे रचनात्मकता तथा अन्वेषणों से कोसों दूर रखते हैं। हम विज्ञान विषयों का प्रयोग समतामूलक समाज की स्थापना हेतु कर सकते हैं और विभिन्न क्षेत्रो ने व्याप्त अंतरों को कम करने के लिए कर सकते हैं। विज्ञान अध्ययन-अध्यापन दक्षता तो ला रहा है पर इसमें कुछ गुणात्मक परिवर्तन लाने की आवश्यकता है जिससे यह अपने शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति कर सके।

प्राथमिक स्तर पर विज्ञान को भाषा और गणित से सम्बंधित कर पढ़ाना चाहिए। इस स्तर पर विज्ञान के माध्यम से बच्चे की जिज्ञासु प्रवृति और अन्वेषणात्मक शक्ति का विकास करें। विद्यार्थियों को उत्सुक रूप से अवलोकन करने, नयी चीजों को खोजने, नयी परिस्थितियों में सामंजस्य करने की योग्यता विकसित करनी चाहिए। विज्ञान के महत्व और जीवन के हर क्षेत्र में उपयोग की महत्ता को देखते हुए साथ ही आगामी कक्षाओं में इसके महत्व को समझते हुए यहाँ इस स्तर पर एक उद्देश्य होना चाहिए भावी विज्ञान शिक्षा के लिए उन्हें आधार प्रदान किया जाए। उच्च प्राथमिक स्तर विद्यार्थियों को प्रयोगों और गतिविधियों के माध्यम से सीखाने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए सामूहिक कार्य, सहयोगात्मक रूप से कार्य करना, विचार-विमर्श, योजनायें बनाना और निरंतर तथा नियमित मूल्यांकन अपनायी जानी चाहिए।

माध्यमिक स्तर पर विज्ञान को सहसम्बन्धित कर पढ़ाना चाहिए। इस स्तर पर भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान और जीव विज्ञान; तीनों अलग हो जाते हैं पर कई संकल्पनाएँ अंतर्संबंधित होती हैं। इनको सहसम्बन्धित कर अध्यापन करने से विद्यार्थियों को संकल्पना का सही ज्ञान मिलेगा। यह क्रिया उच्च प्राथमिक स्तर और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अपनायी जा सकती है। तकनीकी के साथ शरीर और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों को शामिल करना चाहिए और गतिविधियों और विश्लेष्णात्मक दृष्टिकोण के साथ पढ़ाया जाना चाहिए। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर उनके भविष्य के लिए उनकी आकांक्षायें देखते हुए उस प्रकार से ज्ञान देना चाहिए। इसके लिए प्रयोगों, समस्या समाधान विधि और विश्लेष्णात्मक नीति की मदद ली जा सकती है। ढेर सारे सतही ज्ञान के स्थान पर कम विषयों का गहराई से अध्ययन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

3. उच्च प्राथमिक स्तर पर गणित शिक्षा का क्या उद्देश्य होना चाहिए ?
4. प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के माध्यम से किन योग्यताओं का विकास विद्यार्थियों में करने चाहिए?

3.3.4 सामाजिक विषय

सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत जिन विषयों को शामिल किया जाता है उनमें इतिहास, भूगोल और राजनीतिशास्त्र हैं । आगे चलकर इसमें समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और मानव विज्ञान को भी सामाजिक विज्ञान में शामिल किया जाता है। यदि विस्तृत अर्थ में देखा जाए तो मानव और उसके समाज से जुड़ा हर एक पहलू; वह चाहे प्रत्यक्ष रूप से हो या परोक्ष रूप से, सामाजिक विज्ञानं में शामिल किए जाते हैं।

आज के दौर में जहाँ विज्ञान का बोलबाला है वहाँ सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों को हाशिये पर रखा जाता है। क्योंकि यह माना जाता है कि विज्ञान विषयों के अध्ययन के पश्चात् रोजगार के अवसर बढ़ते हैं जबकि सामाजिक विज्ञान अवसरों को सीमित कर देता है । अतः विद्यार्थियों को सामाजिक विज्ञान के माध्यम से भी प्रचुर अवसरों को उपलब्ध कराने का प्रयास करना चाहिए। सामाजिक विज्ञान को पाठ्यचर्या में सम्मिलित करने के पीछे राष्ट्रीयता, .समानता, समता, भ्रातृत्व, विश्व-बंधुत्व, अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव जैसे मूल्यों का विकास करना है । शिक्षकों को यह प्रयास करना चाहिए कि वे विद्यार्थियों में सामाजिक, सांस्कृतिक गुणों को सामाजिक विज्ञानं शिक्षण के माध्यम से बढ़ाएं और उनमें विश्लेष्णात्मक दृष्टिकोण को बढ़ावा दे सके।

सामाजिक विज्ञान को मात्र सूचना देने से सम्बंधित मान लिया जाता है और वास्तव में विद्यालयों में इसका रूप ऐसा ही बना दिया गया है। विद्यार्थी तथ्यों को मात्र रटकर उत्तीर्ण होने का प्रयास करते हैं तो ऐसे में आवश्यकता है कि इसे इस रूप में विद्यार्थियों के सामने रखा जाए कि यह उनकी संज्ञानात्मक विकास में मदद कर सके, विद्यार्थियों में रचनात्मकता को बढ़ावा दे और उनमें अंतरानुशासनात्मक चिंतन करने को बढ़ावा दे सके।

प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों हेतु शिक्षक का यह प्रयास होना चाहिए कि वह विद्यार्थी के समक्ष सामाजिक और प्राकृतिक पर्यावरण को भाषा तथा गणित के भाग के रूप में रखे । पाठ में ऐसी गतिविधियाँ शामिल करना चाहिए जिससे जैविक, सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण को समझ सकें। मूल्यों के बीजारोपण के लिए प्राथमिक स्तर से ही प्रयास होना चाहिए तो इस हेतु सामाजिक विज्ञान के माध्यम से विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति प्रेम और संरक्षण की भावना, लैंगिक संवेदनशीलता, समानता, प्रेम जैसे मूल्यों को विकसित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। जहाँ प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विषय और विज्ञान को लेते हुए पर्यावरण विज्ञान के रूप में रखा जाता है वहीँ उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान में भूगोल, इतिहास, राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र शामिल हो जाता है तो इस स्तर पर शिक्षकों का यह प्रयास होना चाहिए कि वे प्रजातान्त्रिक मूल्यों, राष्ट्रीयता की भावना और अंतर्राष्ट्रीय

समझ जैसे मूल्यों का विकास करें। माध्यमिक स्तर पर भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र सभी विषय अलग पढाए जाते हैं तो इस स्तर पर इन सभी विषयों में राष्ट्रीय स्तर के विषयों, मुद्दों, चुनौतियों को जोड़े जाने का प्रयास करना चाहिए। विद्यार्थी इस अवस्था में मानसिक रूप से परिपक्व होना शुरू हो जाते हैं तो शिक्षकों द्वारा उनमे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर व्यापक दृष्टिकोण , विश्व की बेहतर समझ, परिवर्तन को समझने का दृष्टिकोण, सकारात्मक आलोचन की क्षमता तथा भारतीय संविधान में वर्णित मूल्यों जैसे समानता, स्वतंत्रता, न्याय, बंधुत्व, धर्मनिरपेक्षता इत्यादि का विकास हो। वह कक्षा में प्राप्त ज्ञान का प्रयोग अपने जीवन दैनिक जीवन में कर सकें। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर भूगोल, इतिहास, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र के साथ समाजशास्त्र, और मानव विज्ञान अलग-अलग प्रपत्र के रूप में पाठ्यचर्या के अंतर्गत शामिल किए जाते हैं । इस स्तर के पश्चात् अधिकाँश विद्यार्थी अपनी विश्वविद्यालयी शिक्षा प्रारंभ करते हैं अतः इस स्तर पर उन्हें इन विषयों पर मजबूत पकड़ बनानी चाहिए जिससे वह आगामी शिक्षा के लिए मजबूत आधारस्तंभ दे सकें।

3.3.5 कला

विद्यालयों में कला की शिक्षा अनिवार्य है और यह कला तथा सौन्दर्यबोध की शिक्षा कई रूपों में दी जाती है। शैक्षणिक विषय/संसाधन के रूप में कला में किन चीजों को सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा इसकी प्राप्ति किस प्रकार हो सकती है, ये सोचने से पूर्व इसका निर्धारण करना अधिक आवश्यक है कि कला को शैक्षणिक विषय/संसाधन के रूप में क्यों शामिल किया जाए। किसी सशक्त दार्शनिक आधार के अभाव में कला शिक्षण मात्र एक अनौपचारिक कार्यक्रम बन कर रह जाएगा या फिर पाठ्यक्रम में सम्मिलित होने के कारण इसे नीरस ढंग से क्रियान्वित कर दिया जाएगा जैसा अधिकांश विद्यालयों में अब तक होता रहा है; जो कदापि कला शिक्षण का उद्देश्य नहीं है।

पाठ्यचर्या में कला विषय का होना और समय-सारिणी में कला सम्बन्धी विशेष कक्षा होना आवश्यक है। यह भले ही सप्ताह में एक कक्षा ही क्यों न हो पर कला की कक्षा अलग होना आवश्यक है। इसके द्वारा विद्यार्थी कला को समझने, उसको सीखने, इसके अन्वेषण के साथ सही अर्थों में अपनी भावाभिव्यक्ति और समालोचना करना सीख सकते हैं।

प्रारंभिक शिक्षा में कला शिक्षण को पाठ्यचर्या में सम्मिलित किए जाने के पीछे का मुख्य उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी शिक्षा एवं जीवन दोनों में ही कला की महत्वपूर्ण भूमिका को समझ सकें। कला शिक्षा के लिए समय-समय पर विभिन्न आयोगों, समितियों ने सुझाव दिए हैं और उनके प्रतिवेदन में कला और सौन्दर्यबोध की शिक्षा हेतु अनुशंसा की गयी है। कला को एक मुख्य विषय के रूप में शामिल करने के साथ विभिन्न विषयों के साथ जोड़ कर पढ़ाना चाहिए। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 में भी विभिन्न विषयों को सहसम्बन्धित कर पढ़ाने पर बल दिया गया है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित आधार पत्र 2009; जो प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में कला संगीत नृत्य और रंगमंच के शिक्षण से सम्बंधित है; में यह अनुशंसित किया गया है कि 'कला

शिक्षा को सभी विषयों के साथ जोड़ा जाना चाहिए और विभिन्न अवधारणाओं को पढ़ाने के लिए एक माध्यम के रूप में इस्तेमाल करना चाहिए विशेषकर कक्षाओं I, II एवं III में' । इसके साथ ही इस आधार पत्र में आगे अनुशंसा की गयी है कि विद्यार्थियों को रचनात्मक कार्यों में संलग्न करना चाहिए ताकि उनकी सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित हो सके । इसके साथ ही अलग प्रकार की कला के लिए अलग-अलग कालांश हों ।

कला तथा सौन्दर्यबोध के माध्यम से विद्यार्थियों के अन्दर शिक्षकों को इस प्रकार की योग्यता की विकास करना चाहिए कि वह अपने स्थानीय वातावरण से सम्बंधित संकल्पनाओं की पहचान सकें तथा उनका विकास कर सकें । चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्य, गायन, वादन, नाटक, पेंटिंग, कठपुतली का खेल और इनके जैसी कला की अन्य अनेकों विधाएं बच्चों की सृजनात्मकता और सूक्ष्म-गामक कौशलों का विकास तथा विभिन्न मूल्यों का विकास करती हैं । विविध कलाओं के शिक्षण के द्वारा प्रारंभिक कक्षा के छात्र को सीखने के समस्त क्षेत्रों में लाभान्वित होंगे साथ ही साथ निश्चित कला के द्वारा मिली सराहना से वह आत्मविश्वास हासिल करते हैं साथ ही स्व-मूल्यांकन भी कर पाते हैं और यही कला शिक्षा का उद्देश्य है ।

अभ्यास प्रश्न

5. सामजिक विज्ञान के अंतर्गत किन किन विषयों को शामिल किया जाता है?
6. कला शिक्षा के माध्यम से शिक्षकों को विद्यार्थियों में किन गुणों का विकास करना चाहिए?

3.3.6 कंप्यूटर विज्ञान

वर्तमान युग तकनीकी और प्रौद्योगिकी का युग है ।और तकनीकी और प्रौद्योगिकी की कल्पना बिना कंप्यूटर के नहीं की जा सकती । समय और समाज की मांग के अनुसार शिक्षा और शिक्षण संस्थाएं पूर्ति करते हैं तो इस पूर्ति हेतु विद्यालयों में कंप्यूटर विज्ञान वर्तमान समय में एक अहम विषय है । यह प्राथमिक कक्षाओं से ही पाठ्यचर्या में सम्मिलित किया जा रहा है जिसका उद्देश्य कंप्यूटर के क्षेत्र में ऐसे पेशेवरों को तैयार करना है जो समाज की प्रगति हेतु कंप्यूटर का प्रभावी उपयोग कर सकें । हालाकि इस दिशा में सबसे बड़ी समस्या हमारे देश में बुनियादी सुविधाओं का अभाव है । हमारे देश में जिसकी जनसँख्या विश्व में दूसरे स्थान पर है, यहाँ के प्रत्येक विद्यालय में पर्याप्त संख्या में कंप्यूटर को मुहैया कराना एक बहुत बड़ी चुनौती है । इसके साथ ही सभी विद्यालयों में कुशल शिक्षकों की भर्ती भी टेढ़ी खीर है । शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त अन्तर भी कंप्यूटर शिक्षा के लिए एक समस्या है तो इस हेतु किसी बीच के रास्ते को तलाश करने की आवश्यता है । हमारे शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा में पर्याप्त अन्तर भी है इस अन्तर को समाप्त करने या कम करने के लिए कंप्यूटर शिक्षा एक कुंजी के रूप

में काम कर सकती है। इसके लिए कंप्यूटर शिक्षा से सम्बंधित पाठ्यचर्या में व्यापक परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।

3.3.7 शारीरिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा

कहा जाता है कि एक स्वस्थ शरीर में एक स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है. यदि कोई व्यक्ति शारीरिक रूप से स्वस्थ है तो यह उम्मीद की जाती है कि वह मानसिक रूप से भी स्वस्थ होगा. स्वास्थ्य व्यक्ति को केवल शारीरिक रूप से ही हृष्ट-पुष्ट नहीं बनाता बल्कि मानसिक और बौद्धिक विकास को भी प्रभावित करता है. अतः पाठ्यचर्या में स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा को रखा जाना महती आवश्यक है.

शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य से जुड़ी हुई है और स्वास्थ्य शिक्षा किसी के लिए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है. स्वास्थ्य में शारीरिक के साथ साथ मानसिक स्वास्थ्य भी जुड़ा है। और यह केवल शारीरिक व मानसिक विकास के साथ ही नहीं जुड़ा है बल्कि शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक विकास को भी प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। यह बच्चे को मात्र शारीरिक रूप से हृष्ट-पुष्ट देखने से ही सम्बंधित नहीं है बल्कि विद्यालय में सही समय पर नामांकन, कक्षा में उपस्थिति, कक्षा के अन्य विद्यार्थियों के साथ समायोजन, पढने में रूचि, कक्षा में निष्पादन, विद्यालय में अन्य विद्यार्थियों और शिक्षकों के प्रति प्रदर्शित व्यवहार; सभी को प्रभावित करता है। संक्षिप्त में कहा जाए तो यह विद्यार्थी के समग्र विकास से जुड़ा है।

विद्यालय में शारीरिक शिक्षा देने का इतिहास भी पुराना ही है। 1940 के दशक में विद्यालयों के लिए विस्तृत स्वास्थ्य कार्यक्रम बनाया गया जिसके छः घटक थे- स्वास्थ्य सेवा, स्वच्छ स्कूल पर्यावरण, दोपहर का भोजन, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा।

विद्यालयों में सभी कक्षाओं में बच्चे के शारीरिक विकास और पोषण पर ध्यान दिया जाता है; विशेषकर पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों को समुचित भोजन और देखभाल की जरुरत होती है क्योंकि यह बच्चे के विकास की सबसे अहम अवस्था होती है। देश में जहाँ एक बड़ी जनसंख्या गरीबी रेखा ने नीचे निवास करती है वहाँ उन परिवारों से जुड़े बच्चों को पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराना सरकार की जिम्मेदारी है और यही कारण है कि सरकार के द्वरा पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च प्राथमिक स्तर पर मध्याह्न भोजन योजना प्रारंभ की गयी थी। इसका इतिहास अत्यन्त पुराना है। मध्याह्न भोजन सबसे पहले मद्रास में 1925 में प्रारंभ हुई थी। 1980 के दशक में यह गुजरात, केरल और शेष तमिलनाडु में शुरू हुई परन्तु केंद्र स्तर पर यह 15 अगस्त 1995 को प्रारंभ की गयी। विद्यालयों में नियमित स्वास्थ्य जाँच भी इसी स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा का ही भाग है। इसके अतिरिक्त खेल, व्यायाम, सफाई सम्बन्धी कार्यक्रम, पर्यावरण संरक्षण भी इसके अंतर्गत आते हैं।

देश में यौन शिक्षा को लेकर काफी विरोध का सामना करना पड़ता है। सबसे बड़ी समस्या इसके नाम को लेकर है क्योंकि यौनिकता से जुड़े से मसलों पर बात करना हमारे देश में वर्जित जैसा माना जाता है। अतः पाठ्यचर्या विशेषज्ञों को यह प्रयास करना चाहिए कि यौनिकता से जुड़े मुद्दों को शारीरिक शिक्षा के

अंतर्गत रखा जाए क्योंकि इससे विद्यार्थियों के प्रश्नों और भ्रांतियों का निवारण भी होगा और नाम को लेते हुए कोई समस्या लोगों को नहीं होगी। कक्षाओं में बिना किसी पूर्वाग्रह के सभी के लिए यौन शिक्षा को शामिल किया जाना चाहिए। कक्षा के स्तर के अनुसार पाठों को शामिल करना चाहिए।

HIV/AIDS जैसी समस्याओं के समाधान के लिए शारीरिक शिक्षा में इससे सम्बंधित पाठ को शामिल करना चाहिए और इसकी शिक्षा दी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त पाठ्यचर्या में ड्रग्स, तथा अन्य प्रकार के नशे से सम्बंधित समस्याओं को पढ़ाया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा में स्काउट-गाइड, राष्ट्रीय सेवा योजना, राष्ट्रीय कैडेट कोर को भी शामिल करना चाहिए। ये सभी मात्र शारीरिक विकास से ही सम्बंधित नहीं है बल्कि व्यक्तित्व के सर्वांगीणविकास में भी योगदान करता है। राष्ट्रीय कैडेट कोर के जूनियर विंग और डिवीज़न को उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सीनियर विंग या डिवीज़न में भागीदारी लेने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। शारीरिक शिक्षा में शामिल सभी घटकों से सम्बंधित शिक्षा को अन्य विषयों जैसे, गणित, विज्ञान, भाषा या कला जैसा ही महत्व देना चाहिए। नियमित स्वास्थ्य जाँच के लिए डॉक्टर तथा सहायक चिकित्साकर्मी नियमित रूप से विद्यालय में आने चाहिए।लड़कियों के लिए यह और भी आवश्यक है क्योंकि उनकी शारीरिक और स्वास्थ्य समस्याएं लड़कों की तुलना में अधिक जटिल होती हैं और उनका निवारण किया जाना आवश्यक है।लड़कियों के लिए महिला डॉक्टर और नर्स होनी चैये जिससे वे अपनी समस्याओं पर खुल कर बात कर सकें। शारीरिक शिक्षा के लिए विद्यालय में एक अध्यापक होना चाहिए।किशोरियों के लिए एक महिला शिक्षक होनी चाहिए।

शारीरिक शिक्षा में मात्र सैद्धांतिक कक्षायें ही नहीं होनी चाहिए बल्कि प्रायोगिक होनी चाहिए। विद्यार्थियों को खेल के मैदान में ले जाना चाहिए। जो भी स्थानीय खेल हों उन्हें सम्मिलित करने चाहिए हिस्से कम झार्च में विद्यार्थियों को खेल सामग्री उपलब्ध हो सके। समय-समय पर प्रतियोगिताओं का भी आयोजन कराया जाना चाहिए। अन्य विषयों की भांति इसकी भी परीक्षा होनी चाहिए और इसके लिए मूल्यांकन में अंक नहीं बल्कि ग्रेड दिए जाने चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

7. कंप्यूटर शिक्षा के मार्ग में हमारे देश में सबसे बड़ी चुनौतियाँ क्या हैं ?
8. केंद्र स्तर पर मध्याह्न भोजन योजना कब शुरू की गयी थी?

3.3.8 शांति शिक्षा

वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व जिस भयावह स्थिति से गुजर रहा है, इन परिस्थितियों में शांति शिक्षा अत्यंत जरुरी हो जाती है. और यह भी आवश्यक है कि यह मात्र पुस्तकीय ज्ञान बनकर न रह जाये बल्कि

विद्यार्थी इसे अपने जीवन में उतारें अतः इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि यह विषय प्रारंभिक शिक्षा में ही पाठ्यक्रम में संलग्नित कर दिया जाए और इसे इस तरह से पढ़ाया जाये कि इससे सम्बंधित बातों को बच्चों में बीजारोपित किया जा सके. बीजारोपित करने का आशय यहाँ यह है कि जब भी विद्यार्थियों को अपने दैनिक जीवन किसी समस्यात्मक स्थिति में प्रतिक्रिया करनी हो वह सुसंगत तरीके से शांति के साथ ही प्रतिक्रिया करें और इसके लिए शांति से जुड़े मूल्यों का बीजारोपण किया जाना आवश्यक है. और यही कारन है कि शांति शिक्षा को पाठ्यचर्या में शामिल करना अनिवार्य है.

आज का यह दौर हिंसा का दौर बन चुका है। व्यक्ति के अन्दर का विघटन सम्बुर्ण राष्ट्र और विश्व को अपने चपेट में ले चूका है और यह विघटनकारी प्रवृतियाँ नित नए रूप में हिंसा के रूप में सामने आ रही हैं। यह सोचने और समझने वाली बात है कि व्यक्ति जिस रूप में हिंसक हो उठा है और जिस तरह का व्यवहार प्रदर्शित कर रहा है, उस स्थिति में उस व्यक्ति का अंतस कितना विकृत और भग्न होगा जहाँ मानवता बिलकुल नहीं बची होगी। धार्मिक उन्माद, कट्टरता, क्रोध, हिंसक गतिविधियाँ, हर दूसरे के लिए सम्मान का अभाव, असहिष्णुता, मूल्यों की कमी लगभग हम सब के अन्दर आ गयी हैं जो वक़्त बेवक्त शब्दों या कृत्यों के द्वारा बाहर निकलती रहती हैं। ऐसे में आवश्यकता है कि हर स्तर पर चाहे यह एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से हो, एक समूह का दूसरे समूह से हो या एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र से, इन सभी स्तरों पर विवादों को सुलझाने के लिए किसी भी प्रकार की हिंसा का सहारा न लिया जाए। एक शाब्दिक हिंसा भी आगे चलकर विद्रूप रूप ले लेती है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 में भी यह उल्लिखित किया गया है कि "वैश्विक, राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तर पर बढ़ती हुई हिंसा के चलते राष्ट्रीय स्कूली पाठ्यचर्या के ढांचे के इस दस्तावेज में शांति की शिक्षा का स्थान बाध्य रूप से स्पष्ट है। शांति स्थापित करने की दीर्घकालिक प्रक्रिया में शिक्षेक महत्वपूर्ण आयाम है"। क्योंकि शिक्षा ही वह मार्ग है जिसके द्वारा अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव, विश्व-बंधुत्व, राष्ट्रीयता, विविधता की समझ, विभिन्न संस्कृतियों के प्रति आदर का भाव, समानता, न्याय एवं सहनशीलता जैसे मूल्यों जो शांति के लिए आवश्यक हैं, उन मूल्यों को विकसित किया जा सकता है।

वर्तमान समय में घर और बाहर का वातावरण मूल्यों का ह्रास किए जा रहे हैं। टूटते परिवार, क्षरित होते सम्बन्ध, स्वार्थपरता के मध्य घर में भी बच्चों में सही मूल्यों का बीजारोपण नहीं हो रहा है। इसके साथ में यह भी है कि आज के समय में जिस प्रकार की शिक्षा विद्यालयों में दी जा रही है उनमें भी मूल्यों का अभाव है और यही कारण है कि यह शिक्षा हिंसा को और बढ़ावा दे रही है। आज के समय में विद्यार्थियों को हिंसक और आपराधिक गतिविधियों में लिप्त देखा जा सकता है। जब शिक्षा द्वारा इन मूल्यों का विकास किया जा सकता है और विद्यालयों में ही विद्यार्थियों में अन्दर विघटनकारी शक्तियों को बढ़ावा दिया जाना दिख रहा है तो ऐसे में स्पष्ट है कि शिक्षा अपने उद्देश्यों को पूरा करने में असफल सिद्ध हो रही है। अतः आवश्यक है कि शिक्षा के उद्देश्यों को पुनःपरिभाषित किया जाए, विद्यालयों और शिक्षक की भूमिका को निर्धारित किया जाए और पाठ्यचर्या में आवश्यक परिवर्तन किया जाये। इसके साथ ही मूल्यांकन की प्रक्रिया में परिवर्तन लाया जाए। शांति शिक्षा का मूल्यांकन लिखित परीक्षा के

माध्यम से ना हो बल्कि वर्षभर छात्रों के प्रदर्शन के माध्यम से ग्रेड प्रदान किए जायें और एक निर्धारित ग्रेड सभी विद्यार्थियों द्वारा लाना अनिवार्य हो अन्यथा उन्हें पुनः उसी प्रक्रिया एवं कक्षाओं से गुजरना हो। विद्यार्थियों को करणीय और अकरणीय चीजों का ज्ञान हो। उनकी अवस्था के अनुसार अलग-अलग आयु समूह के विद्यार्थियों के लिए भिन्न पाठ्यचर्या हो। शिक्षकों, माता-पिता और अभिभावकों को यह चाहिए कि वह जिन गुणों की अपेक्षा विद्यार्थियों में करते हैं वह गुण स्वयं भी प्रदर्शित करें और समय-समय पर विद्यार्थियों से उनसे अपेक्षित व्यवहार के विषय में चर्चा करते रहना चाहिए। विद्यार्थियों में किसी भी वांछित व्यवहार को विकसित करने के लिए उसको उनके दैनिक जीवन की घटनाओं से जोड़कर पढ़ाने और सिखाने का प्रयास करना चाहिए।

3.3.9 काम और शिक्षा

काम का पाठ्यचर्या में आशय श्रम की शिक्षा से है। यह श्रम शिक्षा से सम्बंधित गतिविधियों को सम्मिलित करता है जिसमें कुछ निर्माण कार्य किया जाए। विद्यालयों में दी जाने वाली इस शिक्षा में कई गतिविधियों को लिया जा सकता है। पाठ्यचर्या में श्रम से सम्बंधित शिक्षा महात्मा गाँधी ने बेसिक शिक्षा के साथ ही प्रस्तावित की थी। यही नहीं, स्वतंत्रता से पूर्व भी विभिन्न आयोगों और समितियों ने इसे प्रस्तावित किया था।

काम का आशय निजी उत्पादक कार्यों से लेकर सामाजिक एवं प्रशासनिक रूप से उपयोगी गतिविधियों से है। काम के अंतर्गत हम उन सभी गतिविधियों को सम्मिलित कर सकते हैं जो किसी भी तरह से मनुष्य के हित से सम्बंधित हैं। इन सभी क्रियाओं की गणना काम के रूप में की जा सकती है। व्यक्ति के जीवन का उद्देश्य स्वयं हेतु और समाज हेतु अपेक्षित उत्तरदायित्वों का निर्वहन है। शिक्षा और जीवन के उद्देश्यों को अलग करके नहीं देखा जा सकता। शिक्षा का उद्देश्य वही होते हैं जो जीवन के उद्देश्य हैं। शिक्षा प्रयास करती है कि व्यक्ति का सर्वांगीण विकास हो, कि वह अपना जीवन निर्वाह कर सके तथा इसके साथ ही समाज के लिए भी उत्पादक हो और समाज के द्वारा जो वांछित है, उन सभी का निर्वहन वह कर सके। शिक्षा में कार्य या श्रम को शामिल कार्य के पीछे भी यही उद्देश्य है।

पाठ्यचर्या में काम और शिक्षा को सम्मिलित करने का उद्देश्य उनके भावी जीवन के लिए तैयारी है अतः यह नहीं होना चाहिए कि काम से सम्बंधित शिक्षा देने के पीछे बच्चों के कन्धों पर अत्यधिक बोझ डाल दिया जाए। यह प्रयास करना चाहिए कि बच्चों से इस भांति काम लिया जाए कि उनमें यह सीखना लगे और इसे उनके शिक्षा-अधिगम में बाधक नहीं होना चाहिए। श्रम को शिक्षा में शामिल करने का उद्देश्य भविष्य की तैयारी है और यह इसी प्रकार देना चाहिए। श्रम शिक्षा देने में कुछ बातों को ध्यान में रखना चाहिए। प्रथम शिक्षकों को यह नहीं करना चाहिए कि बच्चों को कार्य दें और स्वयं उसमें भाग न लें। इसमें शिक्षक और विद्यार्थियों की पूरी सहभागिता होनी चाहिए। क्योंकि इस अवस्था में बच्चे बड़ों को कार्य करता देखकर उसे सीखते हैं। इसके साथ ही समय-समय पर माता-पिता एवं अभिभावकों को भी विद्यालयों के द्वारा आमंत्रित करना चाहिए और सम्मिलित रूप से कार्य को किया जाना चाहिए जिसमें विद्यार्थियों, अभिभावालों, शिक्षकों उर प्रशासकों की पूर्ण भागीदारी हो। इस बात का पूरा ख्याल

रखना चाहिए कि दिया गया कार्य बच्चों कि आयु के अनुसार हो। शिक्षकों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि सभी बच्चों की पूर्ण सहभागिता है।

काम को शिक्षा में शामिल करना बच्चों को अनुशासित करने में भी योगदान करता है। श्रम को शामिल करने से विद्यार्थी न केवल करना सीखते हैं अपितु सामाजिकता, सहभागिता, आत्म-नियंत्रण, मेलजोल कि भावना, कार्य का बंटवारा, आत्मनिर्भरता, रचनात्मकता इत्यादि सीखता है। साथ ही यह आत्मानुशासन के लिए भी काम को शिक्षा में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

9. शांति शिक्षा विद्यार्थियों में किन गुणों का विकास करती है?
10. कार्य को शिक्षा में शामिल करने का लक्ष्य क्या है?

3.4 सारांश

इसप्रकार कहा जा सकता है कि विभिन्न विषयों को पाठ्यचर्या में शामिल करने के बहुत ही दूरगामी लक्ष्य हैं। पाठ्यचर्या में मात्र वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान ही नहीं बल्कि सामाजिक और नैतिकता सम्बन्धी ज्ञान को संहित करने का प्रयास किया जाता है और इनके माध्यम से ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक क्षेत्रों में उद्देश्यों की प्राप्ति करते हुए विद्यार्थियों का विकास करने का प्रयास किया जाता है।

3.5 शब्दावली

1. 3 R: 3 R में अर्थात पढ़ना, लिखना और गणितीय क्रियाओं को लिया जाता है।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पाठ्यचर्या का विकास करते समय इस बात का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है कि पाठ्यचर्या इस प्रकार की हो जो बच्चों में सृजन शक्तियों का विकास करे साथ ही साथ इस विकास के लिए वह बोझिल न हो जाए बल्कि रोचकता लिए हुए हो।
2. वुड डिस्पैच-1854 में तीन भाषाओँ को पाठ्यक्रम में स्थान देने का सुझाव दिया गया था।
3. उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए गणित शिक्षा का उद्देश्य उनके कक्षा में सीखे गए ज्ञान का सामान्यीकरण, प्राप्त सूचनाओं का विस्तारित उपयोग, कल्पना कौशलों का विस्तार तथा द्विआयामी और त्रिआयामी समझ को बढ़ाने हेतु होना चाहिए

4. प्राथमिक स्तर पर विज्ञान के माध्यम से बच्चे की जिज्ञासु प्रवृति और अन्वेषणनात्मक शक्ति का विकास करना चाहिए। विद्यार्थियों को उत्सुक रूप से अवलोकन करने, नयी चीजों को खोजने, नयी परिस्थितियों में सामंजस्य करने की योग्यता विकसित करनी चाहिए।
5. सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत जिन विषयों को शामिल किया जाता है उनमें इतिहास, भूगोल राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और मानव विज्ञान हैं
6. कला के माध्यम से विद्यार्थियों के अन्दर शिक्षकों को इस प्रकार की योग्यता की विकास करना चाहिए कि वह अपने स्थानीय वातावरण से सम्बंधित संकल्पनाओं की पहचान सकें तथा उनका विकास कर सकें। चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्य, गायन, वादन, नाटक, पेंटिंग, कठपुतली का खेल और इनके जैसी कला की अन्य अनेकों विधाएं विद्यार्थियों की सृजनात्मकता और सूक्ष्म-गामक कौशलों का विकास तथा विभिन्न मूल्यों का विकास करती हैं।
7. कंप्यूटर शिक्षा के लिए हमारे देश में सबसे बड़ी चुनौतियाँ बुनियादी सुविधाओं का अभाव और कुशल शिक्षकों की कमी है।
8. केंद्र स्तर पर मध्याह्न भोजन योजना 15 अगस्त 1995 को शुरू की गयी थी।
9. शांति शिक्षा विद्यार्थियों में अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव, विश्व-बंधुत्व, राष्ट्रीयता, विविधता की समझ, विभिन्न संस्कृतियों के प्रति आदर का भाव, समानता, न्याय एवं सहनशीलता जैसे मूल्यों का विकास करती है।
10. काम को शिक्षा में शामिल करने का लक्ष्य विद्यार्थियों को अनुशासन, सामाजिकता, सहभागिता, आत्म-नियंत्रण, मेलजोल कि भावना, कार्य का बंटवारा, आत्मनिर्भरता, रचनात्मकता इत्यादि गुणों का बीजारोपण है।

3.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. NCERT (2005). National Curriculum Framework 2005. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.
2. NCERT (2009). Position Paper National Focus Group on Arts, Music, Dance and Theatre. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2005). राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2009). *कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।

5. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2009). भारतीय भाषाओँ का शिक्षण *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
6. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2008). गणित शिक्षण। *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
7. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2007). सामजिक विज्ञान का शिक्षण *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
8. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2010). शांति के लिए शिक्षा। *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
9. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2008). विज्ञान शिक्षण। *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
10. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2008). स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार* पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।

3.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. भाषा का पाठ्यक्रम में होना क्यों आवश्यक है? प्रकाश डालें।
2. विभिन्न विद्यालयी स्तरों पर गणित शिक्षा की भूमिका को स्पष्ट करें।
3. "विज्ञान और सामाजिक विज्ञान शिक्षण दोनों ही विषय विद्यालयी स्तर पर समान रूप से आवश्यक हैं" इस कथन के पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत करें।
4. शांति शिक्षा और कला की शिक्षा किस प्रकार स्वस्थ और समृद्ध समाज का निर्माण कर सकते हैं? आप अपनी कक्षा के विद्यार्थियों को स्वस्थ और समृद्ध समाज के निर्माण हेतु किस प्रकार प्रेरित कर सकते हैं? अपने विचार प्रस्तुत करें।

इकाई 4- विद्यालयीय पाठ्यक्रम में विषय-वस्तु का चयन एवं अनुक्रमण

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 विषय-वस्तु चयन का सिद्धांत
4.3.1 वैधता का सिद्धांत
4.3.2 सार्थकता का सिद्धांत
4.3.3 संतुलन का सिद्धांत
4.3.4 स्वयं-सम्पूर्णता का सिद्धांत
4.3.5 रोचकता का सिद्धांत
4.3.6 उपयोगिता का सिद्धांत
4.3.7 साध्यता का सिद्धांत
4.4 विषय-वस्तु संरचना एवं घटकों का एकीकरण
4.4.1 संज्ञानात्मक क्षेत्र की विषय-वस्तु
4.4.2 भावात्मक क्षेत्र की विषय-वस्तु
4.4.3 क्रियात्मक क्षेत्र की विषय-वस्तु
4.5 विषय-वस्तु अनुक्रमण का सिद्धांत
4.5.1 अनुक्रमण की आधारभूत परिसंकल्पना
4.5.2 अनुक्रमण की विधियां
4.6 सारांश
4.7 शब्दावली
4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

पूर्व की इकाइयों को अध्ययन करने के पश्चात् आप यह समझ गए होंगे की ज्ञान (knowledge) क्या होता है एवं किसी सम्पूर्ण ज्ञान के स्रोत क्या क्या होते है। एक ही तरह के मिलते जुलते ज्ञान, जो मानव

मस्तिष्क के किसी विशेष भाग को प्रभावित करते हो, को आम भाषा में विधा (discipline) कहा जा सकता है। किसी भी विधा में पाये जाने वाले ज्ञान को अगर ध्यानपूर्वक एवं पूर्ण सावधानता के साथ विश्लेषण कर वर्गीकृत किया जाए, तो प्रत्येक वर्ग को हम एक विषय के रूप में प्राप्त करेंगे। सरल शब्दों में कहा जाये तो विशिष्ट रूप से वर्गीकृत ज्ञान को विषय के रूप में समझा जा सकता है एवं मिलते जुलते विषयों से ही एक विधा का जन्म होता है। जब बात किसी विद्यालयी पाठ्यक्रम की होती है तो हम पाते है की अलग अलग विधाओं से कुछ विषयों का चयन कर आमतौर पर पाठ्यक्रम बना दिया जाता है। हालाकि इस दौरान बालकों की मनोवैज्ञानिक स्तर, उनकी अभिरुचि एवं सम्बंधित अन्य कारकों का ध्यान रखा जाता है। इस लिए एक शिक्षक या भावी शिक्षक होने के नाते यह हमारी जरुरत बन जाती है की हमें यह पता रहे की किसी विषय में समाहित होने वाले ज्ञान, जिसे हम विषय-वस्तु भी कहते है, कौन कौन से है या होने चाहिए। विषय-वस्तु के चयन के समय हमें क्या क्या ध्यान में रखना चाहिए । विषय-वस्तु का अनुक्रम क्या होना चाहिए एवं इस अनुक्रम को कैसे तैयार किया जाये। वर्तमान इकाई में हमलोग इस बात पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे की किसी विद्यालयी पाठ्यक्रम में विषय-वस्तु का चयन एवं अनुक्रम कैसे किया जाये एवं इसके लिए कौन सी विधियां उपयुक्त है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. विषयवस्तु चयन से सम्बंधित महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को बता सकेंगे।
2. विषयवस्तु संरचना से सम्बंधित घटकों का वर्णन कर सकेंगे।
3. विषयवस्तु के विभिन्न घटकों के एकीकरण की प्रक्रिया को समझा सकेंगे।
4. विषयवस्तु अनुक्रम की विधियोँ को समझा सकेंगे।
5. विषयवस्तु की अनुक्रम की विधियोँ को ध्यान में रखते हुए किसी भी विषयवस्तु का अनुक्रमण कर सकेंगे।

4.3 विषय-वस्तु चयन का सिद्धांत

क्या आप जानते है की किसी पाठ्यक्रम को आप सफल कैसे बना सकते है ? किसी भी पाठ्यक्रम को सम्पूर्ण एवं सफल बनाने के लिए यह जरुरी है की वह अपने शैक्षणिक उद्देश्यों को प्राप्त कर सके और साथ ही साथ अपने संरचना में समाज को प्रतिबिंबित कर सके; अर्थात पाठ्यक्रम अपने सभी विषयों के माध्यम से एक सम्पूर्ण समाज को दर्शाता हो। अब प्रश्न यह भी उठ खड़ा होता है की सफल पाठ्यक्रम के लिए उसमे ऐसा क्या होना चाहिए ? इसका उत्तर है सटीक विषय-वस्तु। यह विषय-वस्तु ही है जो पाठ्यक्रम की सफलता या असफलता को निर्धारण कराती है, जैसे – कौनसा विषय-वस्तु है? क्या वह इस पाठ्यक्रम के लिए सही है ? क्या विषय-वस्तु बालकों के लिए रोचक है ? आदि। ध्यान देने योग्य बात यह है की इस प्रकार के सभी प्रश्न विषय-वस्तु के चयन से सम्बंधित है। इसका मतलब है की एक

अच्छा पाठ्यक्रम उसमे निहित होने वाले विषय-वस्तु व् उसकी गुणवत्ता पर निर्भर करता है। इन्ही विषय-वस्तु की गुणवत्ताओं को परखने के लिए 'विषय-वस्तु के चयन का सिद्धांत' का प्रतिपादन किया गया है। विषय-वस्तु के चयन का सिद्धांत (Principle of content selection) मूलत:सात अलग अलग सिद्धातों का समुच्चय है, जिनके बारे में हम क्रमश चर्चा करेंगे।

4.3.1 वैधता का सिद्धांत (Principle of Validity)

वैधता का सिद्धांत किसी विषय-वस्तु की वैधता के आधार पर विषय में या पाठ्यक्रम में उसके चयन की बात करता है। विषय-वस्तु की वैधता को दो अलग तरीके से सिद्ध किया जा सकता है, यथा –

प्रथमत: जिस विषय के विषय-वस्तु का चयन होना है, विषय-वस्तु उसी विषय के ज्ञान क्षेत्र से सम्बंधित होना चाहिए। एक उदहारण के माध्यम से हम इसे समझने की कोशिश करते है। मान लीजिये आपके इतिहास से सम्बंधित किसी विषय-वस्तु का चयन करना है तो इस सिद्धांत के अनुसार विषय-वस्तु का क्षेत्र इतिहास से ही सम्बंधित होना चाहिए किसी और विषय से नहीं।

द्वितीयत: विषय-वस्तु उस विषय के लिए पहले से निर्धारित किये गए उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होना चाहिए। दूसरे शब्दों में कहे तो विषय-वस्तु विषय या पाठ्यक्रम के उद्देश्यों के दृष्टिकोण से वैध होना आवश्यक है। मान लीजिये आप भूगोल विषय पढ़ा रहे है जिसका एक उद्देश्य बालकों को गंगा नदी के गतिपथ के बारे में आवश्यक जानकारी देना है। अत: इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आपका विषय-वस्तु गंगा नदी एवं उसके उद्गम से सागर तक के सफ़र से सम्बंधित होना चाहिए। अगर ऐसा नहीं है तो आप पाठ के उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पायेंगे और आपका विषय-वस्तु अवैध माना जायेगा।

चित्र 1. वैध विषय-वस्तु का परिसीमन

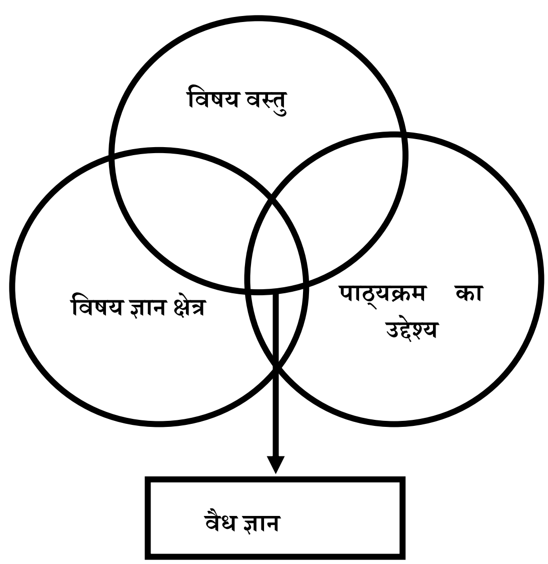

4.3.2 सार्थकता का सिद्धांत (Principle of Significance)

सार्थकता के सिद्धांत के अनुसार किसी विषय-वस्तु का चयन तभी सार्थक हो सकता है जब वह विषय-वस्तु बालकों के अभिरुची, प्रयोजन आदि को पूरा करता हो। कोई भी विषय-वस्तू तब सार्थक समझा जा सकता है जब वह अधिगम क्रियाओं, कौशलों एवं प्रक्रियाओं को पूर्ण रुपें प्रदर्शित होने का अवसर प्रदान करें एवं ज्ञान के तीनो प्रमुख क्षेत्रो के विकास में सहायक सिद्ध हो। किसी विषय-वस्तु की सार्थकता उस समय और भी महत्वपूर्ण हो जाती है जब बालकों का समूह अलग अलग सामाजिक व् सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से सम्बन्ध रखते है। सरल शब्दों में कहा जाये तो वह विषय-वस्तु सार्थक है जो पाठ या पाठ्यक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति को सुनिश्चित करता हो।

चित्र 2. सार्थक अधिगम

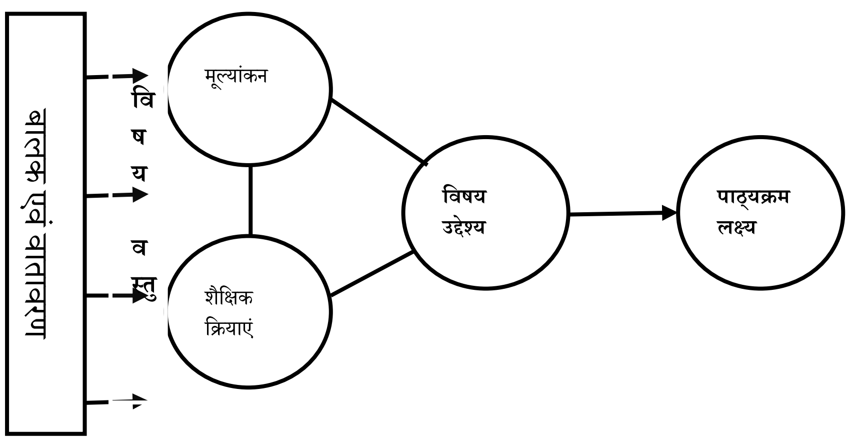

4.3.3 संतुलन का सिंद्धांत (Principle of Balance)

विषयवस्तु चयन के लिए संतुलन का सिद्धांत संभवत: सबसे महत्वपूर्ण शर्तों में से एक है. यह सिद्धांत विषयवस्तु चयन से लेकर विषयवस्तु की संरचना एवं विस्तारण, प्रत्येक स्तर पर कार्य करता है। इस सिद्धांत के अनुसार-

प्रथमत: विषयवस्तु चयन के साथ यह ध्यान देना एवं सुनिश्चित करना आवश्यक है कि वह विषय वस्तु ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र(संज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक) को प्रयाप्त रूप में प्रदर्शित करें, अर्थात विषयवस्तु में तीनों ज्ञान क्षेत्रों का प्रयाप्त प्रतिनिधित्व रहे एवं उनमें संतुलन बना रहे।

द्वितीयत: विषय वस्तु चयन के समय विषयवस्तु के जटिलता स्तर पर संतुलन बने रहना चाहिए । विषयवस्तु इतना सरल नहीं होना चाहिए की वह अच्छे एवं कमजोर बालकों में विभेद न कर सके और इतना जटिल भी नहीं होना चाहिए की वह पुन: अच्छे एवं कमजोर बालकों में विभेद न कर सके। इसलिए विषयवस्तु न बहुत सरल और न ही जटिल होना चाहिए । ऐसा करने से एक फायदा भी मिलता

है। कमजोर बच्चे आसान अंश हल कर लेंगे तो विषय में उनकी रोचकता बनी रहेगी । दूसरी तरफ तेज बालकों को भी यह रोचक लगेगा क्योकि जटिल हिस्सों को हल करने में उनकी दिलचस्पी बनी रहेग ।

तृतीयत: विषयवस्तु विस्तार के समय संतुलन का सिद्धांत यह कहता है कि किसी विषयवस्तु को इतना विस्तार न करो जिससे किसी दूसरे विषयवस्तु के प्रतिनधित्व पर प्रश्नचिन्ह बन जाये । इसका मतलब यह हुआ कि किसी प्रकरण विशेष को ज्यादा महत्व देने पर दूसरे प्रकरणों के लिए पाठ्यक्रम में स्थान बनाना बेहद कठिन हो जाता है, इसलिए प्रत्येक प्रकरण (विषयवस्तु) का विस्तार संतुलित मात्रा में होना चाहिए।

4.3.4 स्वयं-सम्पूर्णता का सिद्धांत (Principle of Self-Sufficiency)

किसी विषय वस्तु को पढ़ाने के लिए अगर कम से कम संसाधन एवं सरल शैक्षिक प्रयास प्रयाप्त हों और इसके फलस्वरूप बालकों का शैक्षिक निष्पादन आशानुरूप हो, तो इस प्रकार के विषय वस्तु को हम स्वयं-सम्पूर्ण विषय वस्तु कह सकते हैं. इस प्रकार के विषयवस्तु चयन के समय एवं विस्तार क्रिया के दौरान उन सभी जरुरी घटकों का इसमें समावेश किया जाता है जो अनुकूलतम अधिगम के लिए प्रयाप्त हो। दूसरा यह की स्वयं सम्पूर्ण विषयवस्तु प्रत्येक प्रकरण के लिए प्रयाप्त समय प्रबंधन करते हए उनको संतुलित गहराई तक विश्लेषित करता है।

4.3.5 रोचकता का सिद्धांत (Principle of Interest)

विषयवस्तु के चयन के दौरान रोचकता के सिद्धांत का प्रयोग दो स्तरों पर किया जाता है । पहले तो विषयवस्तु चयन के समय बालकों के समूह का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि वह विषयवस्तु किस स्तर के (उम्र एवं मानसिक) बालकों के लिए प्रयोग में लाया जायेगा । उसके अनुसार उस विशेष स्तर के बालकों की सामान्य अधिगम रीति, उनकी अभिरुचि, मानसिक स्तर का विश्लेषण कर विषयवस्तु का चयन किया जाना चाहिए । दूसरे स्तर पर इस सिद्धांत का प्रयोग विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण के लिए होता है । विषयवस्तु का चयन ऐसा होना चाहिए जो छात्र केन्द्रिक अधिगम को प्रोत्साहित करें । इसके फलस्वरूप बालक अपने आप को विषयवस्तु को जोड़ पायेंगे एवं उनकी रोचकता विषयवस्तु में बनी रहेगी।

4.3.6 उपयोगिता का सिद्धांत (Principle of Utility)

प्रत्येक छात्र को अपने छात्र जीवन में कुछ खास प्रश्नों का सामना करना पड़ता है, जैसे - क्या यह विषय व्यवसाय/नौकरी में सहायक सिद्ध होगा ? क्या यह विषय मेरे लिए जरुरी है ? क्या यह विषय मेरे समस्याओं का समाधान करेगा ? क्या इसमें मै उत्तीर्ण हो जाऊंगा ? क्या यह विषय मेरे आतंरिक क्षमताओं के विकास में सहायक होगा ? यह कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिसे आपने भी निश्चित ही अपने छात्र जीवन में भी सोंचा होगा, सामना किया होगा । यह सभी प्रश्न सिर्फ एक ही तरफ निर्देशित करतें हैं और वह है उपयोगिता । साफ शब्दों में कहें तो आप उसी विषय को ज्यादा महत्व देते हैं जो आपके लिए उपयोगी सिद्ध हो । इसलिए उपयोगिता के सिद्धांत के अनुसार, विषय वस्तु चयन के समय ऐसे घटकों का समावेश

किया जाना चाहिए , जो बालकों के भविष्य के लिए उपयोगी सिद्ध हो, न की सिर्फ विद्यालयी शिक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करने के उपयोग में आये।

4.3.7 साध्यता का सिद्धांत (Principle of feasibility)

विषय वस्तु चयन के सन्दर्भ में साध्यता का अर्थ है अधिगम प्रक्रिया का सम्पूर्ण कार्यान्वयन। इसको एक उदाहरण से समझने की कोशिश करतें हैं। मान लीजिए आप संगणक विषय के अध्यापक हैं, कक्षा में आपने किसी प्रकरण को तीन दिन में समाप्त कर दिया और बालकों को गृह कार्य दे दिया। परन्तु जो गृह कार्य आपने दिया उसे पूरा करने के लिए बालकों के पास संगणक है ही नहीं, तब ? ऐसा करने से अधिगम प्रक्रिया अधुरा रह गया, इसका सम्पूर्ण कार्यान्वयन नहीं हो पाया। इस स्थिति में कहा जा सकता है कि विषयवस्तु में साध्यता का आभाव है। मान लेते हैं बालकों के पास संगणक है, परन्तु उस गृहकार्य को पूरा करने में उनको दो सप्ताह का समय लगेगा। अर्थात जिस प्रकरण को आपने तीन दिन में पूरा किया, वास्तविक रूप से उसे पूरा होने में 17 दिन लगेगा। इससे दूसरे प्रकरणों के अधिगम पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। इस प्रकार के विषयवस्तु का चयन नहीं किया जाना चाहिए जो एक नियत समय के अन्दर सम्पूर्ण अधिगम प्रक्रिया को कार्यान्वित करने में असमर्थ हों।

अभ्यास प्रश्न

1. विषय वस्तु चयन के सिद्धांत में किन किन बातों ध्यान रखा जाता है ?
2. ज्ञान के विभिन्न पक्षों का नाम लिखिए।

4.4 विषयवस्तु की संरचना एवं घटकों का एकीकरण

किसी विषय वस्तु के चयन के उपरान्त जो समस्या सामने आती है वह है उस विषय वस्तु के लिए चयनित तथ्य, सम्प्रत्यय, उदाहरण आदि का अनुक्रम क्या होगा ? इन सब घटकों के प्रस्तुतीकरण का क्रम क्या होगा और यह कैसे तय किया जायेगा ? कोई भी विषयवस्तु सिर्फ कुछ तथ्यों का समुच्चय नहीं होता है जिसे किसी भी रूप में बालकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके। प्रत्येक विषय वस्तु में ऐसे बहुत सारे घटकों का समावेश करना पड़ता है जिससे वह विषय वस्तु चयन के सिद्धन्तों के अनुरूप हो सके एवं साथ ही साथ बाल केन्द्रिक शिक्षा या अधिगम को बढ़ावा दे सके। इसके लिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है की विषय वस्तु के विस्तारण के समय एवं प्रस्तुतीकरण के समय प्रत्येक घटक को उसके सही अनुक्रम में स्थान दिया जाये। इसका दूसरा फायदा यह होगा की विषयवस्तु को अभ्यास के उपरान्त बालकों का समझ बढ़ेगा एवं अधिगम प्रक्रिया को व्यापक विस्तार मिलेगा।

प्रस्तुत अनुभाग में हम लोग यह समझने की कोशिश करेंगे की किसी भी विषयवस्तु को विस्तार देने के लिए उसके संरचना में कौन-कौन से घटक होने चाहिए एवं उन घटकों की विशिष्टता क्या है।

साधारणत: प्रत्येक विषयवस्तु तीन घटकों से बना होता है या बनना चाहिए, यथा- विषयवस्तु का संज्ञात्मक घटक, विषयवस्तु का भावात्मक घटक एवं विषयवस्तु का क्रियात्मक घटक। इन तीनों प्रकार के घटकों पर हम क्रमानुसार चर्चा करेंगे।

4.4.1 विषयवस्तु का संज्ञानात्मक घटक

विषयवस्तु के संज्ञानात्मक घटक से अभिप्राय उन तथ्यों, संप्रत्ययों, नियमों आदि से है जो मस्तिष्क के संज्ञान सम्बन्धी ज्ञान क्षेत्र को प्रभावित करत है। व्यावहारिक अर्थों में संज्ञानात्मक घटक किसी विषयवस्तु के वह तत्व हैं जिन्हे हम अपने मस्तिष्क में अल्पकाल या दीर्घकाल के लिए संरक्षित करके रख देते हैं एवं जरूरत पड़ने पर किसी अन्य प्रकार के ज्ञान के सृजन के लिए इसका उपयोग करते हैं या स्मृतिशक्ति को बढ़ाने के लिए इसका स्मरण करते हैं। जैसे-'संज्ञा की परिभाषा'। इसको सामान्यत: हम लोग याद कर लेते हैं। बाद में जरूरत पड़ने पर इस परिभाषा को स्मरण किया जाता है। इसके अलावा इस परिभाषा की कोई अन्य विशिष्टता नही है। यह किसी अन्य प्रकार के ज्ञान सृजित करने सहायक नही है।

संज्ञानात्मक विषयवस्तु अपने प्रकृति या विशिष्टता के अनुसार मूलत: छह प्रकार के होते है। इन्ही प्रकारों में कुछेक प्रकार के विषयवस्तु अनिवार्य रूप से विषय सामाग्री में पाये जाते हैं। संज्ञानात्मक विषयवस्तु के प्रकार निम्नवत है -

i. **तथ्य (Facts):-** यह एक प्रकार की कल्पना या संकल्पना है जिसे जरूरत पड़ने पर जाँचा या सत्यापित किया जा सकता है। यह मूलत: किसी संज्ञानात्मक विषयवस्तु का आधार है। उदाहरण स्वरूप किसी घटना घटित की तिथि या किसी देश की जनसंख्या (जैसे भारत स्वतंत्र हुआ 15 अगस्त, 1947)।

ii. **संप्रत्यय (Concept):-** किसी घटना, समूह,स्थान या संकल्पनाओं को उनके सामान्य या विशिष्ट विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करके किसी संप्रत्यय का गठन किया जाता है। संप्रत्यय को समझने के लिए कुछ उदाहरण सारणी-1 में दर्शाया गया है।

सारणी-1

संप्रत्यय का नाम	उनकी सामान्य विशिष्ट विशेषताएँ
फर्नीचर (उपकरणों का समूह)	चेयर (कुर्सी), टेबुल, खाट, मेज आदि
पहाड़/पर्वत	पथरीला, जमीन से बहुत ऊँचा, बर्फ़ीला आदि
अलमारी	लकड़ी, लोहे, प्लास्टिक निर्मित, सामान रखने के लिए, लम्बी, गहरी आकार की, दरवाजा आदि

iii. **सिद्धान्त या प्रमुख नियम(Principle):-** तथ्यों या संप्रत्ययों या इन दोनों के मध्य के सम्बन्ध जिसे शोध प्रक्रिया के माध्यम से सत्यापित किया जा सकता है, को सिद्धान्त या नियम कहा जा

सकता है। जैसे- परिवार में बच्चों को संख्या बच्चों के विकास को प्रभावित करता है और यह सम्बन्ध विभिन्न शोध कार्यो से सत्यापित किया जा चुका है। यहाँ परिवार में बच्चों की संख्या तथ्य है एवं उनका विकास एक सम्प्रत्यय है।

iv. **प्राककल्पना (Hypothesis):-** यह किसी तथ्य या सम्बन्ध को समझाने के लिए मानली जाने वाली विचार होती है जो प्राय: अनुमान पर आधारित होती है और इसकी कोई प्रमाणिकता नहीं होती। इसको सिद्ध या सही साबित होने के लिए प्रमाण की जरूरत होती है। जैसे- यह एक परिकल्पना/प्राक्कलपना हो सकता है कि 'सरकारी विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चे हमेशा गरीब परिवार से सम्बन्ध रखते है'। यह वाक्य एक अनुमानभर है। इसका कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। जब तक यह वाक्य सत्य या प्रमाणित नही हो जाता, यह परिकल्पना ही कहलाएगी।

v. **सिद्धान्त (Theories)** :- यह प्रकार पूर्व में वर्णित सिद्धान्त के अर्थ से भिन्न है और ज्यादा व्यापक है। जैसा की इन दोनों के English नाम से स्पष्ट है - पहला Principle है जो किसी विशेष नियम को बनाता है, जब की दूसरा Theory कुछ ऐसे सिद्धन्तो (Principle), संप्रत्ययों तथा तथ्यों के समूह को इंगित करता है जो परोक्षरूप से किसी घटना, मानव व्यवहार, या अधिगम का आधार है। जैसे- 'डारविन का सिद्धान्त'। यह बहुत सारे प्रमाणित तथ्यों पर आधारित कुछ Principle का समूह है। जो परोक्षरूप से मानव निर्मित विवर्तन के रूप का आधार बनता है।

vi. **नियम (Laws):-** यह ऐसे तथ्यों का कथन है जो सुनिश्चित परिस्थितियों या दशाओं में सदा घटित होते है।

अभ्यास प्रश्न

3. Principle एवं theory में अंतर स्पष्ट कीजिए ।
4. तथ्य एवं नियम में क्या अंतर है ?

4.4.2 विषयवस्तु का भावात्मक घटक

विषय वस्तु का भावात्मक घटक संभवत किसी भी विषय वस्तु के तीनों ज्ञान पक्षों में सबसे महत्वपूर्ण है। शिक्षण के वृक्ष उपागम में भावात्मक पक्ष को सबसे ऊपर स्थान दिया गया है। इसका कारण संभवत यह है कि संज्ञानात्मक पक्ष के तथ्य और संप्रत्यय एवं क्रियात्मक पक्ष के कौशलों के ज्ञान से किसी भी बालक का जीवन संपूर्ण नहीं हो सकता। भावात्मक पक्ष के ज्ञान से ही संज्ञानात्मक पक्ष और क्रियात्मक पक्ष के शिक्षण को अर्थ पूर्ण बनाया जा सकता है। मूल रूप से भावात्मक पक्ष में किसी भी विषय से संबंधित मूल्यों और अभिवृत्ति को स्थान दिया जाता है। प्राय: यह एक विमर्श का विषय बन जाता है की क्या हम मूल्यों की शिक्षा दे सकते हैं ? या किसी विषय वस्तु में मूल्यों को वास्तविक रुप से स्थान दे सकते हैं ? ऐसा किया जा सकता है क्योंकि मूल्य मूल रूप से एक मनोवैज्ञानिक संप्रत्यय है जो अपने आप में ज्ञान

के तीनों खंडो को समाहित करता है। एक उदाहरण से हम इस बात को बड़ी आसानी से समझ सकते हैं, जैसे - ‘ सत्य निष्ठा’ अपने आप में एक मूल्य है। इस मूल्य में संज्ञानात्मक पक्ष भी है, क्रियात्मक पक्ष भी है एवं भावात्मक पक्ष भी है।

- प्रश्न 1) सत्यनिष्ठा क्या है ?
- प्रश्न 2) हम सत्यनिष्ठ क्यों बने ? -
- यह दोनों प्रश्न सत्य निष्ठा के संज्ञानात्मक पक्ष को प्रतिबिंबित करते हैं।
- कथन 1) सत्य निष्ठा के प्रति आप की किसी न किसी प्रकार की भावना होनी चाहिए।
- कथन 2) आपको कपटी होने के बजाए सत्य निष्ठा की और अपनी जीवन को संचालित करना चाहिए। यह दोनों का कथन सत्य निष्ठा के भावनात्मक पक्ष को प्रतिबिंबित करते हैं।
- कथन 3) आप एक सत्यनिष्ठ जीवन व्यतीत कर रहे हैं।
- कथन 3 सत्य निष्ठा से संबंधित क्रियात्मक/ व्यवहारिक पक्ष को प्रतिबिंबित करता है।

4.4.3 विषयवस्तु का क्रियात्मक घटक

विषयवस्तु के संदर्भ में क्रियात्मक घटक किसी प्रकार के शारीरिक क्रिया को संकेत नहीं करता है, अपितु यह मानसिक क्रियाओं को दर्शाता है। चूंकि विषयवस्तु का पाठ किया जाता है इसलिए इसमें संयोजित होने वाले क्रियात्मक घटक विभिन्न मानसिक क्रियाओं की ओर इंगित करते है। यह सभी मानसिक क्रियाएँ संज्ञानात्मक विषयवस्तु की आधारशिला पर उन्ही विषय वस्तुओं को विभिन्न प्रकार से विश्लेषण, संश्लेषण, सुनियोजन एवं संगठित कर नये ज्ञान की रचना करने में अपना योगदान देते है। विषयवस्तु की क्रियात्मक घटकों के अंतर्गत कुछ विशेष प्रकार की मानसिक क्रियाएँ आती है जिन पर संक्षिप्त चर्चा हम नीचे करेंगे।

अपसारी चिन्तन क्रिया (Divergent Thinking Skill)

यह एक ऐसी मानसिक क्रिया है जो किसी समस्या या तथ्यों का विश्लेषण कर अनेक प्रकार के संभावित समाधान उपस्थित करता है। इस प्रकार के मानसिक क्रिया की विशेषता यही है कि इसके माध्यम से उत्पन्न हुये सभी समाधान अपने आप में अद्वितीय होते हैं। और यह पूर्व ज्ञान एवं उपलब्ध संज्ञानात्मक विषयवस्तु को आधार बनाकर किया जाता है। 1956 में पहली बार जे० पी० गीलफर्ड (J.P. Gilford) ने ‘अपसारी चिन्तन’ शब्द का प्रयोग किया था।

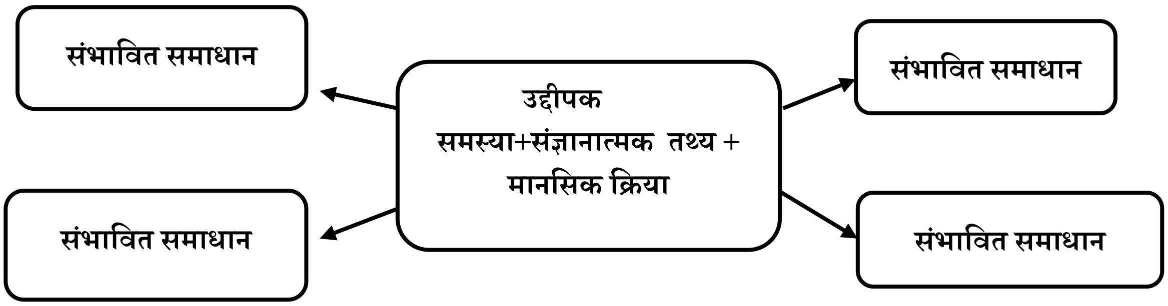

चित्र 3: अपसारी चिंतन क्रिया

अभिसारी चिन्तन क्रिया (Convergent Thinking skill)

इस प्रकार की मानसिक क्रिया अपसारी चिन्तन क्रिया के विपरीत बहुत सारे संभावित समाधान में से कोई एक सटीक समाधान चुनने की कौशल को दर्शाता है। इस क्रिया के दौरान विभिन्न समाधानों का, संबन्धित तथ्यों के आधार पर तार्किक तथा चरणबद्ध तरीके से विश्लेषण, संश्लेषण एवं नियोजन कर एक मात्र सटीक समाधान का चयन किया जाता है।

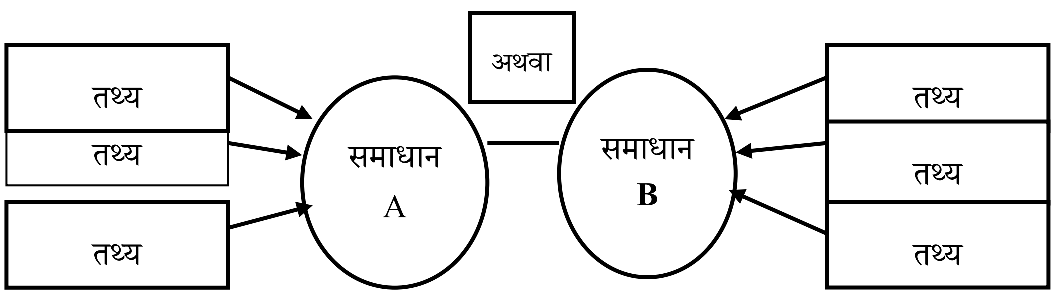

चित्र 4: अभिसारी चिंतन क्रिया

समस्या समाधान क्रिया (Problem Solving Skill)

यह एक विशेष प्रकार की मानसिक क्रिया है जिसमें सम्पूर्ण ध्यान किसी समस्या कथन पर दिया जाता है। इसमें समस्या के विभिन्न आयामों को चिन्हित किया जाता है ताकि समस्या को पूर्णरूप से परिभाषित किया जा सके। एक बार समस्या परिभाषित हो जाने के बाद उसके संभावित समाधानों को खोजा जाता है। इस क्रम के द्वारा प्रत्येक समस्या के लिए कई समाधानों का चरणबद्ध तरीके से विश्लेषण कर मूल्यांकन

किया जाता है। मूल्यांकन के उपरान्त सबसे उपयुक्त समाधान को ही समस्या के समाधान हेतु प्रयोग किया जाता है।

समालोचनात्मक या समीक्षात्मक चिन्तन क्रिया(Critical Thinking Skill)

यह एक ऐसी मानसिक क्रिया है जो संज्ञानात्मक स्तर पर विषयवस्तुओं का मूल्यांकन उनके सत्यता एवं योग्यता के आधार पर करता है (Beyer,1985)। इस मानसिक क्रिया के माध्यम से किसी तथ्य, सिद्धान्त, नियम, प्राक्कथन या संप्रत्यय की सत्यता एवं योग्यता को जाँचने के लिए पाँच प्रकार के कार्यों का सहारा लिया जाता है। चित्र में एक आदर्श समीक्षात्मक चिन्तन क्रिया को दर्शाया गया है।

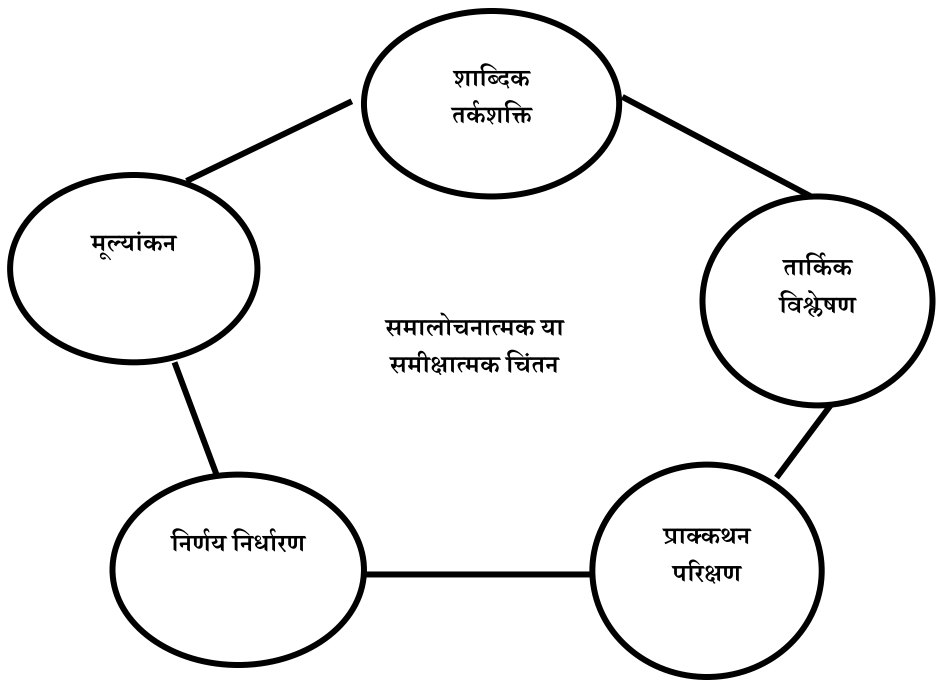

चित्र 5: समीक्षात्मक चिंतन क्रिया

सृजनात्मक चिन्तन क्रिया (Creative Thinking Skill)

इस प्रकार की चिन्तन क्रिया से मौलिक एवं नये ज्ञान का सृजन होता है। यह चिन्तन क्रिया भी संज्ञानात्मक विषयवस्तुओं पर ही प्रयोग किया जाता है और परिणाम स्वरूप नया ज्ञान प्राप्त होता है। एक सफल एवं उद्देश्यपूर्ण सृजनात्मक चिन्तन के लिए प्रत्येक विषयवस्तु में कुछ विशेषताएँ समाहित होनी चाहिए जो इस प्रकार है-

a. विषयवस्तु बालकों में जागरूकता का संचार करें।
b. विषयवस्तु बालकों में कौतुहल उत्पन्न करने वाला होना चाहिए।
c. विषय वस्तु बालकों की कल्पनाशीलता का विकास करें।

d. विषयवस्तु में धाराप्रवाह बनी रहनी चाहिए।
e. विषयवस्तु में लचीलापन होना चाहिए।
f. प्रत्येक विषयवस्तु की अपनी मौलिकता होनी चाहिए।
g. प्रत्येक विषयवस्तु का पर्याप्त विस्तार होना चाहिए।
h. विषयवस्तु में निरंतरता होनी चाहिए।

ऊपर वर्णित पाँचो मानसिक क्रियाएँ किसी भी पाठ्यविषय में सम्मिलित होने पर बालकों में उस विषय के प्रति समझ बढ़ती है। बालक सिर्फ किताबी ज्ञान नही प्राप्त करते हैं, अपितु उन किताबी ज्ञानों पर इस मानसिक क्रियाओं का प्रयोग कर अधिगम का स्तर स्मरण से बोध एवं बोध से मूल्यांकन के स्तर तक ले जा सकते हैं। यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि विषयवस्तु का क्रियात्मक घटक अपने आप में कोई पाठ्य ज्ञान नही है। यह सभी क्रियात्मक घटक उन संभावनाओं को दर्शाता है जो संज्ञानात्मक विषयवस्तु के चयन एवं उसके विस्तारण के समय विषय-विशेषज्ञ द्वारा तैयार किया जाता है। उदाहरण के रूप में-पाठ के मध्य 'स्वयं करके', 'व्यावहारिक परीक्षण', 'सामूहिक कार्य योजना' या 'प्रोजेक्ट कार्य' ऐसे अवसर होते है जहाँ बालक के पास इन क्रियात्मक घटकों को प्रयोग करने का विकल्प विषयवस्तु के विस्तारण के समय दिया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

5. अपसारी एवं अभिसारी चिंतन क्रिया में क्या अंतर है ?
6. ज्ञान के भावात्मक पक्ष में मुख्यतः कौन से संप्रत्ययों का समावेश होता है ?

4.5 विषयवस्तु अनुक्रम का सिद्धान्त

पिछले अनुभाग में हम लोगों ने विषय के विषयवस्तु के चयन के लिए किन-किन बिन्दुओं का ध्यान रखा जाए इस बात पर चर्चा किया है। उसके बाद हमने देखा की किसी चयनित विषयवस्तु में किस प्रकार के ज्ञान का समावेश होना चाहिए। इसके लिए हमने पाया कि किसी अधिगम प्रक्रिया को सम्पूर्ण सफल होने के लिए यह नितांत जरूरी है कि विषयवस्तु में हर उस घटक का समावेश होना चाहिए जो मस्तिष्क के तीनों ज्ञान क्षेत्रों को समाहित कर सके। परन्तु सिर्फ विषयवस्तु के चयन और उसके अंतर्गत आने वाले ज्ञान के चयन से कम नहीं चलेगा।

किसी अधिगम प्रक्रिया में विषयवस्तु एक उद्दिपक के समान कार्य करता है और इसके फलस्वरूप कोई अनुक्रिया होगा की नहीं, यह निर्भर करता है उस उद्दिपक को कैसे प्रस्तुत किया जा रहा है। अर्थात विषयवस्तु के संदर्भ में अगर देखा जाए तो हम कह सकते हैं कि ज्ञान के प्रत्येक खण्ड को विषयवस्तु में

कहाँ और कैसे स्थान दिया गया है यह महत्वपूर्ण है। किस ज्ञान खण्ड को कब बालकों के सामने प्रस्तुत किया जाए और अन्य ज्ञान खण्डों के साथ कैसे उसका सम्बंध जोड़ा गया है यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस प्रक्रिया को अनुक्रमण कहा जाता है।

किसी विषय वस्तु के अनुक्रमण के दौरान तीन मुख्य प्रश्नों पर ध्यान अत्यंत जरूरी है-

(a) क्या अनुक्रमण बालकों के जरूरतों को पूरा कर पाने में सक्षम है ?

(b) क्या अनुक्रमण विषयवस्तु की निरंतरता को बनाये रखने में सक्षम है ?

(c) क्या अनुक्रमण के माध्यम से पाठ्यक्रम/विषय के लिए स्थिर किए गये उद्देश्यों की क्रमवार प्राप्ति सम्भव है ?

अनुक्रमण के सिद्धांतो को विस्तार पूर्वक जानने से पहले हम लोगों को पाठ्यक्रम और अनुक्रमण के संबंधों को समझ लेना चाहिए। किसी पाठ्यक्रम की जब संरचना की जाती हो तो वह एक रैखिक प्रक्रिया के तहत किया जाता है, जिसके अलग अलग स्तर पर अलग अलग उद्देश्यपूर्ण कार्य किया जाता है, जैसे- सबसे पहले यह विश्लेषण किया जाता है कि पाठ्यक्रम की आवश्यकता क्यों है। इसके बाद उन आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। एक बार उद्देश्य निर्धारित हो जाने के बाद उद्देश्य प्राप्ति के लिए संबन्धित विषय व विषयवस्तु का चयन व विस्तारण किया जाता है। इसके बाद पाठ्यक्रम का मूल्यांकन किया जाता है, जो समान्यत: एक लम्बी व दीर्घामियादी प्रक्रिया है। एक बार मूल्यांकन होने के बाद फिर से यही प्रक्रिया अपनायी जाती है नये पाठ्यक्रम के विकास के लिए।

इस प्रक्रिया को लिखना, कहना जितना सरल है, व्यावहारिक धरातल पर यह प्रक्रिया उतनी ही जटिल है। असल में अपने सुबिधा के लिए हम लोग पूरे प्रक्रिया को कुछ चरणों में बांट देते है, परन्तु वास्तविक रूप में इन चरणों को सम्पूर्ण रूप से अलग करना सम्भव नही है, यह सभी एक दूसरे से ऐसे जुड़े होते हैं की व्यावहारिक रूप से इन्हे अलग करना सम्भव नही है और उचित भी नही है। ऐसे स्थिति मे जब पाठ्यक्रम की परिकल्पना की जाती है तो इसको प्रत्येक चरण में समीक्षा किया जाता और जरूरी परिवर्तन किया जाता है। इसको आप ऐसे समझिए -

प्रथम चरण-: पुराने पाठ्यक्रम, नई सामाजिक रीतिया, चुनौतिया, बदलाव एवं उपलब्द संसाधन का विश्लेषण यह पता करने के लिए की नई जरूरते क्या है, जिसे पाठ्यक्रम मे स्थान दिया जाना आवश्यक है।

द्वितीय चरण-: प्रथम चरण के आधार पर उद्देश्यों का निर्माण [भाग-एक] - उद्देश्यों को विशिष्टता एवं स्पष्टता प्रदान करने के लिए पुनः प्रथम चरण की समीक्षा।

तृतीय चरण : द्वितीय चरण [भाग-एक] के आधार पर विषय वस्तु चयन एवं विस्तारण, शिक्षण विधि, कौशल एवं मूल्यांकन विधि का चयन - उद्देश्य एवं विषय वस्तु में संतुलन न हो पाने की स्थिति में द्वितीय चरण की समीक्षा।

चतुर्थ चरण: द्वितीय चरण एवं तृतीय चरण का मूल्यांकन - वैधता, रोचकता, उपयोगिता, सार्थकता आदि में कोई कमी होने पर पुन: चरण एक से चरण चार तक दोहराना।

इससे यह पता चलता है कि अनुक्रमण के दौरान भी विषयवस्तु के उद्देश्यों में जरूरत के अनुसार परिवर्तन, परिमार्जन या परिवर्धन किया जा सकता है। अर्थात पाठ्यक्रम विस्तार की प्रक्रिया में कोई चरण अंतिम नहीं होता और जरूरत के अनुसार किसी भी चरण में समीक्षा कर बदलाव किया जा सकता है।

किसी भी विषयवस्तु के अनुक्रमण के पीछे कुछ मान्यताएं, परिसंकल्पना या पूर्णानुमान काम करती है। हम लोगों को इन मान्यताओं / पूर्णानुमानों के बारे में समुचित जानकारी होनी चाहिए, इससे अनुक्रमण की प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप से प्रयोग करना आसान हो जाता है।

4.5.1 अनुक्रमण की आधारभूत परिसंकल्पनाएँ

विषय वस्तु के अनुक्रमण को अधिक उपयोगी बनाने के लिए मूलरूप से तीन परिकल्पनाओं की अवधारणा की गई है। वह इस प्रकार है -

i. **प्रथम परिकल्पना:** विषयवस्तु अनुक्रमण के दौरान प्राथमिक (प्रारम्भिक) स्तर पर स्थापित किए गए सामान्य उद्देश्य उसके बाद के स्तर के उद्देश्यों एवं विषय सामग्री को प्रभावित करेंगे। जैसे किसी पाठ्यक्रम के लिए बनाए गए सामान्य उद्देश्य बाद में उस पाठ्यक्रम के अंतर्गत आने वाले विषयों के सामान्य उद्देश्यों को प्रभावित करता है। अगले चरण पर विषय का सामान्य उद्देश्य उस विषय के अंतर्गत आने वाले प्रकरणों, इकाईयों के विशिष्ट उद्देश्यों एवं विषयवस्तु को प्रभावित करेंगे।

ii. **द्वितीय परिकल्पना**: अधिगम प्रक्रिया के क्रम में तय किए गए विषयवस्तु एवं कौशल बालक सर्वोकृष्ट अधिगम वातावरण में अर्जित करते हैं। परन्तु इस पूरे क्रम में बालक कुछ ऐसे भी कौशल प्राप्त करते हैं या विकसित कर लेते है जिसकी पहले से कोई कल्पना नहीं की गई थी, इसलिए यह जरूरी है की सामान्य उद्देश्यों या लक्ष्यों का जब निर्माण किया जाता है, उस समय विषयवस्तु के तीनों ज्ञान क्षेत्रों को विषयसामाग्री में अंगीभूत किया जाये ताकि बालकों का सर्वांगीण विकास हो सके। इसलिए विषयवस्तु के अनुक्रमण के समय प्रत्येक ज्ञान खण्ड में संज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक घटकों का समावेश होना चाहिए जिससे बालकों का व्यक्तिगत, सामाजिक आयामों का विकास हो सके।

iii. **तृतीय परिकल्पना**: अधिगम प्रक्रिया के निर्धारण के समय अधिगम सीमा का भी ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है। अधिगम के समय कुछ विषयवस्तु ऐसे होते हैं जो विषय का आधार होते हैं और इनका अधिगम होना आवश्यक है। इसके विपरीत कुछ ऐसे विषयवस्तु भी होते हैं जिनका प्रयोजन विषय के विस्तारित समझ के लिए आवश्यक है। इन दोनों प्रकार के विषयवस्तु में पर्याप्त विभेद होना चाहिए ताकि आधारभूत विषय सामग्री को सभी बालकों के अधिगम के

लिए उपलब्ध कराया जा सके एवं अन्य प्रकार के विषय सामग्री का अधिगम बालकों के मानसिक स्तर के अनुसार हो सकें।

4.5.2 अनुक्रमण विधियाँ (Sequencing Technique)

किसी भी प्रकार के अनुक्रमण विधि का एकमात्र उद्देश्य होता है कि अनुक्रमण प्रक्रिया के माध्यम से वह शैक्षणिक उद्देश्यों एवं बालकों के अधिगम क्रियाओं के मध्य एक सम्बन्ध स्थापित कर सके। सामान्यत: तीन प्रकार के अनुक्रमण विधि का प्रचलन है। अत: इस अनुभाग में हम लोग क्रमानुसार इन विधियों पर चर्चा करेंगे-

विषयवस्तु विश्लेषण विधि (Content Analysis Technique)-

किसी भी विषय वस्तु के अनुक्रमण प्रक्रिया दौरान यह विधि विषयवस्तु की आंतरिक संरचना एवं संज्ञानात्मक प्रक्रिया, दोनों को समान महत्व प्रदान करती है जिससे एक अर्थपूर्ण अधिगम प्रक्रिया घटित हो सके।

किसी विषय वस्तु की आंतरिक संरचना विषय वस्तु को स्मरण करने की एंव उसमे समझ बनाने में सहायक होती है जिससे अधिगम में निरंतरता बनी रहे। परन्तु विषय वस्तु की तार्किक संरचना के साथ ऐसा नहीं होता। इसलिए तार्किक संरचना के माध्यम से अर्थपूर्ण अधिगम सुनिश्चित करने के लिए अनुक्रम प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक हो जाता है। विषय वस्तु विश्लेषण विधि से अनुक्रम के दौरान पूरे प्रक्रिया को तीन चरणों से होकर जाना पड़ता है।

a. बालकों के अधिगम के लिए विषय वस्तु के अति महत्वपूर्ण धुरी की पहचान करना एंव उसको चिन्हांकित करना।
b. विषय वस्तु से सम्बन्धित सभी ज्ञान खंडों की पहचान व चिन्हांकण एवं उनका संबंधात्मक पदानुक्रम के सुव्यवस्थापन।
c. सभी ज्ञानखण्डों का ज्ञान व्यवस्थापन सिद्धान्तों के आधार पर अनुक्रमण।

उपर्युक्त तीनों चरणों में प्रथम चरण को हम लोग प्रायः पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को निर्माण करते समय एवं विषय वस्तु के चयन के समय ही पूरा कर लेते हैं। द्वितीय एवं तृतीय चरणों को प्रायः अलग इकाई के रूप में समझ पाना बहुत ही कठिन होता है, क्योंकि दोनों चरण आपस में अतिव्याप्त रहते हैं। इन दोनो चरणों को अलग से दिखाने से अभिप्राय सिर्फ इतना है की यह समझा जा सके कि इस प्रक्रिया में अनुक्रमण कैसे हो रहा है।

J.D. Novak (1988-1990) ने बिन्दुवार इन दोनो चरण के कार्यों को समझाने की कोशिश की है, जो इस प्रकार है -

1. कोई भी बालक एक अर्थपूर्ण अधिगम प्रक्रिया में उसी शर्त पर सहभागिता करता है जब नया ज्ञान खण्ड (संप्रत्यय भी कहा जा सकता है) उसके बौद्धिक संरचना में पहले से मौजूद सम्प्रत्ययों के साथ सम्बन्धित हो एंव वह उनको समायोजित कर सके।
2. प्रथम बिन्दु को सही प्रमाणित करने के लिए विषय वस्तु का अनुक्रमण इस प्रकार होना चाहिए जिससे सामान्य एंव समायोजित योग्य संप्रत्यय सबसे पहले बालकों के सामने आये। यह बालकों के बौद्धिक संरचना में होने वाले समायोजन क्षमता को बढ़ता है जो आगे आने वाले संप्रत्ययों के अधिगम में सहायक सिद्ध होता हैं।
3. बालकों के बौद्धिक संरचना में पाये जाने वाले संप्रत्ययों एवं नए अधिगमित होने वाले संप्रत्ययों में सामंजस्य बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि विषय वस्तु का अनुक्रमण समान्य से विशिष्ट की ओर हो। इससे दो फायदे होते हैं। प्रथमतः नये संप्रत्ययों को पहले से मौजूद संप्रत्ययों के साथ सम्बंध स्थापित करने में आसानी होती है एवं द्वितीयः बाद में संप्रत्ययों के क्रमिक विभेदन में सहायता मिलती है।
4. द्वितीय बिन्दु को अगर सही तरीके से प्रयोग किया जाए तो इसके बाद सिर्फ बौद्धिक संरचना में स्थापित संप्रत्ययों के साथ नये संप्रत्ययों का सम्बन्ध दर्शाने से ही बालक अर्थपूर्ण अधिगम प्रक्रिया की ओर चल पड़ेगा।
5. प्रत्येक समान्य, समायोजनयोग्य एवं महत्वपूर्ण संप्रत्ययों को प्रस्तुत करते समय पर्याप्त संबन्धित उदाहरणों का प्रायोग आवश्यक है, यही उदाहरण मूल रूप से नये संप्रत्ययों को पुराने संप्रत्ययों के साथ जोड़ता है।

चित्र 6 से हमे विषय वस्तु विश्लेषण विधि में ज्ञान खण्डों में आपसी सम्बन्धों को समझने में सहायता मिलेगी।

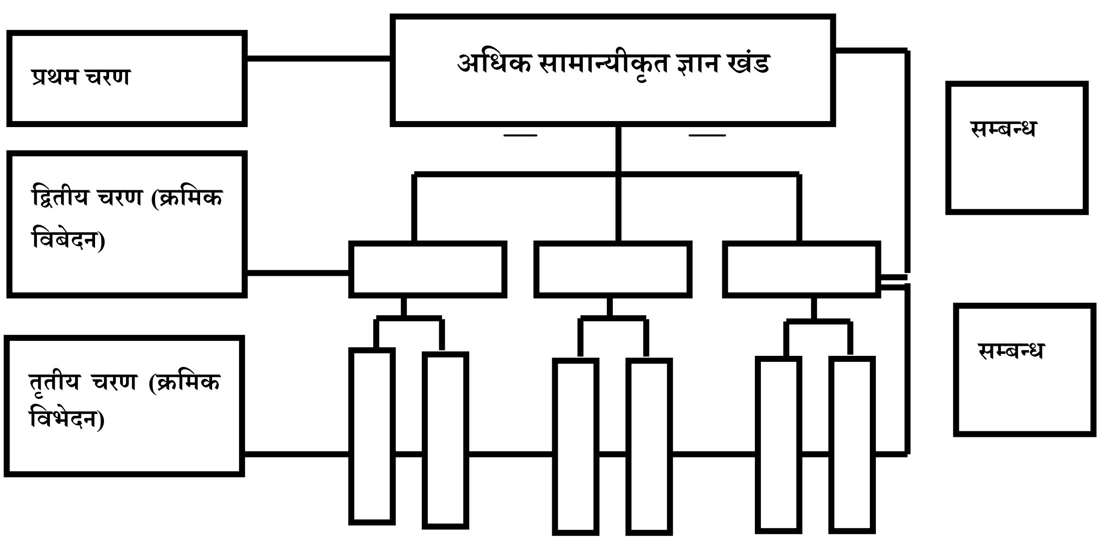

चित्र 6: संप्रत्यय पदानुक्रम निर्माण

कार्य-विश्लेषण विधि (Task Analysis Technique)

इस विधि में विषयवस्तु विश्लेषण के अनुरूप विषयवस्तु मुख्य नहीं होता है, अपितु इसके अनुसार वह सभी कार्य आवश्यक है जो संभावित निष्कर्ष (निष्कर्ष) को प्रभावित करते हो ।

इस विधि के अनुसार, कोई भी विषयवस्तु एवं ज्ञानखण्ड सरल एवं जटिल मानसिक कौशलों का समुच्चय है, जिसके सहारे एक अर्थपूर्ण अधिगम सम्भव है। इन मानसिक कौशलों मे जो सरल कौशल है वे आधारभूत कौशल होते है एवं जटिल कौशल इन्ही सरल कौशलों से बनते हैं। इसलिये यह विधि कहता है कि अधिगम के लिए प्राथमिक रूप से सरल मानसिक कौशलों का चयन अधिक प्रभावी होता है। वहीं जटिल कौशलों के अधिगम के लिए उनको सरल कौशलों के रूप में विश्लेषित करना और फिर उनका अधिगम करना प्रभावी होता है।

अत: हम कह सकते हैं, यह विधि विषयवस्तु में प्रत्येक ज्ञानखण्ड को कौशलों के रूप में दर्शाती है। अर्थात बालकों को क्या सीखना है, यह विषयवस्तु नही, मानसिक कौशलों के अनुसार तय किया जाता है। अत: प्रत्येक ज्ञानखण्ड के लिए कुछ मानसिक कौशलों का चयन किया जाता है एवं इन्ही मानसिक कौशलों को अर्जन संबन्धित विषयवस्तु के अधिगम को दर्शाता है ।

यह विधि विषयवस्तु अनुक्रमण के लिए तीन स्तरों की बात करता है, यथा-

a. उन सभी मानसिक कौशलों का चिंहांकन जो बालकों के अधिगम के लिए जरूरी हो एवं प्रत्येक बालक के लिए अर्जन करना आवश्यक हो ।
b. सभी मानसिक कौशलों को यथासंभव निम्न स्तरीय मानसिक कौशलों में विभाजित करना ।
c. प्राप्त मानसिक कौशलों का सरल से जटिल (निम्न स्तरीय से उच्चस्तरीय) की ओर अनुक्रमण ।

कार्य विश्लेषण विधि का अवगुण यह है कि यह विधि अभी भी इतनी विकसित नही हो पायी है जिससे प्रत्येक विषयवस्तु , प्रकरणों एवं तत्संबंधी मानसिक कौशलों का सही एवं पर्याप्त अनुक्रमण किया जा सके, इसके बावजूद यह विधि कुछ विशेष प्रकार के कौशलों (मानसिक, व्यावहारिक) के विकास के लिए उपोयोगी सिद्ध हो सकती है।

दरअसल कुछ अधिगम प्रक्रियाओं को मानसिक कौशलों के रूप में परिवर्तित कर अनुक्रमित करना सरल होता है, परन्तु यह सभी अधिगम प्रक्रियाओं के लिए सही प्रतीत नही होता है । इसलिए सम्पूर्ण विषयवस्तु, विशेषत: संप्रत्ययों, मूल्यों के लिए इस विधि का उपयोग गलत सिद्ध हो सकता है ।

अनुक्रमण का विस्तारण सिद्धान्त (Elaboration Technique)

विस्तारण सिद्धान्त मुख्यत: विषयवस्तु विश्लेषण विधि एवं कार्य विश्लेषण विधि को एक सामंजस्यपूर्ण रूपरेखा के तहत एकीकरण करने की प्रक्रिया है जिसके द्वारा इन दोनों विधियो की कमियों को दुर किया जाता है इस एकीकरण प्रक्रिया के माध्यम से यह विधि विषयवस्तु के अनुक्रमण की एक विशेष विस्तारित क्रम को प्रतिपादित करती है। 'विस्तारन क्रम का सिद्धान्त' इस प्रकार है:

'अधिगम वस्तुओं का क्रम इस इस प्रकार से होना चाहिए कि सरल एवं सार्वभौमिक इकाईयों को पहला स्थान प्राप्त हो एवं धीरे-धीरे ज्यादा जटिल एवं विस्तारित इकाईयों की ओर अनुक्रमण हो'।

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी विषयवस्तु के मुख्य बिन्दुओं से संबन्धित सार्वभौमिक दृष्टिकोण को सबसे पहले बालकों के सामने प्रस्तुत करना चाहिए । इसके पश्चात इस दृष्टिकोण के प्रत्येक पहलू का विस्तरीकरण किया जाना चाहोए, इस दौरान बीच-बीच में सार्वभौमिक दृष्टिकोण की भी चर्चा कर लेनी चाहिए, ऐसा करने से विस्तरीकरण की प्रक्रिया समृद्ध होती है। एक बार प्रथम स्तर का विस्तारीकरण हो जाने के बाद इस स्तर को पुन: द्वितीय चरण के लिए प्रारम्भ बिन्दु मान लिया जाता है। इस प्रक्रिया को तब तक दोहराया जाता है जब तक प्रत्येक बिन्दुओं का विस्तरीकरण सम्पूर्ण न हो जाए एवं वांछित जटिलतास्तर प्राप्त न हो जाए।

विस्तारीकरण के प्रत्येक चरण में विस्तारण अनुक्रमण का सारांश एवं दो चरणों के लिए उपयुक्त समन्वयक का वर्णन होना आवश्यक है। सारांश वाले हिस्से में संबन्धित चरण में दिये गए ज्ञान खण्डों का पुन: अवलोकन किया जाता है। समन्वयक यह दर्शाता है कि उक्त चरण में प्रयुक्त ज्ञानखण्ड आपस में एवं अन्य चरण के साथ किस प्रकार का सम्बन्ध रखते है।

चित्र 7 से अनुक्रमण के विस्तारण सिद्धान्त को इस प्रकार दर्शाया जा सकता है।

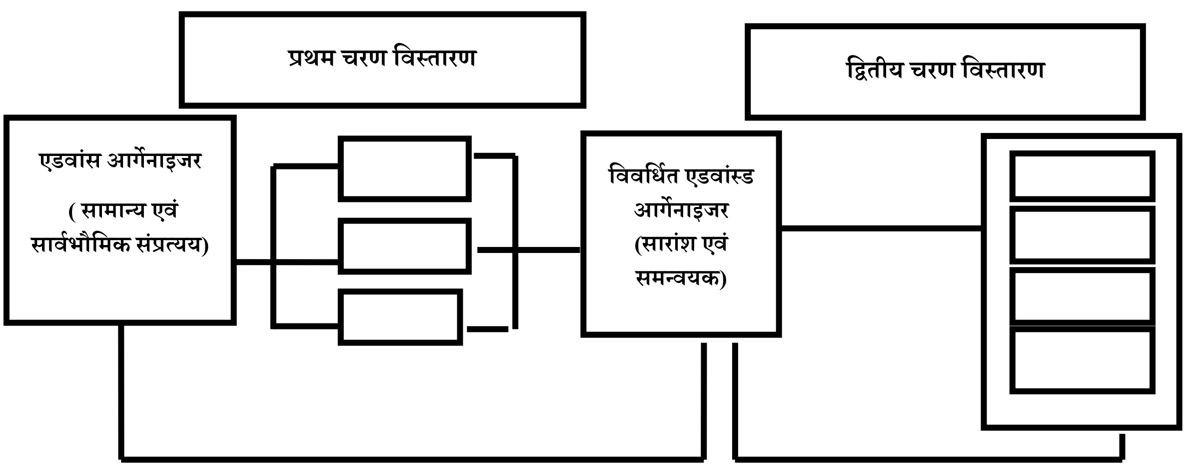

चित्र 7: विस्तारण क्रम का प्रारूप

विषयवस्तु के विस्तारण के लिए मुख्य बिन्दुओं एवं संबन्धित सार्वभौमिक दृष्टिकोण के चयन के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखना आवश्यक है-

i. इसमें सभी मुख्य बिंदुओं को समाहित नहीं करना चाहिए, अपितु सबसे प्रासंगिक बिंदुओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

ii. प्रत्येक चरण में ज्ञान खण्डों का चयन व विस्तारण ऐसा होना चाहिए, ताकि अगले चरण में उन ज्ञान खण्डों के जटिलतास्तर एवं विस्तारण में बढ़ोत्तरी हो।
iii. प्रत्येक चरण के लिए प्रयुक्त होने वाले सार्वभौमिक संप्रत्यय ऐसे होने चाहिए की उन्हें उदाहरण, अभ्यास एवं अनुभवजन्य दृष्टातों के माध्यम से परिभाषित एवं वर्णित किया जा सके, तभी यह बालकों के अर्थपूर्ण होगें।

अभ्यास प्रश्न

7. विषय वस्तु विश्लेषण विधि में विषयवस्तु के अनुक्रमण की दिशा क्या होनी चाहिए ?
8. कार्य विश्लेषण विधि में अनुक्रमण की इकाई क्या होती है ?

4.6 सारांश

किसी पाठ्यक्रम में विषयवस्तु का चयन उसकी वैधता, सार्थकता, संतुलन, स्वयं सम्पूर्णता, रोचकता, उपयोगिता एवं साध्यता के ऊपर निर्भर करता है। विषय वस्तु के चयन के दौरान विषय वस्तुओं में ज्ञान के तीनों पक्षों से सम्बंधित घटकों का यथासंभव समायोजन किया जाता है। इन सभी घटकों को मुख्यत: तीन विधियों के माध्यम से अनुक्रमित किया जाता है , यथा – विषय वस्तु विश्लेषण विधि, कार्य-विश्लेषण विधि एवं विस्तारण विधि। इस पुरे प्रक्रिया के दौरान प्रत्येक ज्ञान खंड एवं मानसिक क्रियाओं को सरल से जटिल एवं सामान्य से विशिष्ट की ओर अनुक्रमित किया जाता है।

4.7 शब्दावली

1. संज्ञानात्मक घटक- मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्यय के अनुसार किसी भी बौद्धिक क्रियायों को नियंत्रित एवं निर्देशित करने वाला घटक
2. भावात्मक घटक -मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्यय के अनुसार किसी भी व्यक्ति के मुल्याबोध, कलात्मकता, इच्छा आदि को नियंत्रित एवं निर्देशित करने वाला घटक
3. क्रियात्मक घटक -मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्यय के अनुसार किसी भी शारीरिक क्रियायों को नियंत्रित एवं निर्देशित करने वाला घटक
4. अनुक्रम - विषयवस्तु के जटिलता एवं स्तर को ध्यान में रखती हुए उनको किसी एक पदानुक्रम के अनुसार सज्जित करना
5. क्रमिक विभेदन - स्तर बड़ने के साथ साथ विषयवस्तु के जटिलता स्तर को बढ़ाते हुए उन्हें पूर्ववर्ती ज्ञान खंडो के साथ जोड़े रखना

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. वैधता, सार्थकता, संतुलन, स्वयं सम्पूर्णता, रोचकता, उपयोगिता, साध्यता।
2. संज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष एवं क्रियात्मक पक्ष।
3. principle एक विशेष नियम होता है, जबकि theory बनता है principle, संप्रत्यय एवं तथ्यों के समुच्चय से जो किसी अधिगम का आधार होता है।
4. तथ्य एक कल्पना है जिसका सत्यापन किया जा सकता है। जबकि ऐसे तथ्यों का कथन है जो सुनिश्चित परिस्थिति में सदा घटित होते है।
5. अपसारी चिंतन में तथ्यों के विश्लेषण से अनेक प्रकार के समाधान प्राप्त होते जो प्राय: सही होते है। जबकि अभिसारी चिंतन में तथ्यों को विश्लेषित कर उपलब्ध अनेक समाधानों में से सही समाधान का चयन किया जाता है।
6. मूल्य एवं अभिवृत्ति
7. सामान्य से विशिष्ट की ओर
8. मानसिक क्रिया

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *Content theory of motivation*. Retrieved from www.speechmastery.com
2. Corpuz, B.B. & Salandanan, G. (2008). Principles of Teaching I. retrieved from www.slideshare.com
3. Miguel Zapata Ros. (2006). *Sequencing of contents and learning objects – parts II* as translation by Nora Lizenberg. RED. Revista de Educación a Distancia, V(14),1-15
4. O.Venugopalan (2007). *Maslow's theory of motivation its relevance and application among non-managerial employees of selected public and private sector undertakings in Kerala.* Thesis of Department of Commerce & Management Studies, University of Calicut.
5. Rodger Stotz & Bruce Bolger (n.d.). *Content and process theories of motivation.* Underlying Principles Series.
6. Behan, Z. (2016). Selection of content and organization of learning experiences. Retrieved from www.slideshare.com

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. विषय वस्तु विश्लेषण विधि एवं विस्तारण सिद्धांत विधि का विस्तृत वर्णन करते हुए इन दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध को स्थापित कीजिए ।
2. किसी विषय के किसी भी प्रकरण का अभिक्रमण विषय वस्तु विश्लेषण विधि के माध्यम से कीजिए ।

खण्ड - 2
Block- 2

इकाई 1- मानविकी ज्ञान की एक शाखा के रूप में, उनका विद्यालयी पाठ्यचर्या में स्थान, शांति शिक्षा एवं विविधता के लिए सम्मान के बीजारोपण के सन्दर्भ में मानविकी में सम्मिलित विषयों से सम्बंधित मुद्दे और चुनौतियाँ

Humanities as a Branch of Knowledge, their Place in the School Curriculum.,Issues and Challenges of the Subjects included in Humanities with respect to their role in Peace Education and Inculcation of REspect for Diversities

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मानविकी ज्ञान की एक शाखा के रूप में
1.4 मानविकी विषयों का विद्यालयी पाठ्यचर्या में स्थान
1.5 मानविकी से जुड़े मुद्दे और चुनौतियाँ
1.6 शांति शिक्षा एवं विविधता के लिए सम्मान के बीजारोपण के सन्दर्भ में मानविकी में सम्मिलित विषयों से सम्बंधित मुद्दे और चुनौतियाँ
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मानविकी को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि यह मानव संस्कृति का अध्ययन है जैसे साहित्य, दर्शन, इतिहास, कला, संगीत इत्यादि। यह वह शैक्षिक शाखा है जो मानव संस्कृति का अध्ययन करती है। मानविकी में उन विषयों को सम्मिलित किया जाता है जो मानव संस्कृति का अध्ययन करते हैं।

मध्य युग के दौरान मानविकी शब्द को देवत्व के विपरीत में लिया जाता था और जिसे अब क्लासिक्स के रूप में देखा जाता है। आज के समय में मानविकी को प्राकृतिक, भौतिक और कभी–कभी सामाजिक विज्ञान के विपरीतार्थ के रूप में लिया जाता है। मानविकी और प्राकृतिक विज्ञान को जो चीज़ अलग करती है वह मानविकी के अर्थ को स्पष्ट करती है। इसकी विषय सामग्री प्राकृतिक विज्ञानों से मानविकी को अलग ही नहीं करती बल्कि इसमें प्रश्नों को पूछने और देखने का तरीका भी इसे प्राकृतिक विज्ञान से अलग करता है। जहाँ मानविकी किसी भी चीज़ के अर्थ, उद्देश्य और लक्ष्यों को समझने पर बल देती है वहीं इसके आगे किसी भी ऐतिहासिक या सामाजिक घटना के लिए समालोचना का भाव, सत्य प्राप्ति हेतु या सत्य की खोज के लिये व्याख्यात्मक तरीका इसे प्राकृतिक विज्ञान से अलग करता है। मानविकी कुछ विषयों को समाहित करते हुए मात्र परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने से ही नहीं सम्बन्धित बल्कि मूल्यों के विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। शांति शिक्षा और विविधता को स्वीकार करने के लिए दृष्टि को व्यापक करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रस्तुत पाठ में मानविकी के इन्हीं पहलूओं के वर्णन का प्रयास किया गया है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. मानविकी को ज्ञान की एक शाखा के रूप में परिभाषित कर सकेंगे।
2. मानविकी के अंतर्गत शामिल किए जाने वाले विषयों का वर्णन कर सकेंगे।
3. मानविकी विषयों के पाठ्यचर्या में स्थान की विवेचना कर सकेंगे।
4. शांति शिक्षा एवं विविधता हेतु मानविकी विषयों से जुड़े मुद्दों और चुनौतियों को स्पष्ट कर सकेंगे।

1.3 मानविकी ज्ञान की एक शाखा के रूप में

मानविकी को मानव के अनुभवों और प्रयोगों से किस प्रकार चित्रित करते हैं; के अध्ययन के रुप में भी परिभाषित किया जा सकता है। इस पृथ्वी पर जब से मनुष्य का विकास हुआ है तब से हम इस संसार को समझने एवं इस समझ को लिपीबद्ध करने के लिए भाषा, साहित्य, इतिहास, दर्शन, धर्म, कला, संगीत इत्यादि का उपयोग किया है। अभिव्यक्ति के जिन माध्यमों का उपयोग मनुष्यों ने खुद को अभिव्यक्त करने के लिए किया वे माध्यम कुछ विषयों का रूप ले लिए और परंपरागत रूप में ये सारे विषय मानविकी के अंतर्गत आते हैं। मानवीय अनुभवों के इन दस्तावेजों का ज्ञान उन लोगों से जुड़े होने के भाव को महसूस करने का अवसर प्रदान करता है जो हमसे पहले आये थे अर्थात जो हमारे पूर्वज थे’ साथ ही साथ उन लोगों से भी जो हमारे समकालीन हैं।

मानविकी शब्द की उत्पत्ति पुनर्जागरण लैटिन अभिव्यक्ति Studia humanities या "study ऑफ़ humanities” से हुई है, इसका शाब्दिक अर्थ "संस्कृति, विनय और शिक्षा" से है। 15 वीं सदी में

इसका प्रयोग व्याकरण, कविता, बयानबाजी, इतिहास, दर्शन और नैतिकशास्त्र के लिए किया जाता था। अतः मानविकी के अंतर्गत वे सभी विषय आते हैं जो विज्ञानेत्तर हों या जो मनुष्य जाति से सम्बंधित हों।

मानविकी को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने तरीके से परिभाषित किया है-

एडम्स (1976) के अनुसार, "मानविकी इतिहास संभवतः भूगोल, शास्त्रीय अध्ययन के बचे भाग, अंग्रेजी के कुछ पहलुओं और आधुनिक भाषाओं, धार्मिक शिक्षा और ऐसे विषयों को सम्मिलित करता है।"

Wallace (2008) मानविकी को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि "यह एक सामूहिक शब्द है जो शैक्षणिक विषयों या क्षेत्रों की एक श्रेणी के लिए प्रयुक्त किया जाता है तथा, जो मनुष्यों के विकास, उपलब्धियों, व्यवहार, संगठन या वितरण के ज्ञान पर विकसित होता है।

Blyth (1990) ने मानविकी को परिभाषित करते हुए कहा है कि "प्राथमिक पाठ्यचर्या का वह भाग जो जीवित और स्थान विशेष पर कार्यशील और समूहों और समाजों, भूत और वर्तमान से आपस में जुड़े हुए व्यक्तियों से सम्बंधित है," मानविकी है।

स्कूलस काउन्सिल (1965) ने मानविकी को इस प्रकार परिभाषित किया है "विभिन्न विषयों का समूह जो मुख्यतः पुरुषों और स्त्रियों से उनके वातावरण, उनके समुदाय और उनके स्वयं के ज्ञान से सम्बंधित रहता है, मानविकी के अंतर्गत आता है।"

अभ्यास प्रश्न

1. मानविकी शब्द की उत्पत्ति किस शब्द से हुई है?
2. Blyth ने मानविकी को किस प्रकार परिभाषित किया है?

1.4 मानविकी विषयों का विद्यालयी पाठ्यचर्या में स्थान

मानविकी के अंतर्गत विभिन्न विषय आते हैं, नेशनल एंडोमेंट ऑफ़ ह्यूमनिटी के अनुसार जिन विषयों को मानविकी के अंतर्गत लिया जाता है वे निम्नलिखित हैं;

- आधुनिक भाषायें
- शास्त्रीय भाषायें
- भाषा शास्त्र
- साहित्य
- इतिहास
- विधिशास्त्र/ न्यायशास्त्र
- दर्शनशास्त्र

- पुरातत्वविज्ञान

परन्तु वास्तव में मानविकी मात्र इन विषयों तक ही सीमित नहीं बल्कि कई अन्य विषय भी मानविकी के अंतर्गत सम्मिलित किये जाते हैं। मानविकी का पाठ्यक्रम में 1960 के पश्चात् बहुत परिवर्तन आया है। मानविकी में कुछ अन्य विषयों को शामिल किया गया है जो अपेक्षाकृत नए हैं जिनमें, महिला शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, बहुसांस्कृतिक शिक्षा, सांस्कृतिक शिक्षा, फिल्म और मीडिया शिक्षा, कोलोनियल और पोस्ट-कोलोनियल शिक्षा, चिकित्सकीय मानविकी इत्यादि सम्मिलित हैं।

विद्यालयी स्तर पर जिन विषयों को मानविकी में सम्मिलित किया जाता है वे उपर्युक्त विषयों से थोड़े अलग हैं। उपर्युक्त विषय मुख्य रूप से उच्च कक्षाओं में पढ़ाये जाते हैं। विद्यालयी स्तर पर सम्मिलित मानविकी के अंतर्गत आने वाले विषयों का वर्णन निम्नवत है।

भाषा और भाषा विज्ञान

भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन को भाषा विज्ञान के रूप में जाना जाता है। आम तौर पर भाषा विज्ञान को एक संज्ञानात्मक विज्ञान से जुड़ा माना जाता है वहीं भाषा मानविकी से अधिक जुड़ा है। विद्यालयी स्तर पर भाषा विज्ञान हमारे पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं होता है। भाषा विज्ञान को उच्च स्तर पर पाठ्यचर्या में समिमलित कर लिया जाता है वहीं भाषा प्रारंभिक कक्षाओं में हमारे पाठ्यचर्या का भाग होती है और यह मात्र एक विषय के रूप में ही नहीं होती बल्कि अन्य विषयों के अध्ययन के लिए आधार भी प्रदान करती है । भाषा के अभाव में व्यक्ति किसी भी विषय का अध्ययन नहीं कर सकता है तो यदि भाषा को पाठ्यचर्या की रीढ़ की हड्डी कहा जाए तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी । यह मानविकी का केन्द्रीय विषय है।

साहित्य

सामान्य तौर पर साहित्य का अर्थ कविताओं, कहानियों, उपन्यासों इत्यादि से लगाते हैं। साहित्य एक ऐसा शब्द है जिसकी कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है परन्तु इसे जिस रूप में परिभाषित किया जाता है उनमे सभी लिखित सामग्रियों, रचनाओं, शास्त्र समूहों इत्यादि को शामिल किया जाता है। साहित्य भाषा से अलग है, यह और बात है कि भाषा की शिक्षा देने के लिए साहित्यिक सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। इन साहित्यिक सामग्रियों में मात्र लिखित सामग्रियां ही नहीं ली जाती हैं बल्कि गेय, और मौखिक ग्रंथों को भी शामिल किया जाता है। मानविकी विषयों में साहित्य का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह विद्यार्थियों में साहित्यिक रसास्वादन की योग्यता बढ़ाने के साथ ही अन्य मूल्यों जैसे भिन्न-भिन्न भाषाभाषियों के मध्य मित्रता का भाव पैदा करना, नागरिक गुणों और संस्कृति का विकास करना, विद्यार्थियों में लिखने और पढने के प्रति रूचि उत्पन्न करना, विभिन्न भाषाओँ को संरक्षित करना एवं उनका प्रसार करने से जुड़ा हुआ है।

इतिहास

इतिहास अतीत की सूचनाओं का क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित संकलन है। अध्ययन के विषय के रूप में इतिहास को व्यक्ति, समाज, संस्था या कोई अन्य चीज़ जो समय के साथ परिवर्तित हुई हो के अध्ययन एवं व्याख्या के रूप में लिया जाता है। इतिहास मानविकी का ही एक भाग है परन्तु इसे कभी-कभी सामाजिक विज्ञान के एक भाग के रूप में लिया जाता है। विद्यालयी स्तर पर इतिहास एक स्वतंत्र विषय के रूप में विद्यार्थियों को पढ़ाया जाता है।

भूगोल

मानविकी में भूगोल को भी सम्मिलित किया जाता है। भूगोल मानव और पृथ्वी के परस्पर संबंधों के अध्ययन के रूप में लिया जाता है। विद्यालय के विभिन्न स्तरों पर भूगोल का स्वरुप पाठ्यक्रम के अंतर्गत परिवर्तित होता रहता है। विद्यालयों में प्राथमिक स्तर पर यह विज्ञान के साथ रख पर्यावरण विज्ञान के रूप में पढ़ाया जाता है। भूगोल को मानविकी, विज्ञान और सामाजिक विज्ञान के विषयों के बीच एक कड़ी के रूप में देखा जा सकता है क्योंकि भूगोल ही एक ऐसा विषय है जो इन तीनों में सम्मिलित किया जाता है।

नागरिक शास्त्र

नागरिक शास्त्र में नागरिकता, नागरिक के रूप में अपने अधिकारों और कर्तव्यों के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। एक राजनितिक निकाय के सदस्य के रूप में नागरिक का अन्य नागरिकों और सरकार के परस्पर संबंधों का अध्ययन इस विषय के अंतर्गत किया जाता है। यह सिविल लॉ और सिविल कोड को सम्मिलित करती है। नागरिक शास्त्र प्रारंभिक कक्षाओं से ही पाठ्यचर्या का एक महत्वपूर्ण विषय है।

चित्रकारी

चित्रकारी या ड्राइंग, हमारी पूर्व-प्राथमिक कक्षाओं से एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। विद्यार्थियों को शिक्षा से जोड़ने के लिए इसे एक माध्यम के रूप में देखा जाता है क्योंकि विद्यार्थी चित्रकारी में आनंद का अनुभव करते हैं। चित्रकारी एक तस्वीर बनाने की तकनीक है जो विभिन्न उपकरणों और तकनीकियों को प्रयोग में लाती है। आम उपकरणों में ग्रेफाइट पेंसिल, कलम और स्याही, ब्रश, मोम रंग, पेंसिल, क्रेयोंस, तैल रंग, चारकोल, पेस्टल और मार्कर को सम्मिलित किया जाता है। प्राचीन समय में चारकोल, पत्तों, खड़िया, कोयले इत्यादि का प्रयोग, चित्रकारी के लिए किया जाता था। चित्रकारी का भी प्रयोग भी आध्यात्मिक रूपांकनों और विचारों को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। चित्रकारी के कई तरीके होते हैं जैसे स्केचिंग,आयल पेंटिंग, लाइन चित्रकारी, स्क्रिब्ब्लिंग इत्यादि। अलोरा की गुफायें, मोनालिसा, द लास्ट सपर, इत्यादि चित्रकला के नायाब नमूने हैं।

अन्य कलायें

विभिन्न प्रकार की कलाएं भी मानविकी का हिस्सा हैं चाहे वह दृश्य कला हो, मंच कला हो, मूर्ति कला या स्थापत्य कला। संगीत और चित्रकारी भी इसी के अंतर्गत आते हैं, पर संगीत और चित्रकारी की चर्चा इस पाठ में दूसरे शीर्षक के अंतर्गत की जाएगी क्योंकि विद्यालयों में संगीत और कला की शिक्षा अलग विषय के रूप में दी जाती है। मनुष्य प्रारंभ से ही इन विभिन्न प्रकार की कलाओं का शौक़ीन रहा है। मनुष्य ने अपने विकास के साथ ही इन कलाओं में अपनी रुचि प्रकट की है। वह चाहे पुरा पाषाण काल या पाषाण काल के भित्तिचित्र हों या विभिन्न नदी घाटी सभ्यताओं में मिलने वाली मूर्तियाँ या चित्रकारी। सिन्धु, माया, रोमन, मेसोपोटामिया, इनका सभी प्राचीन नदी घाटी सभ्यताओं में इन कलाओं के नमूने प्राप्त हुए हैं। बाद के वर्षों में भी विभिन्न राज वंशों और शासकों के समय के विभिन्न प्रकार की कला के नमूने प्राप्त हुए हैं जो उनके कला-प्रेम के साथ साथ वैज्ञानिकता का भी प्रमाण देते हैं। भारत विभिन्न प्रकार की कलाओं का साक्षी रहा है। देश के विभिन्न मंदिर, मकबरे, स्तूप, स्मारक इत्यादि इसका उदहारण हैं। चीन की दीवार, पीसा की मीनार, मिस्र के पिरामिड इत्यादि सम्पूर्ण विश्व में पाए जाने वाले इन कलाओं के कुछ नमूने हैं।

इन कलाओं में धर्म का भी स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। हर एक धर्म की मान्यताओं के अनुसार उसके अनुनाइयों ने कला की रचना की है। जैसे हिन्दू धर्म के अनुनाइयों ने चित्रकारी और मूर्ति कला के साथ–साथ स्थापत्यकला पर बल दिया, इस्लाम में जिसमें कला शास्त्र की मनाही है ऐसे में ज्यामिति के माध्यम से धार्मिक विचारों को अभिव्यक्त किया है, और ऐसे में मकबरों, मीनारों जैसे स्मारकों का निर्माण किया। ईसाई धर्म में कुछ मनाही न होने के कारण कला के विभिन्न माध्यमों से धार्मिक विचारों को अभिव्यक्त किया है। सभी धर्मों ने अपने हिसाब से ईश्वर के रूप को दर्शाने की कोशिश की है। यह सत्य है कि कला का रूप अलग रहा है परन्तु ये सभी हमें कला का रसास्वादन कराती है और हमारे अन्दर कोमल संवेगों को उद्वेलित करती हैं और विद्यार्थियों में अपने देश के साथ-साथ अन्य समुदायों और देशों के लिए आदर का भाव पैदा करती है।

नृत्य

नृत्य कला की एक अत्यन्त प्राचीन विधा है जो उस समय से इस समय तक चली आ रही है। उदाहरणतः- भरतनाट्यम नृत्य का उद्भव भगवान शिव के रौद्र रूप में आकर किए गए तांडव से माना जाता है। कहा जाता है कि जब सती ने पितृगृह में अवहेलना पाकर यज्ञकुंड में कूदकर अपनी जान दे दी थीं तो उनके झुलसे हुए शरीर को शिव ने अपने कंधे पर उठाकर रौद्र रूप धारण कर महातांडव किया था और तभी भरतनाट्यम की शुरुआत हुई थी। यही कारण है की भरतनाट्यम नृत्य में नटराज की मूर्ति रखकर नृत्य किया जाता है। इसी प्रकार अन्य नृत्यों के पीछे भी कुछ दंतकथाएँ हैं जो एक कला रूप की प्राचीनता को सिद्ध करती हैं।

भारतीय नृत्य को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है; शास्त्रीय नृत्य एवं लोक नृत्य। शास्त्रीय नृत्य में भरतनाट्यम, कथकली, कत्थक, मणिपुरी, ओडिसी, कुचिपुड़ी, सत्रिया नृत्य आते हैं। लोक नृत्य के मुख्य प्रकारों में यक्षगान, बिहू, गरबा, पंडवानी, लावणी इत्यादि। भारत में हर एक क्षेत्र की एक अलग नृत्य शैली पाई जाती है। इसके अलावा पाश्चात्य नृत्य के भी कई प्रकार हैं जिसमें सालसा, ब्रेक डांस, रॉक एंड रोल इत्यादि आते हैं। बच्चों को इन सभी नृत्य शैलियों को बताया जा सकता है, उनकी प्रारंभिक पहचान नृत्य शैली में करायी जा सकती है और तश्चात उनकी रुचि वाली विधा में उनको आगे सीखने को प्रोत्साहित किया जा सकता है। नृत्य भी विद्यार्थियों में भावात्मक पक्ष से जुड़े सभी मूल्यों का विकास करने में मदद करती है।

संगीत

भारतीय संगीत का प्रादुर्भाव वेद के मंत्रोत्चार से माना जाता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में संगीत का प्रारंभ लगभग 5000 साल से पहले हुआ था। इसके और प्राचीन होने का प्रमाण इस कारण नहीं मिल सकता क्योंकि अन्य कलाओं की तरह संगीत गुफा की दीवारों या भित्ति चित्रों के रूप में उकेरा नहीं जा सकता। और न ही मूर्तिकला के रूप में आ सकता है। यह श्रव्य माध्यम है अतः राग के रूप में मात्र एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जा सकता है। यही कारण है कि अत्यन प्राचीनकाल में इसके होने की प्रमाणिकता को सिद्ध नहीं किया जा सकता है पर यह कहा जा सकता है कि संगीत का प्रारंभ मानव जीवन के प्रारंभ के साथ ही हो गया होगा।

संगीत को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है; जिसमें पहला है गायन और दूसरा है वादन। यदि इनको आगे भी विभाजित किया जाए तो गायन को अन्य भागों में बाँटा जा सकता है जैसे लोकगीत, शास्त्रीय संगीत और पाश्चात्य संगीत। भारतीय संगीत को तीन मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है- हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत, कर्नाटक शास्त्रीय संगीत और क्षेत्रीय संगीत। वर्तमान समय में शास्त्रीय संगीत में दो प्रकार के संगीत को लिया जाता है; हिन्दुस्तानी और कर्नाटिक। कर्नाटिक संगीत में कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल के शास्त्रीय संगीत को लिया जाता है। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में गाने की शैली के अनुसार कई घराने होते है जैसे बनारस घराना, ग्वालियर घराना, आगरा घराना, पटियाला घराना, दिल्ली घराना इत्यादि। शास्त्रीय संगीत में ध्रुपद, धमर, ख्याल, तराना आती को सम्मिलित किया जाता है वहीं अर्द्धशास्त्रीय संगीत में ठुमरी, दादरा, कव्वाली, ग़ज़ल, चैती, कजरी को लिया जाता है। संगीत शिक्षा शांति को बढ़ावा देना और विविधता की सराहना करना सिखाती है।

दर्शन

दर्शनशास्त्र वह ज्ञान है जो परम सत्य और प्रकृति के सिद्धांतों और इनके पीछे के कारणों की विवेचना करता है। दर्शन यथार्थ को परख सकने का दृष्टिकोण है। दार्शनिक चिंतन मूलत: जीवन के अर्थ को खोज करने के रूप में डीक्य गया प्रयास है। वस्तुतः दर्शनशास्त्र स्वत्व अर्थात प्रकृति तथा समाज और मानव

चिंतन तथा संज्ञान की प्रक्रिया के सामान्य नियमों का विज्ञान है। दर्शनशास्त्र सामाजिक चेतना का एक रूप है। सामान्यतः Philosophy शब्द को दर्शन के अंग्रेजी शब्द के रूप में देखा जाता है परन्तु दोनों में अंतर है। दर्शन जहाँ यथार्थता का तत्व ज्ञान है और फिलोसोफी विभिन्न विषयों का विश्लेषण। फिलोसोफी का शाब्दिक अर्थ ज्ञान के प्रति प्रेम से है। फिलोसोफी के अर्थो में दर्शनशास्त्र शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम पाइथागोरस ने किया था और एक विशिष्ट अनुशासन के रूप में दर्शन को प्लेटो ने विकसित किया। दर्शन शास्त्र कि तीन मुख्य शाखायें हैं; पहला तत्वा मीमांसा, दूसरा ज्ञान मीमांसा और तीसरा मूल्य मीमांसा। हालांकि दर्शन प्रारंभिक कक्षाओं में एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में पाठ्यचर्या में सम्मिलित नहीं होता है पर विभिन्न विषयों के माध्यम से दर्शन पढ़ने का प्रयास विद्यालयों में किया जाता है। उच्च माध्यमिक कक्षाओं से दर्शन शास्त्र के स्वतंत्र अनुशासन के रूप में पाठ्यचर्या में सम्मिलित हो जाता है।

नृविज्ञान

नृविज्ञान या Anthropology शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द anthropos से हुई है जिसका अर्थ मनुष्य या व्यक्ति है। नृविज्ञान मानव विज्ञान का समग्र विषय है जो मानव के अस्तित्व की समग्रता का विज्ञान है। यह विषय सामाजिक विज्ञान, मानविकी और मानव शरीरशास्त्र के विभिन्न पहलुओं के एकीकरण से सम्बंधित है। यदि इन विषयों को अलग-अलग विषयों में देखा जाए तो उसका सही रूप कभी नहीं बन सकता बल्कि वह इसकी कुछ शाखाओं का ही रूप ले सकता है। नृविज्ञान विषय का लक्ष्य मानव और मानव स्वभाव के लिए एक समग्र लेखा जोखा प्रदान करना है। विद्यालयों में नृविज्ञान एक अलग विषय के रूप में नहीं पढ़ाया जाता बल्कि यह विज्ञान और भूगोल का भाग होता है। विभिन्न कालों में मनुष्य में किस-किस प्रकार के परिवर्तन आये हैं, वर्तमान स्वरुप में आने के लिए मनुष्य किन बदलावों का साक्षी रहा है और उसने किस प्रकार प्रगति की है का सम्पूर्ण अध्ययन नृविज्ञान के अंतर्गत किया जाता है।

धर्म

धर्म भी विद्यालयी स्तर पर किसी अलग विषय के रूप में ना पढ़ाये जाकर सभी विषयों में आधार के रूप में शामिल किया जाता है। भारत जो स्वयं में एक धर्मनिरपेक्ष देश है; के पाठ्यचर्या और पुस्काओं का विकास करते हुए यह ध्यान रखा जाता है कि पैसे कोई भी पाठ शामिल ना किए जायें जिससे यह प्रतीत हो कि किसी धर्म का प्रसार किया जा रहा है या किसी धर्म के अनुनाइयों की भावना को आहत किया जा रहा है। यह प्रयास किया जाता है कि इसी प्रकार के पाठ शामिल किए जायें जिससे धर्मनिरपेक्षता को बढ़ावा मिले और सभी धर्मों के प्रति आदर का विकास हो जो शांति एवं विविधता को सम्मान देने के लिए आवश्यक है। वैसे यदि धर्म को एक विषय के रूप में देखा जाए तो छठे ईसा पूर्व के दौरान धर्म तथा नया दर्शन पूर्वी तथा पश्चिमी देशों में उत्पन्न हुए। समय के साथ पूरी दुनिया में कई धर्मों का प्रादुर्भाव हुआ हुआ जैसे, सनातन धर्म, इस्लाम, ईसाईयत, पारसी, जैन, बौद्ध, सिख, इत्यादी। समय आने पर इन धर्मों की

कई शाखायें इनके अनुनैयों के हिसाब से बनीं। जैसे सनातन धर्म में शैव, वैष्णव और शक्त, इस्लाम में शिया और सुन्नी और उसके बाद अन्य कई शाखायें, ईसाईयत में कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट (ओल्ड टेस्टामेंट और न्यू टेस्टामेंट), बौद्ध धर्म में हीनयान और महायान, जैन धर्म में श्वेताम्बर और दिगंबर इत्यादि। इन सभी धर्मों और उनकी विचारधाराओं ने ईश्वर का रूप अपने अनुसार से परिभाषित किया। विचारधाराओं के अलग होने के बाद भी, और ईश्वर का अलग-अलग स्वरुप मानने के बाद भी इन सभी धर्मों का सार एक ही है। ये सभी सत्य, दया, प्रेम, आस्था, विश्वास, बंधुत्व के पक्षधर हैं।

अभ्यास प्रश्न

3. मानविकी के अंतर्गत किन-किन विषयों को सम्मिलित किया जाता है?
4. साहित्य विद्यार्थियों में किन मूल्यों का विकास करती है ?
5. इतिहास को परिभाषित कीजिए ।

1.5 मानविकी से जुड़े मुद्दे और चुनौतियाँ

- देश में मानविकी में हुए शोध इतने सफल नहीं रहे हैं जिनके द्वारा मानविकी को एक एकीकृत अनुशासन के रूप में व्याख्या की जा सके या संचालित किया जा सके। यद्यपि सैद्धांतिक रूप से से हम मानविकी को एक एकीकृत अनुशासन के रूप में विकसित करने के पक्षधर रहते हैं परन्तु पाठ्यपुस्तकों, शिक्षण और संचालन के मामले में खंडित व्यवहार और दृष्टिकोण अपनाते हैं।
- मानविकी के प्रति विद्यमान दृष्टिकोण एक और मसला है। एक लोक-सम्मत दृष्टिकोण मानविकी विषयों के गैर उपयोगिता से सम्बंधित है। लोग इसे गैर उपयोगी विषय समझते हैं और परिणामस्वरूप कक्षा शिक्षण के दौरान भी इस विषय को लेकर कम सम्मान रहता है और वे विद्यार्थी भी जो इस विषय को पढ़ते हैं उन्हें स्वयं को लेकर उस स्तर का स्व-सम्मान नहीं दिखा पाते हैं जितना विज्ञान विषयों के विद्यार्थियों में होता है। विज्ञान को मानविकी के तुलना में श्रेष्ठतर विषय के रूप में देखा जाता है। यह प्रचलित धारणा है कि मानविकी विषय मात्र सूचना देने वाले ही विषय हैं जो केवल लिखित पाठों और उनके स्मरण से ही सम्बंधित है। उच्च स्तर की मानसिक क्रियाओं को यह सम्मिलित नहीं करता है।
- यह भी माना जाता है कि मानविकी विषयों के अध्ययन और विशेषज्ञता प्राप्त करने के पश्चात् रोजगार के अवसर उतने अधिक नहीं हैं जितने की विज्ञान के अध्ययन के पश्चात् मिलते हैं। साथ ही यह व्यावहारिक जगत हेतु जीवन-कौशल नहीं प्रदान कर पाता है। शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या-2005 ने मानविकी से सम्बंधित विभिन्न विषयों में अनुप्रयोग के स्थान पर धारण को अधिक महत्व दिया है।

- भारत विविधता से परिपूर्ण देश है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि पाठ्यपुस्तकों में हर एक प्रदेश और सामाजिक समूह को स्थान मिले पर देश की सांस्कृतिक वृहदता और केन्द्रीय स्तर पर पाठ्यपुस्तकों के निर्माण के कारण हर एक प्रदेश को उन पुस्तकों में स्थान देना मुश्किल हो जाता है।
- यह धारणा है कि मानविकी के विषयों में वैज्ञानिक कठोरता का अभाव है और एक हद तक यह बात सही भी है।
- विभिन्न अनुशासनों के मध्य अन्तर्सम्बन्ध स्थापित करना। इस विषय की विविध प्रविधियाँ हैं। तो कई बार अन्तर्सम्बन्ध स्थापित करना कठिन हो जाता है। साथ ही यह भी कि सभी प्रकरण अन्तर्सम्बंधित करते हुए पढ़ाए भी नहीं जा सकते हैं।
- मानविकी विषयों के साथ कुछ मानकीय समस्याएँ भी हैं। मानविकी विषयों पर एक प्रामाणिक जिम्मेदारी है जो मानवीय मूल्यों जैसे स्वतंत्रता, विश्वास, परस्पर आदर का भाव, और विविधता के प्रति आदर के भाव के लोकप्रिय आधार का निर्माण और विस्तार कर सकें।
- कई लोग यह मानते और महसूस करते हैं कि समन्वित उपागम किसी भी अनुशासन के बनावट और अनूठेपन के लिए एक खतरा है।
- मानविकी में सम्मिलित विभिन्न विषयों की पाठ्यपुस्तकों के लेखकों का दृष्टिकोण विस्तृत करने की आवश्यकता है। हमारी पाठ्यपुस्तकों में समन्वयन का अभाव है।
- सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों को को विचारोत्तेजक रूप से प्रस्तुत करके मानविकी के स्थिति में सुधार लाने की आवश्यकता है ।
- लोगों में जागरूकता लाना तथा लोगों की मानसिकता परिवर्तित करना। रोजगार के अवसर `बढ़ाकर मानविकी के स्थिति में सुधार करना आवश्यक है ।
- लोगों को मानविकी के महत्व की शिक्षा देना।
- मानविकी की बेहतर पुस्तकों का निर्माण करना। किसी भी प्रकरण पर आगे के अध्ययन के लिए रास्ता खोलना चाहिए। लैंगिक समानता को और प्रोत्साहित करना चाहिए। विषय को और एकीकृत दृष्टिकोण से समझना और समझाना चाहिए। प्रश्नों और मूल्यांकन का स्तर बेहतर होना चाहिए। अर्थात ये मात्र स्मरण पर आधारित नहीं होने चाहिए बल्कि उच्च स्तर की मानसिक क्रियायें इसमें सम्मिलित होनी चाहिए।
- बेहतर तरीके से मानविकी विषयों को पढ़ाने के लिए शिक्षक प्रशिक्षण देना चाहिए ।

अभ्यास प्रश्न

6. मानविकी विषयों की क्या जिम्मेदारी होती है ?

7. विद्यालयों में शिक्षकों और छात्रों के द्वारा विज्ञान विषयों को मानविकी विषयों की तुलना में अधिक महत्व दिया जाने का क्या कारण है ?

1.6 शांति शिक्षा एवं विविधता के लिए सम्मान के बीजारोपण के सन्दर्भ में मानविकी में सम्मिलित विषयों से सम्बंधित मुद्दे और चुनौतियाँ

विज्ञान के ज्ञान ने व्यक्ति का उत्थान तो किया है और व्यक्ति के उत्थान के साथ ही समाज में भी प्रगति की दृष्टि से गुणात्मक परिवर्तन हुआ है पर इस प्रगति के साथ ही सामाजिक, मानवीय तथा नैतिक मूल्यों में गिरावट आयी है। समाज की प्रगति तो दी है। विज्ञान हमें कुशल और विकसित तो बना सकता है पर मानविकी विषयों के अभाव में हम एक व्यक्ति की मनुष्य के रूप में कल्पना भी नहीं कर सकते। मूल्यहीन समाज में कभी भी एक व्यक्ति मनुष्य नहीं बन सकता। मानविकी में शामिल किए जाने वाले विषय साहित्य, कला, शिल्पकला, नृत्य, चित्रांकन इत्यादि व्यक्ति के भावात्मक पक्ष का भी विकास करते हैं जो मनुष्य को इस योग्य बनता है कि वह किसी भी विषय पर संवेदना के साथ सोच और समझ सके। वहीं दर्शनशास्त्र हमें तार्किक ढंग से सोचने और समझने की क्षमता प्रदान करता है। वर्तमान समय में मानविकी का ज्ञान मानव अनुभवों को खोजने और समझने के लिए एक आदर्श आधार प्रदान करता है। जैसे कि यदि हम दर्शन को पढ़ रहे हैं तो दर्शन की कोई शाखा उससे जुड़े हुए किसी नैतिक प्रश्न का उत्तर जानने के लिए हमें उद्वेलित कर सकती है। किसी अन्य भाषा के अध्ययन के द्वारा हम अन्य या विभिन्न संस्कृतियों में समानतायें ढूँढ सकते हैं साथ ही उनकी सराहना कर सकते हैं। किसी मूर्ति को देखते हुए हम यह विचार कर सकते हैं कि कैसे कलाकार के जीवन के अनुभवों ने उसकी रचनात्मकता को प्रभावित किया है। विश्व के किसी और प्रदेश या भाग से सम्बंधित किताब पढ़कर हम वहाँ के लोकतंत्र को जान और समझ सकते हैं। किसी भी इतिहास को पढ़कर या सुनकर हम अतीत कि घटनाओं को बेहतर तरीके से समझ सकते हैं और उसी समय में भविष्य का एक स्पष्ट चित्र भी प्रस्तुत कर सकते हैं।

यदि कहा जाए कि विद्यार्थी में मूल्यों का बीजारोपण करने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका मानविकी से सम्बंधित विषय निभाते हैं तो यह कहीं से भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। मानविकी के अंतर्गत जिन विषयों को पढ़ाया जाता है वे सभी विषय शांति शिक्षा और विविधता की समझ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

शांति शिक्षा की पाठ्यचर्या सामान्यतया द्वंद्व, सहकारिता, परस्पर निर्भरता, वैश्विक जागरूकता, सामाजिक तथा पारिस्थतिक उत्तरदायित्व से सम्बंधित अनुदेशों को सम्मिलित करती है । शांति और विविधता के लिए सराहना समाज में लाने के लिए दो मुख्य मार्ग हैं। पहला प्रसंग आधारित एकीकरण और दूसरा विषय आधारित एकीकरण। प्रसंग आधारित शिक्षण एकीकरण पाठ में जब भी आवश्यकता हो विविधता और शांति के मूल्यों कि शिक्षा को सम्मिमलित करता है। वहीं पर विषय केन्द्रित शिक्षण एकीकरण उन मुद्दों को उठाने से सम्बंधित है जो ज्वलंत हों और फिर उस मुद्दे को इतिहास और राजनीती विज्ञान से सम्बंधित करके कारण, उपाय और उपादेयता को जानने से है ।

- मानविकी विषयों का अध्ययन विद्यार्थी को एक अच्छा नागरिक बनाने में मदद करता है। एक अच्छा नागरिक अपनी समस्त कर्तव्यों का निर्वहन करता है। कोई भी सफल अपने मूल्यों पर निर्भर करता है। इन मूल्यों में प्रेम, त्याग, क्षमा, परोपकार, दया, करुणा, भातृत्व, उदारता, विश्व-बंधुत्व और विश्व-शांति इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है। मानविकी इन गुणों और विशेषताओं को विद्यार्थियों में बीजारोपित करती है और उनका मूल्यांकन करती है।
- दूसरों के लिए उनकी जाति, वर्ण, प्रजाति, रूप रंग, नागरिकता, उम्र, वर्ग, लिंग, राजनीतिक तथा धार्मिक विश्वास, शारीरिक तथा मानसिक योग्यता के इतर आदर करने की भावना पोषण करती है।
- मानविकी का अध्ययन विद्यार्थियों को रचनात्मक बनता है। मानविकी विषय विद्यार्थियों को इस योग्य बनता है कि उनके मस्तिष्क में रचनात्मक विचार उत्पन्न हो सकें। विभिन्न लोगों की जीवनी, साहित्य, इतिहास, भाषा विद्यार्थियों के समक्ष नए आयामों को लेकर आते हैं जिससे वे अन्य मनुष्यों और उनसे जुड़े समाज की प्रकृति को समझ सकें जो शांति शिक्षा के लिए मददगार है।
- कला छात्रों को सौन्दर्य बोध कराती है और उसका रसास्वादन करने में मदद करती है। साथ ही एक सम्पूर्ण और अर्थपूर्ण जीवन जीने में मदद करती है जो शांति और विभिन्नता की समझ के लिए आवश्यक है।
- मानविकी का अध्ययन विद्यार्थियों में संवादशीलता और दूसरे के साथ काम करने की योग्यता को बढ़ाता है। यह अन्य विद्यार्थियों के साथ छात्रों के व्यक्तिगत संबंधों को मजबूत बनाने में मदद करता है। जैसे नागरिकशास्त्र के अंतर्गत हम अपने अधिकारों के साथ साथ कर्तव्यों के बारे में जान पाते हैं। जो हमारे अन्दर अच्छे नागरिक के गुणों को बढ़ाता है। हम समझ पाते हैं कि हमारे अधिकार ही नहीं बल्कि कुछ कर्त्तव्य भी हैं जिन्हें पूरा करना चाहिए। इसके साथ ही हम यह भी समझ पाते हैं कि जिस प्रकार से हमें अधिकार मिले हैं अगले व्यक्ति को भी वही अधिकार प्राप्त हैं ऐसे में हमें उनके अधिकारों का भी सम्मान करना चाहिए। व्यक्ति अपने नागरिक और सांस्कृतिक जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए तैयार करते है।
- मानविकी के अध्ययन द्वरा विज्ञान, तकनीकी तथा चिकित्सा के प्रभाव को समझा जा सकता है अतः मानविकी का ज्ञान मात्र मानविकी को ही नहीं बल्कि विज्ञान, तकनीकी तथा चिकित्सा को भी समझने में मदद करती है। विज्ञान ने समाज को आकार देने में और लोगों के जीवन की गुणवत्ता पर किस प्रकार से सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव डाला है; साहित्य इतिहास और दर्शन इसको समझने में मदद करती है। इसके साथ ही मानविकी के ये विषय समाज की आवश्यकता को भी बताते हैं और विज्ञान को दिशा देने में मदद करते हैं कि वह आवश्यकता के अनुसार कार्य कर सके।
- विद्यार्थी मात्र अपनी मातृभाषा का ज्ञान ही नहीं प्राप्त करते बल्कि आप अन्य स्थानीय भाषाओं के साथ-साथ विदेशी भाषाओं और विदेशी संस्कृतियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर पाते हैं। जो न केवल उनके ज्ञान के क्षेत्र को विस्तृत करता है बल्कि राष्ट्रीयता और अंतर्राष्ट्रीय समझ जैसे गुणों को भी

विकसित करता है। विद्यार्थी में अपने देश कि संस्कृति के प्रति गर्व का भाव जागृत होता है और और वह अपने देश की विविधता को समझ पाते हैं। साहित्य के द्वारा उनमें विभिन्न नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों का विकास संभव हो पाता है।

- वैश्वीकरण के दौर में आधुनिक और अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं का ज्ञान और अन्य देशों कि संस्कृति की जानकारी आवश्यक है ऐसे में विदेशी भाषा और साहित्य का अध्ययन उनकी इस समझ को बढ़ाने में मदद करता है।
- भाषा और कला के द्वारा की गयी भावाभियक्ति शांति में योगदान देती है।
- शांति से सम्बंधित बातों का दृष्टान्त देना शांति शिक्षा में मदद करता है। जैसे कोई देश किसी भी भयावह परिस्थिति से गुजर रहा हो और वहाँ शांति स्थापित करने हेतु कोई कार्य का उदाहरण देकर छात्रों को इस तरफ उत्प्रेरित कर सकता है।
- शांति से सम्बंधित मुद्दों पर नाटक का आयोजन किया जा सकता है।
- संगीत को सम्मिलित करना क्योंकि इससे यह सामंजस्य, मधुरता का निर्माण करता है और विश्व शांति का सन्देश देते हैं तथा विश्व एकता की बात करते हैं। संगीत एक ऐसा माध्यम है जो पूरे विश्व को एक सूत्र में बाँध सकता है। कहा जाता है कि संगीत की कोई भाषा नहीं होती है और यह सीमातीत होता है ऐसे में विश्व शांति में संगीत महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।
- शांति से सम्बंधित विषयों पर कविता, गद्य एवं कहानी लिखना तथा इसके लिए विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन करना जिससे विद्यार्थियों के अन्दर विश्व शांति की भावना का विकास हो सकता है।
- अवतरणों, पाठ्य पुस्तकों की समीक्षात्मक विश्लेषण करना, साथ ही शांति और विभिन्न स्थानों की विविधता के महत्व को समझने के लिए अवतरणों को पढ़ना और निहितार्थ को समझना मानविकी के द्वारा किया जाता है।
- कला और शिल्प की जानकारी देनी चाहिए तथा दूसरे स्थानों की कला और शिल्प को पाठ्यचर्या में शामिल करना चाहिए। इसके साथ ही कला से सम्बंधित अन्वेषणों और निर्माण का कक्षा में सामूहिक रूप से प्रयास किया जा सकता है क्योंकि विभिन्न समाज कि भिन्न कला तथा शिल्प विविधता को समझने का आधार प्रदान करती है और विश्व को नए दृष्टिकोण से समझने की क्षमता प्रदान करती है। इसके द्वारा विद्यार्थी शांति हेतु भविष्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त कर सकते हैं
- संगीत , दृश्य कला की रचना और मंचन सहयोग जैसे कौशलों को बढ़ा सकता है। संगीत को सुनना और इसकी सराहना अन्य स्थानों के सांस्कृतिक मूल्यों के लिए भी सराहना के भाव को विकसित करता है।
- शांति शिक्षा से सम्बंधित नाटकों का संपादन जिससे विद्यार्थियों के अन्दर समानुभूति की भावना विकसित हो सके।

- मानविकी से जुड़े विषयों का अध्ययन व्यक्ति को पूर्ण और सार्थक जीवन प्रदान करता है।
- मानविकी के अध्ययन के फलस्वरूप विद्यार्थियों में जीवन मूल्यों का विकास संभव हो पता है जो जीवन के प्रत्येक स्तर पर उनकी मदद करते हैं।
- मानविकी के ध्यान के फलस्वरूप हम प्रत्येक स्थिति में अपनी अंतर्दृष्टि का प्रयोग करना सीख जाते हैं।
  - मानविकी मानवीय मूल्यों को समझने में हमारी मदद करता है। विविधता के प्रति सम्मान और शांति हेतु मानवीय मूल्यों को जानना अतिआवश्यक है। हम जब तक मूल्यों को जानेंगे ही नहीं कि एक मानव के रूप में किन गुणों की अपेक्षा हमसे की जाती है तब तक हम उन गुणों को विकसित नहीं कर सकते हैं।
  - मानविकी में और मानविकी के द्वारा हुए अन्वेषणों के माध्यम से हम रचनात्मक एवं आलोचनात्मक तरीके से सोचना, तर्क करना और प्रश्न करना सीखते हैं।

अभ्यास प्रश्न

8. भाषा शांति शिक्षा और विविधता के प्रति आदर का भाव किस प्रकार विकसित करती है ?
9. संगीत शांति शिक्षा और विविधता के प्रति आदर का भाव विकसित करने में किस प्रकार मदद करती है ?

1.7 सारांश

मानविकी के विषयों को उदारवादी कलाओं के भाग के रूप में देखा जाता है। Webster's Dictionary के अनुसार मानविकी "सीखने और शिक्षण की शाखाओं का मुख्य रूप से एक सांस्कृतिक चरित्र होता है।" यह भाषा, साहित्य, कला, संगीत, दर्शन और धर्म पर बल देता है। जैसा कि पूर्व में वर्णित किया गया है कि मानविकी में इतिहास, शास्त्रीय अध्ययन, उदारवादी कलाओं, अंग्रेजी, कला-इतिहास, आधुनिक भाषाओं, दर्शन, धार्मिक अध्ययन एवं लेखन इत्यादि को सम्मिलित करता है। मानविकी में हुए खोजों के द्वारा हम सीखते हैं कि किस प्रकार रचनात्मक और आलोचनात्मक तरीके से हम सोचते हैं, किस प्रकार तर्क करते हैं और प्रश्न पूछते हैं। क्योंकि ये कौशल किसी भी चीज़ के लिए सूझ या अंतर्दृष्टि देते हैं। जैसे कविता हमें नयी अंतर्दृष्टि प्रदान करती है। यही बात पेंटिंग के साथ भी है। मानविकी को कला, विज्ञान सामजिक विज्ञान एवं चिकित्सकीय विषयों से सम्बद्ध करके पढ़ाना चाहिए। इससे मानविकी विषयों के साथ-साथ इन विषयों कि समझ भी बढ़ती है। साथ ही व्यावहारिक जगत में हमारी समझ बढ़ती है कि कक्षा के इतर वास्तविक जीवन में हम प्राप्त ज्ञान का प्रयोग किन परिस्थितियों में और किस प्रकार कर

सकते हैं। मानविकी पर यह दारोमदार रहा है कि कि यह मानवीय मूल्यों जैसे-स्वतंत्रता, विश्वास, परस्पर आदर, समानता इत्यादि को निर्मित और विस्तृत कर सके जो शांति और विविधता के लिए आवश्यक है।

1.8 शब्दावली

1. भाषाविज्ञान: भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन को भाषा विज्ञान के रूप में जाना जाता है।
2. साहित्य: सामान्य तौर पर साहित्य का अर्थ कविताओं, कहानियों, उपन्यास इत्यादि से लगाते हैं। साहित्य एक ऐसा शब्द है जिसकी कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है परन्तु इसे जिस रूप में परिभाषित किया जाता है उनमें सभी लिखित सामग्रियों, रचनाओं, शास्त्र समूहों इत्यादि को शामिल किया जाता है।
3. नृविज्ञान: नृविज्ञान मानव विज्ञान का समग्र विषय है जो मानव के अस्तित्व की समग्रता का विज्ञान है। यह विषय सामाजिक विज्ञान, मानविकी और मानव शरीरशास्त्र के विभिन्न पहलुओं के एकीकरण से सम्बंधित है। विभिन्न कालों में मनुष्य में किस-किस प्रकार के परिवर्तन आये हैं, वर्तमान स्वरूप में आने के लिए मनुष्य किन बदलावों का साक्षी रहा है और उसने किस प्रकार प्रगति की है का सम्पूर्ण अध्ययन नृविज्ञान के अंतर्गत किया जाता है।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मानविकी शब्द की उत्पत्ति पुनर्जागरण लैटिन अभिव्यक्ति Studia humanitatis या "study ऑफ़ humanitas" से हुई है।
2. Blyth (1990) ने मानविकी को परिभाषित करते हुए कहा है कि "प्राथमिक पाठ्यचर्या का वह भाग जो जीवित और स्थान विशेष पर कार्यशील और समूहों और समाजों, भूत और वर्तमान से आपस में जुड़े हुए व्यक्तियों से सम्बंधित है," मानविकी है।
3. मानविकी के अंतर्गत सम्मिलित होने वाले विषयों में आधुनिक भाषायें, शास्त्रीय भाषायें, भाषा शास्त्र, साहित्य, इतिहास, विधिशास्त्र/ न्यायशास्त्र, दर्शनशास्त्र, पुरातत्वविज्ञान, महिला शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, बहुसांस्कृतिक शिक्षा, सांस्कृतिक शिक्षा, फिल्म और मीडिया शिक्षा, कोलोनियल और पोस्ट-कोलोनियल शिक्षा, चिकित्सकीय मानविकी इत्यादि हैं।
4. साहित्य विद्यार्थियों में साहित्यिक रसास्वादन की योग्यता बढ़ाने के साथ ही अन्य मूल्यों जैसे भिन्न-भिन्न भाषाभाषियों के मध्य मित्रता का भाव पैदा करना, नागरिक गुणों और संस्कृति का विकास करना, विद्यार्थियों में लिखने और पढ़ने के प्रति रुचि उत्पन्न करना, विभिन्न भाषाओं को संरक्षित करना एवं उनका प्रसार करने जैसे मूल्यों को विकसित करती है।

5. इतिहास अतीत की सूचनाओं का क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित संकलन है। अध्ययन के विषय के रूप में इतिहास को व्यक्ति, समाज, संस्था या कोई अन्य चीज़ जो समय के साथ परिवर्तित हुई हो के अध्ययन एवं व्याख्या के रूप में लिया जाता है।
6. मानवीय मूल्यों जैसे स्वतंत्रता, विश्वास, परस्पर आदर का भाव और विविधता के प्रति आदर के भाव के लोकप्रिय आधार का निर्माण और विस्तार करना मानविकी की जिम्मेदारी है।
7. मानविकी विषयों को गैर उपयोगी विषय समझा जाता है और परिणामस्वरूप कक्षा शिक्षण के दौरान भी इस विषय को लेकर कम सम्मान रहता है और वे विद्यार्थी भी जो इस विषय को पढ़ते हैं उन्हें स्वयं को लेकर उस स्तर का स्व-सम्मान नहीं दिखा पाते हैं जितना विज्ञान विषयों के विद्यार्थियों में होता है। विज्ञान को मानविकी के तुलना में श्रेष्ठतर विषय के रूप में देखा जाता है। यह प्रचलित धारणा है कि मानविकी विषय मात्र सूचना देने वाले ही विषय हैं जो केवल लिखित पाठों और उनके स्मरण से ही सम्बंधित है। उच्च स्तर की मानसिक क्रियाओं को यह सम्मिलित नहीं करता है।
8. विद्यार्थी अपनी मातृभाषा के साथ-साथ अन्य स्थानीय भाषाओं तथा विदेशी भाषाओं और विदेशी संस्कृतियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर पाते हैं। जो न केवल उनके ज्ञान के क्षेत्र को विस्तृत करता है बल्कि राष्ट्रीयता और अंतर्राष्ट्रीय समझ जैसे गुणों को भी विकसित करता है। विद्यार्थी में अपने देश कि संस्कृति के प्रति गर्व का भाव जागृत होता है और और वह अपने देश की विविधता को समझ पाते हैं। साहित्य के द्वारा उनमें विभिन्न नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों का विकास संभव हो पाता है।
9. संगीत सामंजस्य, मधुरता का निर्माण करता है और विश्व शांति का सन्देश देता है। यह विश्व एकता की बात करता है। संगीत वह माध्यम है जो पूरे विश्व को एक सूत्र में बाँधता है।

1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. NCERT (2005). National Curriculum Framework 2005. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.
2. NCERT (2009). Position Paper National Focus Group on Arts, Music, Dance and Theatre. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (2005)। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005. नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद
4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2009). कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद।

5. Wikipedia, (n|d|). Humanities Retrieved from https://en.wikipedia.org/wiki/Humanities

1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. मानविकी के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने वाले विषयों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए । इन विषयों को पाठ्यचर्या में रखना क्यों आवश्यक है ?
2. मानविकी विषयों से जुड़े मुद्दे और चुनौतियों का वर्णन कीजिए ।
3. शांति शिक्षा एवं विविधता के लिए सम्मान के बीजारोपण के लिए मानविकी में सम्मिलित विषयों का क्या महत्व है?

इकाई 2 - गणित ज्ञान की एक शाखाके रूप में , विद्यालयी पाठ्यचर्या में इसका स्थान, गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियाँ, राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में

Mathematics as a Branch of Knowledge, its Place in the School Curriculum, Issues and Challenges of mathematics Teaching with respect to its Role as a Vehicle of National Development

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 गणित: ज्ञान की एक शाखा
2.4 विद्यालय की पाठ्यचर्या में गणित स्थान
2.5 गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियाँ, राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में
2.6 सारांश
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
2.9 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

गणित मानव ज्ञान की प्राथमिक विधाओं में शामिल है मानव सभ्यता जितना ही प्राचीन है। जैसे जैसे मानव जीवन का विस्तार हुआ वैसे गणित का भी विस्तार हुआ है तथा यह मानव ज्ञान-विज्ञान की एक व्यापक एवं समृद्ध शाखा के रूप में विकसित हुआ। प्रत्येक क्षेत्र चाहे वो वैज्ञानिक, गणितज्ञ, प्रौद्योगिकीविद्, अर्थशास्त्री या कोई और विषय विशेषज्ञ के साथ आम आदमी भी रोजमर्रा के जीवन में गणित की सामान्य जानकारी से लेकर समुन्नत प्रणालियों तक किसी न किसी रूप में गणित का प्रयोग करता हैं।गणित दैनिक जीवन के साथ सर्वव्यापी रूप में समाया हुआ है।

इस इकाई में हम ये जानेंगे की गणित का, ज्ञान की एक शाखा के रूप में क्या महत्त्व है तथा विद्यालय की पाठ्यचर्या में इसका क्या स्थान है? साथ ही साथ हम गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियों, राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में चर्चा कीजिए गे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. गणित का, ज्ञान की एक शाखा के रूप में क्या महत्त्व है यह बता सकेंगे।
2. विद्यालय की पाठ्यचर्या में गणित के स्थान की व्याख्या कर सकेंगे ।
3. गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियों का विश्लेषण कर सकेंगे।
4. राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में चर्चा कर सकेंगे।

2.3 गणित: ज्ञान की एक शाखा

ज्ञान लोगों के भौतिक तथा बौद्धिक सामाजिक क्रियाकलाप की उपज ; संकेतों के रूप में जगत के वस्तुनिष्ठ गुणों और संबंधों, प्राकृतिक और मानवीय तत्त्वों के बारे में विचारों की अभिव्यक्ति है। जागरूकता या विशेष रूप से अधिनियम, तथ्य , या सच्चाई की समझ को ज्ञान कहते हैं ।विभिन्न लोगों ने गणित के महत्त्व को अपनी अपनी तरह से परिभाषित किया है। बीसवीं शताब्दी के प्रख्यात ब्रिटिश गणितज्ञ और दार्शनिक बर्टेंड रसेल के अनुसार ''गणित को एक ऐसे विषय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें हम जानते ही नहीं कि हम क्या कह रहे हैं, न ही हमें यह पता होता है कि जो हम कह रहे हैं वह सत्य भी है या नहीं'' । पुरातन काल से ही सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान में गणित का स्थान सर्वोपरि रहा है-

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा। तथा वेदाङ्गशास्त्राणां गणितं मूर्ध्नि स्थितम्॥ (वेदांग ज्योतिष)

अर्थात जिस प्रकार मोरों में शिखा और नागों में मणि का स्थान सबसे उपर है, उसी प्रकार सभी वेदांग और शास्त्रों मे गणित का स्थान सबसे ऊपर है। महान गणितज्ञ गाउस ने कहा था कि "गणित सभी विज्ञानों की रानी है।" गणित, विज्ञान और प्रौद्योगिकी का एक महत्वपूर्ण उपकरण (टूल) है। भौतिकी, रसायन विज्ञान, खगोल विज्ञान आदि गणित के बिना नहीं समझे जा सकते। ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो वास्तव में गणित की अनेक शाखाओं का विकास ही इसलिये किया गया कि प्राकृतिक विज्ञान में इसकी आवश्यकता आ पड़ी थी। "गणित एक ऐसा उपकरण है जिसकी शक्ति अतुल्य है और जिसका उपयोग सर्वत्र है ; एक ऐसी भाषा जिसको प्रकृति अवश्य सुनेगी और जिसका सदा वह उत्तर देगी " प्रो. हाल ।

प्रसिद्ध जैन गणितज्ञ महावीराचार्य के अनुसारबहुभिर्प्रलापैः किम्, त्रयलोके सचरारे। यद् किंचिद् वस्तु तत्सर्वम्,गणितेन् बिना न हि ॥

अर्थात बहुत प्रलाप करने से क्या लभ है ? इस चराचर जगत में जो कोई भी वस्तु है वह गणित के बिना नहीं है। उसको गणित के बिना नहीं समझा जा सकता।

गैलिलियो के अनुसार "ज्यामिति की रेखाओं और चित्रों में हम वे अक्षर सीखते हैं जिनसे यह संसार रूपी महान पुस्तक लिखी गयी है।"

हमें अपने जीवन में हर कदम पैर गणित का इस्तेमाल करना पड़ता हैं - उस वक्त जब समय जानने के लिए हम घड़ी देखते हैं, अपने खरीदे गए सामान या खरीदारी के बाद बचने वाली रेजगारी का हिसाब जोड़ते हैं या फिर फुटबाल टेनिस या क्रिकेट खेलते समय बनने वाले स्कोर का लेखा-जोखा रखते हैं।

व्यवसाय और उद्योगों से जुड़ी लेखा संबंधी संक्रियाएं गणित पर ही आधारित हैं। बीमा (इंश्योरेंस) संबंधी गणनाएं तो अधिकांशतया ब्याज की चक्रवृद्धि दर पर ही निर्भर है। जलयान या विमान का चालक मार्ग के दिशा-निर्धारण के लिए ज्यामिति का प्रयोग करता है। भौगोलिक सर्वेक्षण का तो अधिकांश कार्य ही त्रिकोणमिति पर आधारित होता है। यहां तक कि किसी चित्रकार के आरेखण कार्य में भी गणित मददगार होता है, जैसे कि संदर्भ (पर्सपेक्टिव) में जिसमें कि चित्रकार को त्रिविमीय दुनिया में जिस तरह से इंसान और वस्तुएं असल में दिखाई पड़ते हैं, उन्हीं का तदनुरूप चित्रण वह समतल धरातल पर करता है।

संगीत में स्वरग्राम तथा संनादी (हार्मोनी) और प्रतिबिंदु (काउंटरपाइंट) के सिद्धांत गणित पर ही आश्रित होते हैं। गणित का विज्ञान में इतना महत्व है तथा विज्ञान की इतनी शाखाओं में इसकी उपयोगिता है कि गणितज्ञ एरिक टेम्पल बेल ने इसे 'विज्ञान की साम्राज्ञी और सेविका' की संज्ञा दी है। किसी भौतिकविज्ञानी के लिए अनुमापन तथा गणित का विभिन्न तरीकों का बड़ा महत्व होता है। रसायनविज्ञानी किसी वस्तु की अम्लीयता को सूचित करने वाले पी एच (pH) मान के आकलन के लिए लघुगणक का इस्तेमाल करते हैं। कोणों और क्षेत्रफलों के अनुमापन द्वारा ही खगोलविज्ञानी सूर्य, तारों, चंद्र और ग्रहों आदि की गति की गणना करते हैं। प्राणी-विज्ञान में कुछ जीव-जन्तुओं के वृद्धि-पैटर्नों के विश्लेषण के लिए विमीय विश्लेषण की मदद ली जाती है।उच्च गतिवाले संगणकों द्वारा गणनाओं को दूसरी विधियों द्वारा की गई गणनाओं की अपेक्षा एक अंश मात्र समय के अंदर ही सम्पन्न किया जा सकता है। इस तरह कम्प्यूटरों के आविष्कार ने उन सभी प्रकार की गणनाओं में क्रांति ला दी है जहां गणित उपयोगी हो सकता है। जैसे-जैसे खगोलीय तथा काल मापन संबंधी गणनाओं की प्रामाणिकता में वृद्धि होती गई, वैसे-वैसे नौसंचालन भी आसान होता गया तथा क्रिस्टोफर कोलम्बस और उसके परवर्ती काल से मानव सुदूरगामी नए प्रदेशों की खोज में घर से निकल पड़ा। साथ ही, आगे के मार्ग का नक्शा भी वह बनाता गया। गणित का उपयोग बेहतर किस्म के समुद्री जहाज, रेल के इंजन, मोटर कारों से लेकर हवाई जहाजों के निर्माण तक में हुआ है। राडार प्रणालियों की अभिकल्पना तथा चांद और ग्रहों आदि तक राकेट यान भेजने में भी गणित से काम लिया गया है।

अभ्यास प्रश्न

1. संगीत में स्वरग्राम तथा संनादी (हार्मोनी) और प्रतिबिंदु (काउंटरपाइंट) के सिद्धांत गणित पर आश्रित होते हैं। । (सत्य/ असत्य)
2. गैलिलियो ने गणित को 'विज्ञान की साम्राज्ञी और सेविका' की संज्ञा दी है। (सत्य /असत्य)
3. चित्रकार के आरेखण कार्य में भी गणित मददगार होता है । (सत्य/असत्य)
4. गणित को ज्ञान की उपयोगी शाखा के रूप में देखना ज़रूरी नहीं है । (सत्य/ असत्य)

2.4 विद्यालय की पाठ्यचर्या में गणित स्थान

प्रारंभ से ही गणित का विद्यालय पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान रहा है।गणित सभी विज्ञानो की जननी है। दुनिया गणित के बिना गति नही कर सकती ।प्रकृति में कई गणितीय अवधारणाओं, पैटर्न, कानून, आदि को देखा जा सकता है। गणित मानव रोजमर्रा की जिंदगी के विभिन्न पहलुओं से संबंधित जरूरतों से सम्बंधित है । प्लेटो का मानना था की जो व्यक्ति गणित से अनभिज्ञ है उन्हें विद्यालय में प्रवेश नहीं मिलना चहिये। उन्होंने तो अपने दरवाज़े पर लिख रखा था "जो गणित से अनभिज्ञ है उसे मेरे दरवाजे में प्रवेश नहीं करना चाहिए"। बरनार्ड शॉ के अनुसार "तार्किक चिंतन के लिए गणित से शक्तिशाली माध्यम है"।इनके अलावा भी कई शिक्षाविद ने विद्यालय के पाठ्यक्रम में गणित के महत्त्व को स्वीकारा है। इनका भी ये मानना है की गणित शिक्षा के बिना व्यक्ति का बौद्धिक और सांस्कृतिक विकास असंभव है। कोठारी आयोग ने भी वर्तमान शिक्षा में गणित के महत्त्व को स्वीकारा है। इस आयोग में उल्लेखित है की " "वैज्ञानिक दृष्टि अपनाने का मुख्य लक्षण वस्तुओं को मात्रात्मक रूप से अभिव्यक्त करना है। इसलिए आधुनिक शिक्षा में गणित का स्थान अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। भौतिक विज्ञान की प्रगति में इसका महत्वपूर्ण योगदान है , साथ ही जैविक विज्ञान के विकास में भी अधिकाधिक रूप से इसका प्रयोग किया जा रहा है । इस शताब्दी में स्वचालन विज्ञान और साइबरनेटिक्स के आगमन से नई वैज्ञानिक औद्योगिक क्रांति जा जन्म हुआ है और इसलिए गणित के अध्ययन पैर ध्यान देना और अनिवार्य हो गया है। इस विषय का उचित आधार स्कूलों में रखना चहिये।" इसी कारणवश गणित कक्षा १० तक की अनिवार्य शिक्षा में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । नयी शिक्षा नीति में भी गणित का महत्वपूर्ण स्थान है।

भारत के ज्यादातर राज्यों में गणित माध्यमिक या उच्च प्राथमिक स्तर तक एक अनिवार्य विषय है । जहाँ छात्र मिडिल या जूनियर हाई स्कूल के बाद तकनिकी शिक्षा के क्षेत्र में जाते हैं वहां भी गणित एक अनिवार्य विषय है। राष्ट्रीय स्तर के विद्यालयों जैसे केंद्रीय विद्यालय तथा सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ़ सेकण्डरी एजुकेशन का पाठ्यक्रम विद्यालयों में भी गणित हाई स्कूल तक पाठ्यचर्या का एक अनिवार्य विषय है। उच्च शिक्षा में गणित एक वैकल्पिक विषय बन जाता है । अर्थात सिर्फ वही छात्र गणित अध्ययन करते हैं जिसे इसमें रूचि हो या फिर उच्च शिक्षा या तकनिकी शिक्षा में इसकी ज़रुरत हो।

यहाँ ये चर्चा करना भी ज़रूरी है की आखिर गणित को विद्यालय पाठ्यक्रम में विशेष स्थान क्यों दिया। जैसे मिडिल स्कूल तक गणित को एक अनिवार्य विषय बनाना। इसका उत्तर है जीवन में गणित की उपयोगिता। नेपोलियन ने सही कहा था की गणित के ज्ञान के बिना किसी राष्ट्र का विकास संभव नहीं है। शिक्षा का लक्ष्य छात्रों को रचनात्मक जीवन के लिए तैयार करना है और इसके लिए ज़रूरी है

i. ज्ञान और उन कुशलताओं का विकास करना जो छात्रों को व्यवकारिक जीवन में योगदान दे।
ii. छात्रों के बौद्धिक और तार्किक विकास के लिए गणित की शिक्षा ज़रूरी है। इसकी उनका जीवन तर्कपूर्ण और अनुशासित होगा जो सफलता के लिए काफी जरूरी है।
iii. साथ ही साथ शिक्षा का उद्देश्य छात्रों में ऐसी वांछित अभिवृत्तियों और आदर्शों का विकास करना भी है जो उसे अच्छा नागरिक और सामाजिक उपयोगी बनाए।

गणित इन सभी गुणों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जीवन को व्यवस्थित बनाने के लिए व्यक्ति को समय, धन और सामाजिक क्रियाओं को नियंत्रित आवश्यक है और इसमें गणित का ज्ञान उपयोगी है। साथ ही साथ गणित मस्तिष्क के अनुशासन के लिए भी ज़रूरी है क्योंकि गणित से तार्किक बुद्धि का विकास होता है। गणित की विशेषताएँ निम्नलिखित है :

- सरलता - गणित अपनी विचारों या तथ्यों को सरलता से प्रस्तुत मदद करती है जिससे लोग हमारी बात सकें।
- परिशुद्धता - गणित तर्क, चिंतन और निर्णय पैर आधारित है और ये सिद्धांत जीवन के लिए बहुत आवश्यक है।
- परिणामों की निश्चितता - गणित में व्यक्तिक त्रुटि और व्यक्तिनिष्ठा की कोई जगह नहीं है। इसमें उत्तर या तो सही होता या गलत। छात्र अपनी म्हणत और लगन से अन्य प्रकिया द्वारा खुद ही परिणामों का सत्यापन कर सकता है जो की उनके आत्मविश्वास को बढ़ता है। आत्मविश्वास जीवन में सफलता के लिए अति आवश्यक है।
- मौलिकता - गणित मौलित चिंतन पैर आधारित है और इसमें रटन्त विद्या की जगह नहीं है। गणित के प्रश्न का हल छात्रों में तार्किक क्षमता को विकसित है। इससे छात्र आगे चलकर जीवन में आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए तैयार होता है। गणित विषय गया ज्ञान अन्य विषयों के लिए भी ज़रूरी है जो की इस चित्र से स्पष्ट होता है

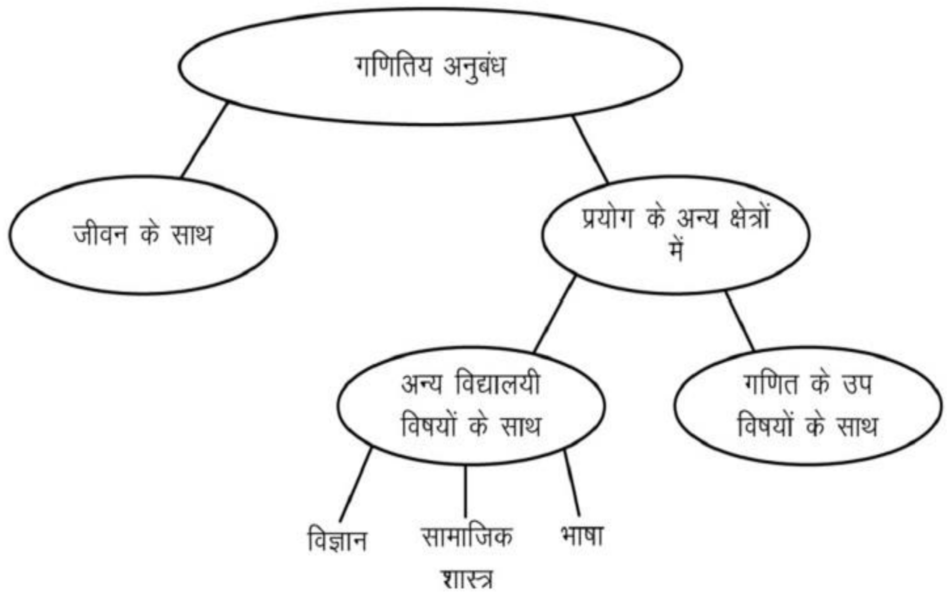

उपरोक्त बिंदुओं से स्पष्ट है की गणित का विद्यालय पाठ्यक्रम में विशेष स्थान है।

अभ्यास प्रश्न

5. गणित उच्च शिक्षा का एक अनिवार्य विषय है। (सत्य/ असत्य)
6. छात्रों के बौद्धिक और तार्किक विकास के लिए गणित की शिक्षा ज़रूरी है। (सत्य /असत्य)
7. चित्रकार के आरेखण कार्य में भी गणित मददगार होता है। (सत्य/असत्य)
8. गणित को ज्ञान की उपयोगी शाखा के रूप में देखना ज़रूरी नहीं है। (सत्य/ असत्य)

2.5 गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियाँ, राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में

नेपोलियन ने कहा था "गणित के साथ राज्य की समृद्धि जुडी हुई है"। किसी भी राष्ट्र के विकास को गणित से अलग करके नहीं सोचा जा सकता है। मानव अस्तित्व के लिए गणित के महत्व को कोई नकार नहीं सकता। गणित इंसान के रोजमर्रा की जिंदगी की गतिविधियों से जुडी हुई है। गणित रोजमर्रा की की समस्याओं को सुलझाने का एक आवस्यक यंत्र है। गणित एक महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि यह व्यक्ति के तर्क, समस्या को सुलखन का कौशल या यूँ कहें की सोचने की शक्ति को बढ़ता है। राष्ट्र का विकास उसके हर नागरिक के विकास से जुड़ा है और इसलिए गणित एक महत्वपूर्ण योगदान देता है। गणित विषय

की दैनिक जीवन में उपयोगिता वाले पहलू को देखा जाए तो ऐसा कोई कार्य नजर ही नहीं आता, जहाँ बिना गणित के कुछ सम्भव हो पा रहा हो। मजदूर, किसान, दुकानदार, नौकरी करने वाला और चाहे कोई भी महिला-पुरूष, बच्चे जिसने शिक्षा प्राप्त की हो या नहीं की हो, सभी अपनी जिन्दगी में गणित का बखूबी से उपयोग करते दिखलाई पड़ते हैं। एक किसान को अपने खेत में हुई फसल की मात्रा का पूर्व निर्धारण करना हो, खेत में बीजारोपण के समय लगने वाले बीज की मात्रा का पता लगाना हो, फसल काटने के दौरान समय मजदूरी का निर्धारण करना हो या उतनी फसल के लिए आवश्यक बोरियों की संख्या का पता लगाना हो वह सटीकता के साथ लगा लेता है। घर पर किसी भी दैनिक क्रियाकलाप को ले लें, चाहे वह नहाने धोने का कार्य हो, बच्चों का खेलना हो, रसोई का कार्य करना हो या बाजार में खरीददारी हो सभी कार्यो में गणितीय कौशलों (अन्दाजा, अनुमान, समस्या समाधान के विभिन्न मॉडल सोचना, सादृष्यीकरण, गणितीय सम्प्रेषण, निरूपण, सामान्यीकरण आदि) का उपयोग किया जाता है। जिसने गणित की औपचारिक शिक्षा नहीं ली हो वो मौखिक और जिसने औपचारिक शिक्षा ली है वो मौखिक और लिखित दोनों ही रूपों में इस्तेमाल कर पाते हैं।

राष्ट्रीय विकास के आवश्यक सभी क्षेत्रों में गणित के योगदान

- विज्ञान और तकनीक - विज्ञान और प्रौद्योगिकी किसी भी राष्ट्र के विकास की नींव है और गणित को विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा कहा जाता है। इसलिए गणित की शिक्षा राष्ट्रीय विकाश के लिए बहुत ही आवश्यक है। गणित की ज़रुरत एकीकृत विज्ञान जैसे की भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान और इंजीनियरिंग पाठ्यक्रमों के लिए ज़रूरी है को की हमें प्रौद्योगिकी की तरफ ले जाता है।
- शेयर बाजार - गणित शेयर बाजार का एक अभिन्न अंग है। सभी गणना जैसे प्रबंधन शुल्क, निवेश की रणनीति , डीपीएस, डीवाई, ईपीएस, बी.वी वगैरह में गणित का इस्तेमाल होता है।
- बैंकिंग क्षेत्र - बैंकिंग प्रणाली किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बैंक उत्पादक निवेश के लिए संड़ाधन जुटा कर हर अर्थव्यवस्था में विकास में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। बैंकिंग व्यवस्था में गणित का योगदान किसी से छुपा नहीं है।
- चिकित्सा - गणित चिकित्सा के क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण अंग है। गणित का ज्ञान दावा की खुराक, सांद्रता जाँच इत्यादि के आवश्यक है।
- मौसम पूर्वानुमान - मौसम का पूर्वानुमान सामान्य और विशिष्ट मौसम घटना के बारे में भविष्यवाणी करने का विज्ञान है जो की एक दिए गए क्षेत्र के लिए मौसम संबंधी कारकों के आंकलन पर आधारित होता है। ये पूर्वानुमान किसी राष्ट्र को किसी भी हालात, प्राकृतिक आपदा जैसे कंपन, भूकंप , बाढ़ आदि की जानकारी देकर उन स्थिति से निपटने के लिए तैयार

करता है। QG-ओमेगा समीकरण, गणना , अंतर समीकरण, आंशिक विभेदक समीकरण इत्यादि का इस्तेमाल करके मौसम पूर्वानुमान किया जाता है।

- छोटे और मध्यम स्तर के उद्यम- लघु और मध्यम स्तर के उद्योग किसी राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। बढ़ई मेसन, प्लंबर , टेलर इत्यादि सभी अपने काम को पूरा करने में गणित का सहारा लेते हैं। गणित का ज्ञान छोटे और मध्यम स्तर के उद्योंगों के लिए बहुत ज़रूरी है ज़रूरी है।
- भविष्य की आबादी का अनुमान लगाया है और जनसंख्या के प्रभाव को जानने के लिए गणितीय उपकरण
- गणितीय उपकरण जलवायु परिवर्तन / ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को दिखाने के लिए
- गणितीय मॉडल पेड़, मौसम और जमीन की सतह की प्रकृति के प्रकार के आधार पर जंगल की आग के प्रसार को दिखाने के लिए
- आर्थिक विकास, जन साक्षरता, गरीबी और कुपोषण के उन्मूलन के लिए गणित का योगदान

गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियाँ, राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में

राष्ट्रीय विकास के प्रत्येक पहलू में गणित सहायक हो सकता है । सम्यक तरीके से इस विषय को उपयोग करके इससे तार्किक क्षमता वाले मानव संसाधन भी तैयार किये जा सकते हैं। समाज के सांस्कृतिक , भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक सभी विकास के माध्यम के रूप में गणित अपनी भूमिका निभा सकता है। परन्तु इस विषय का भरपूर प्रयोग नहीं क्या जा पा रहा हैं । इसका कारण दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली हैं । स्कूलों में गणित शिक्षा का विश्लेषण किया जाए तो बहुत सारे मुद्दे सामने आते हैं जिनमें से कुछ निम्वत हैं :

1. **गणित विषय से भय:** इसे गणित की चिंता और 'मैथ पफोबिया' पदों से भी जाना जाता हैं विद्यालय में पढ़ाया जाने वाले विषयों में गणित का स्थान सर्वोपरी है जिससे की विद्यार्थी भय तथा असफलता महसूस करते हैं । इस भय का विश्लेषण किया जाए तो मिलता है की गणित की अमूर्त प्रकृति , प्रतीकात्मक भाषा का प्रभुत्व। गणितीय प्रतीकों को बिना समझे प्रयुक्त किया जाता है जिससे बच्चों पर नीरसता और घबराहट हावी होने लगती है और वे गणित से भागने लगते हैं । संचयी पक्रृति का अर्थ है की गणित का एक संप्रत्यय दूसरे संप्रत्यय पर निर्भर करता है जैसे यदि विद्यार्थी को दशमलव में कठिनाइ होती है तो प्रतिशत भी कठिन लगेगा । यदि प्रितशत कठिन लगता है तो बीजगणित में भी कठिनाइ होगी। और इसी प्रकार गणित के अन्य प्रकरण भी कठिन लगेंगे।
2. **गणित के सवालों के प्रति धारणा :** गणित के बारे में एक आम एवं मिथक धारणा है कि इसके सवालों का करने का एक ही तरीका होता है और सिर्फ और सिर्फ वही तरीका सही होता

है। उस तरीके में महारत हासिल करने का भी एक ही तरीका होता है कि उस तरीके का अभ्यास तब तक करते रहना चाहिए जब तक एक निश्चित प्रक्रिया को पूरा करते हुए अपने-आप न होने लगे। इसमें बच्चों को उस तरीके के पदों को एक खास क्रम में याद रखना पड़ता और इस्तेमाल करते वक्त उसी क्रम में उसे लागू करना होता है। उस क्रम में थोडा भी इधर उधर होने पर उस तरीके से मिलने वाले जवाब में गड़बड़िया हो जाती है ।उसी प्रक्रिया को बारंबार करते और दोहराते रहने से स्वाभाविक तौर पर बच्चे उबन महसूस करता है क्योंकि उसमें समझने की गुंजाइश नहीं के बराबर होती है।

3. **अध्यापक द्वारा शिक्षण सहायक सामग्री उपयोग न करना** – शिक्षण सहायक सामग्री विषय वस्तु को रोचक ढंग से प्रस्तुत करने में सहायता प्रदान करती हैं । कुछ अध्यापक शिक्षण सामग्री की उपयोग गणित की कक्षा में नहीं या नाममात्र करते हैं । जो की छात्रों की शिक्षा में बढ़ी बाधक बन जाती जा ती है। गणित का ज्ञान तर्क पर निर्भर करता है की रटने पर। इसलिए बिना शिक्षण सामग्री उपयोग किये गणित की शिक्षा मुश्किल होती है ।
4. **कक्षा का मनोवैज्ञानिक वातावरण:** गणित की अधिगम अध्यापक बच्चों के साथ कैसे काम करते हैं इस बात पर भी निर्भर करेगा। कक्षा का वातावरण ऐसा होना चाहिए कि बच्चे उसमें सहभागी हों, अपने विचार व्यक्त कर सकें, गलतियाँ कर सकें और उनके बारे में बिना किसी संकोच के बात कर सकें। ऐसे वातावरण में ही बच्चों के गणित के साथ स्वस्थ एवं गहन रिश्ते कायम हो सकते हैं । अध्यापक को बच्चों की सहभागिता में सहायक होने की प्रक्रियाएँ रचनी चाहिए जिससे की उनसे संवाद स्थापित हो सके। गणित की कक्षा के प्रमुख पक्ष की तरह इस बात को गहराई से स्वीकारना जरूरी है कि बच्चे गणित की धारणाओं तथा अवधारणाओं को अपनी पूर्वधारणाओं और अनुभवों के साथ समाहित करके और सक्रिय भागीदारी की प्रक्रिया में उन्हें संशोधित करके विकसित करते हैं।
5. **कठोर पाठ्यचर्या :** गणित पाठ्यचर्या गणितीय संप्रत्ययों को समझने और आत्मसात करने से ज्यादा जोर विधियों ओर सूत्रों के ज्ञान को देती है जिससे की विद्यार्थियों में चिंता तथा निराशा बढ़ती है। पाठ्यचर्या लचीली नही है और ना ही कक्षा के सभी विद्यार्थियों की आवश्कता की पूर्ति करने वाली है बच्चों के लिए यह पाठ्यचर्या परीक्षा पास करने के लिए तथ्यों के भंडार की तरह है
6. **गणित विषय पर एकाधिकार की कमी -** अध्यापक के लिए बहुत ज़रूरी है की वो खुद विषय रखे तभी छात्रों के सवालों का उत्तर देना संभव होगा। विषय पर अध्यापक की पकड़ न होना बड़ी बाधक का काम करता है और छात्रों की उस विषय में रूचि कम हो जाती है।
7. **अध्यापक का गणित शिक्षण में दक्ष न होना** - अध्यापक को हमेसा शिक्षण की नयी नयी विधियों से अवगत रहना चाहिए क्योंकि उसके बिना कक्षा नीरसता आ जाती है । इसलिए अध्यापक के लिए ज़रूरी है की हमेशा गणित के सेमिनार, कार्यगोष्ठी वगैरह में भागीदारी रखनी चाहिए।

8. **गणित के प्रति माहौल -** समाज और शिक्षक प्रायः उसी बच्चे को होनहार मानते हैं जो संख्याओं, संक्रियाओं और सूत्र याद कर उसमें मान रखकर सवाल को तीव्र गति से हल करने में महारत हासिल करना भर सीख जाते हैं। जो बच्चे इन दक्षताओं को हासिल नही कर पाते हैं उन पर मन्द बुद्धि, कुछ नहीं कर पाने के लेबल लगाना भी शुरू किया जाता। इसका परिणाम ये होता है की छात्रों के प्रति रूचि घटती जाती है।
9. **गणित के प्रति सामाजिक नजरिये -** छात्राओं से कहा जाने लगता है कि यह विषय लड़कियों के बस का नहीं है। गणित पर लड़कों का ही हक होता है ऐसा नहीं है लड़कियाँ भी उतना ही गणित सीख सकती हैं जितना लड़के सीख सकते हैं। गणित विषय के इस सामाजिक पहलू पर बात की जानी चाहिए। महिलाओं द्वारा गणित में किए गए योगदान, बाजार, घर पर महिलाओं द्वारा की जाने वाली गणित की गतिविधियों पर बातचीत होनी ही चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

9. गणित पर लड़कों का ही हक होता है ।(सत्य/असत्य)
10. अध्यापक द्वारा शिक्षण सामग्री उपयोग न करना गणित शिक्षण की एक बड़ी बाधा है । (सत्य/असत्य)
11. गणित चिकित्सा के क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण अंग है (सत्य/असत्य)
12. गणित शिक्षा एक किसान के लिए आवश्यक नहीं है (सत्य/असत्य)
13. डीपीएस, डीवाई, ईपीएस, बी.वी शेयर बाजार में इस्तेमाल होने वाले शब्द हैं। (सत्य/असत्य)

2.6 सारांश

ज्ञान मनुष्य के भौतिक तथा बौद्धिक सामाजिक क्रियाकलाप की उपज, संकेतों के रूप में जगत के वस्तुनिष्ठ गुणों और संबंधों, प्राकृतिक और मानवीय तत्त्वों के बारे में विचारों की अभिव्यक्ति है। जागरूकता या विशेष रूप से अधिनियम, तथ्य , या सच्चाई की समझ को ज्ञान कहते हैं। विभिन्न लोगों ने गणित के महत्त्व को अपनी अपनी तरह से परिभाषित किया है। गणित, विज्ञान और प्रौद्योगिकी का एक महत्वपूर्ण उपकरण (टूल) है। भौतिकी, रसायन विज्ञान, खगोल विज्ञान आदि गणित के बिना नहीं समझे जा सकते। ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो वास्तव में गणित की अनेक शाखाओं का विकास ही इसलिये किया गया कि प्राकृतिक विज्ञान में इसकी आवश्यकता आ पड़ी थी।

प्रारंभ से गणित का विद्यालय पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कोठारी आयोग ने भी वर्तमान शिक्षा में गणित के महत्त्व को स्वीकार है। आधुनिक शिक्षा में गणित का स्थान अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। भौतिक विज्ञान की प्रगति में इसका महत्वपूर्ण योगदान है साथ ही जैविक विज्ञान के विकास में भी

अधिकाधिक रूप से इसका प्रयोग किया जा रहा है । इस शताब्दी में स्वचालन विज्ञान और साइबरनेटिक्स के आगमन से नई वैज्ञानिक औद्योगिक क्रांति जा जन्म हुआ है और इसलिए गणित के अध्ययन पैर ध्यान देना और अनिवार्य हो गया है। इस विषय का उचित आधार स्कूलों में रखना चहिये। भारत के ज्यादातर राज्यों में गणित माध्यमिक या उच्च प्राथमिक स्तर तक एक अनिवार्य विषय है । जहाँ छात्र मिडिल या जूनियर हाई स्कूल के बाद तकनिकी शिक्षा के क्षेत्र में जाते हैं वहां भी गणित एक अनिवार्य विषय है। राष्ट्रीय स्तर के विद्यालयों जैसे केंद्रीय विद्यालय तथा सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ़ सेकण्डरी एजुकेशन का पाठ्यक्रम विद्यालयों में भी गणित हाई स्कूल तक पाठ्यचर्या का एक अनिवार्य विषय है। उच्च शिक्षा में गणित एक वैकल्पिक विषय बन जाता है । अर्थात सिर्फ वही छात्र गणित अध्ययन करते हैं जिसे इसमें रूचि हो या फिर उच्च शिक्षा या तकनिकी शिक्षा में इसकी ज़रुरत हो। गणित इन सभी गुणों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । जीवन को व्यवस्थित बनाने के लिए व्यक्ति को समय, धन और सामाजिक क्रियाओं को नियंत्रित आवश्यक है और इसमें गणित का ज्ञान उपयोगी है। साथ ही साथ गणित मस्तिष्क के अनुशासन के लिए भी ज़रूरी है क्योंकि गणित से तार्किक बुद्धि का विकास होता है। मौलिकता - गणित मौलित चिंतन पैर आधारित है और इसमें रटन्त विद्या की जगह नहीं है। गणित के प्रश्न का हल छात्रों में तार्किक क्षमता को विकसित है। इससे छात्र आगे चलकर जीवन में आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए तैयार होता है।

किसी भी राष्ट्र के विकास को गणित से अलग करके नहीं सोचा जा सकता है। मानव अस्तित्व के लिए गणित के महत्व को कोई नकार नहीं सकता। गणित इंसान के रोजमर्रा की जिंदगी की गतिविधियों से जुडी हुई है । राष्ट्रीय विकास के आवश्यक सभी क्षेत्रों में गणित के योगदान है जैसे विज्ञान और तकनीक, शेयर बाज़ार, बैंकिंग, चिकित्सा, मौसम पूर्वानुमान, छोटे और मध्यम स्तर के उद्यम इत्यादि । अध्यापक द्वारा शिक्षण सामग्री उपयोग न करना,गणित विषय पर एकाधिकार की कमी ,अध्यापक का गणित विषय में दक्ष न होना ,गणित के प्रति माहौल ,गणित के प्रति सामाजिक नजरिये जैसी गणित शिक्षण के कुछ मुद्दे तथा चुनौतियों हैं

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. असत्य
6. सत्य
7. सत्य
8. असत्य

9. असत्य
10. सत्य
11. सत्य
12. असत्य
13. सत्य

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005, रा.शै.अनु.प्र.प., 2006
2. गणित शिक्षण, राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्रा, रा. शै. अनु. प्र. प., 2006
3. गणित का पाठ्यक्रम, रा. शै. अनु. प्र. प., 2006

2.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. गणित का, ज्ञान की एक शाखा के रूप में महत्त्व की व्याख्या कीजिए।है
2. "विद्यालय की पाठ्यचर्या में गणित का केन्द्रीय स्थान है" इस कथन की तर्कसंगत व्याख्या कीजिए।
3. गणित शिक्षण के मुद्दे तथा चुनौतियों का विश्लेषण कीजिए ?
4. राष्ट्रीय विकास के एक माध्यम के रूप में इसकी भूमिका के संबंध में चर्चा कीजिए।

इकाई 3 - ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान
3.4 विज्ञान का स्कूल पाठ्यक्रम में स्थान
3.5 विज्ञान शिक्षण की समस्याएं एवम चुनौतियाँ :वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अन्तनिर्विष्ट करने में, इसकी भूमिका के सन्दर्भ में एवम सामाजिक आर्थिक विकास के वाहक के रूप में
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

आज का युग विज्ञान और तकनीकी का युग है। पिछले कुछ वर्षों में विज्ञान ने हमारे जीवन के लगभग हर क्षेत्र में परिवर्तन ला दिया है। आज हम आकाश को छूने, चाँद, तारों तक पहुँचने की कल्पना को साकार रूप प्रदान कर सकने में सक्षम हुए हैं, यह सब विज्ञान के कारण ही संभव हो पाया है। विज्ञान एवम वैज्ञानिक निरंतर हमारे सुख सुविधाओं की बढ़ोतरी करने में प्रयासरत हैं। इस इकाई में हम ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान, विज्ञान का स्कूल पाठ्यक्रम में स्थान, विज्ञान शिक्षण की समस्याएं एवम चुनौतियाँ :वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अन्तनिर्विष्ट करने में, इसकी भूमिका के सन्दर्भ में एवम सामाजिक आर्थिक विकास के वाहक के रूप में, के विषय में विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

1. ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को किस प्रकार प्रभावित कर रहा है, यह समझ सकेंगे।
2. विज्ञान का हमारे स्कूल पाठ्यक्रम में क्या स्थान है, इसका विस्तारपूर्वक वर्णन कर सकेंगे।

3. विज्ञान के अध्ययन के फलस्वरूप छात्रों के व्यक्तित्व में होने वाले परिवर्तनों के विषय में विस्तारपूर्वक वर्णन कर सकेंगे ।
4. वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अन्तनिर्विष्ट करने तथा सामाजिक आर्थिक विकास के वाहक के रूप में, विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में आने वाली समस्याओं और चुनौतियों को समझ सकेंगे ।
5. विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में आने वाली समस्याओं और चुनौतियों को दूर करने हेतु क्या प्रयास किये जा सकते हैं , इसका विस्तारपूर्वक वर्णन कर सकेंगे।

3.3 ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान

मनुष्य का मन स्वभाव से ही जिज्ञासु होता है, जो कुछ भी हमारे आस पास , हमारे घर या समाज में घटित होता है, उसके बारे में जानने की हमारी जिज्ञासा सहज और स्वाभाविक ही होती है । उदाहरण के लिए वर्षा क्यों होती है? आसमान का रंग नीला क्यों होता है? कम्पयूटर के माध्यम से कैसे दूर बैठे व्यक्तियों को देखा या सुना जाता है ? इस प्रकार के अनेक प्रश्न निरंतर हमारे मस्तिष्क में आते ही रहते हैं । इन सभी प्रश्नों के सही उत्तर प्राप्त करने और सत्य की खोज में लगे रहने के कार्य को विज्ञान का नाम दिया जा सकता है । विज्ञान अर्थात Science शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के शब्द Scire (To know) से हुई है, जिसका अर्थ है जानना । इस प्रकार विज्ञान शब्द का अर्थ उस ज्ञान से है, जो हमारी बुद्धि द्वारा ग्रहण किया जाये तथा इस प्रकार ग्रहण किया गया ज्ञान शब्दों के माध्यम से दूसरों तक प्रेषित किया जाये ।

सामान्य अर्थ में "सामान्य ज्ञान का संगठित रूप विज्ञान है। अथवा "ज्ञान का क्रमबद्ध रूप विज्ञान है ।"

आइंस्टीन के अनुसार "हमारी ज्ञान अनुभूतियों की अस्त व्यस्त विभिन्नता को एक तर्कपूर्ण विचार प्रणाली निर्मित करने के प्रयास को विज्ञान कहते हैं।"

ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत एवम व्यापक है । भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, , चिकित्सा विज्ञान, अन्तरिक्ष विज्ञान , कृषि विज्ञान, जैव प्रोधोगिकी विज्ञान, रक्षा एवम परमाणु उर्जा, आदि क्षेत्रों में जो भी कुछ आज उपलब्ध है, वह विज्ञान की ही देन है । विज्ञान के क्षेत्र में होने वाली प्रगति एवम विकास ने ज्ञान की एक शाखा के रूप में मानव जीवन के लगभग हर एक क्षेत्र को जिस तरह से प्रभावित किया है, यहाँ पर हम उसकी चर्चा करेंगे-

1. **दैनिक जीवन में उपयोग** - भौतिक विज्ञान के अंतर्गत दो उपविषय भौतिकी एवम रसायन शास्त्र आते हैं। भौतिक विज्ञान के माध्यम से छात्रों को विभिन्न पदार्थो के गुण धर्मो का अध्ययन करने , उनका विश्लेषण संश्लेषण करके, उनकी रचना और उनके पारस्परिक प्रभावों से अवगत होने का अवसर प्राप्त होता है । जबकि जीव विज्ञान के अंतर्गत तीन उपविषय जंतु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान एवम सूक्ष्म जैविकी आते हैं । जीव विज्ञान जीवों एवम वनस्पतियों के गुण धर्म एवम विशेषताओं के बारे में क्रमबद्ध अध्ययन करने में सहायता करता है । जीव विज्ञान के ज्ञान के कारण ही हम रेशम के कीड़ों से रेशम एवम भेड़ों से ऊन प्राप्त करके अपने लिए वस्त्रों का निर्माण कर पाते हैं । हमारे शरीर के विभिन्न अंगों की कार्यप्रणाली , उनके रोगों एवम उन रोगों से निदान कैसे हो? , यह सब जीव विज्ञान

के ज्ञान द्वारा ही संभव हो पाता है। जीव विज्ञान के आधुनिक ज्ञान के कारण ही आज हमारे देश के चिकित्सा विभाग ने इतनी तरक्की कर ली है कि किसी भी बड़े से बड़े रोग की जांच एवम निदान आज हमारे देश में ही संभव है। हमारे घरों में दैनिक जीवन में उपयोग किये जाने वाले विभिन्न उपकरण जैसे पंखा, फ्रिज, कूलर , ए. सी., यातायात के विभिन्न साधन जैसे कार , बस , रेल ,विमान , यहाँ तक की बिजली भी भौतिक शास्त्र की ही देन हैं। इन सभी संसाधनों ने हमारे जीवन को सरल एवम सुगम्य बना दिया है। इसी प्रकार हमारे दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली विभिन्न वस्तुएं जैसे : पीने का शुद्ध पानी ,विभिन्न रोगों के लिए प्रयोग में आने वाली दवाइयां, इंजेक्शन, साबुन, सर्फ़, शेम्पू कपडे , आदि सब रसायन विज्ञान के ज्ञान के कारण ही हमको प्राप्त हो रहे हैं।

2. **कृषि-** भारतीय कृषि में क्रांति विज्ञान की ही देन है । लगभग 75% किसानों ने उर्वरकों, कीटनाशकों व कृषि की आधुनिक विधियों को अपनाया है, जिसके फलस्वरूप फसलों एवम फलों की किस्मों में सुधार हुआ है। इस सम्बन्ध में भारतीय शिक्षा आयोग ने भी लिखा है कि " **विज्ञान पर आधारित नयी कृषि प्रौद्योगिकी का विकास सर्वाधिक महत्वपूर्ण है पिछले सौ वर्षों में विश्व के अनेक भागों में कृषि में क्रांति आई है , जैसे- रासायनिक इंजिनियरिंग तथा यांत्रिकीकरण का विकास तथा जैव-वैज्ञानिक सोच में क्रांति आना मनुष्य के रहने के ढंग के वैज्ञानिक द्रष्टिकोण से कृषि प्रौद्योगिकी में अत्यंत सुधार हुआ है "** । विज्ञान ही है जिसके महत्वपूर्ण योगदान के कारण आज हम कृषि के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गये हैं। आजादी से पहले जहाँ हमारे देश की सम्पूर्ण जनता को अनाज उपलब्ध नही हो पाता था। वहीं विज्ञान के योगदान के कारण आज हमारा देश इस स्थिती में है कि देश के सभी लोगों के लिए अन्न की आपूर्ति करने के बाद भी हम आज अन्न का निर्यात करने की स्थिती में हैं। आज रेडियो एवम टेलीविजन पर प्रसारित किये जाने वाले विभिन्न कृषि आधारित कायक्रमों के माध्यम से किसानों को कीट नियंत्रण, फसलों की देखभाल और खाद के प्रयोग की उचित जानकारी प्राप्त हो जाती है। फलस्वरूप इन कार्यक्रमों से किसानों को फसलो को उन्नत बनाने के लिए उचित ज्ञान प्राप्त होता है, साथ ही उन्हें मौसम की पूर्व जानकारी भी हो जाती है, जिससे अब वे फसलों की कटाई एवम बुवाई के प्रति सजग एवम सावधान रहने लगे हैं।

3. **चिकित्सा -** चिकित्सा के क्षेत्र में विज्ञान हमारे शारीरिक स्वास्थ्य के साथ साथ मानसिक स्वास्थ्य को भी बनाये रखने में महतवपूर्ण भूमिका निभा रहा है। पहले जिन भयावह रोगों के उपचार के लिए हमें विदेश जाना होता था , विज्ञान के विकास के कारण , आज ऐसे किसी भी बड़े से बड़े रोग की चिकित्सा सुविधा हमारे देश में ही उपलब्ध है। आज संचार के विभिन्न माध्यमों जैसे अख़बार, रेडियो एवम टेलिविज़न के माध्यम से स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचनाएं सुदूर ग्रामीण क्षेत्र तक पहुँच रही हैं। विज्ञान के द्वारा ही विभिन्न रोगों जैसे- हैजा, चेचक पर पूरी तरह से तथा टी.बी., पोलियो व बच्चों के दिमागी बुखार पर काफी सीमा तक काबू पा लिया गया है। आज कभी असाध्य लगने वाले रोग वैज्ञानिकों द्वारा खोजी गयी विभिन्न दवाइयों, उपकरणों , संसाधनों, एवम तकनीकियों के प्रयोग से असाध्य नही रह गये हैं।

4. **अन्तरिक्ष -** आज हमारा देश वैज्ञानिक प्रगति के पथ पर अग्रसर है। भारत को आज उन सात देशों की श्रेणी में रखा जाता है, जोकि उपग्रह छोड़ने की क्षमता रखते हैं। विज्ञान के द्वारा दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति हुई है , एडुसेट जैसे शैक्षिक उपग्रहों के माध्यम से हमें आज घर बैठे ही शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी भी प्राप्त हो जाती है। अन्तरिक्ष में स्थापित किये गये विभिन्न उपग्रहों के माध्यम से हम पृथ्वी के वातावरण एवम महासागर पर निगरानी रखकर ,मौसम की हर पल जानकारी प्राप्त करते रहते हैं। हमारे पृथ्वी के वातावरण में किस प्रकार के परिवर्तन हो रहे हैं जैसे : ग्लोबल वार्मिंग ,ओजोन परत क्षरण , ये परिवर्तन क्यों हों रहे हैं? इन परिवर्तनों के निकट भविष्य में क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं? इन परिवर्तनों से होने वाले नुकसान को कैसे रोका जा सकता है ? ये सारी जानकारी विज्ञान के कारण ही हमको प्राप्त हो पा रही है।
5. **रक्षा एवम परमाणु ऊर्जा-** वैज्ञानिक प्रगति एवम विकास पर ही हमारे देश की सुरक्षा व्यवस्था निर्भर करती है। विज्ञान ही है जिसके कारण हमारी सैन्य शक्ति एवम संगठन मजबूत हो रहा है। आज हमारे पास पृथ्वी, आकाश, त्रिशूल , नाग एवम अग्नि जैसी सफल मिसाइलें हैं ,जो हमारे देश को विपरीत परिस्थति में किसी भी चुनौती का सामना करने में सक्षम बनाती हैं और किसी भी विपरीत परिस्थिति में हमारे देश की सुरक्षा करने में सक्षम हैं।
6. **जैव प्रोधोगिकी विज्ञान-** वैज्ञानिक द्रष्टिकोण से जैव प्रोधोगिकी एक नया विषय है। आज जैव प्रोधोगिकी ही है , जिसके द्वारा हम फिंगर प्रिंटिंग जैसी तकनीकी का प्रयोग किसी अपराधिक समस्या को सुलझाने में करके, अपराधी को सजा दिलाने में सक्षम हो गये हैं। जैव प्रोधोगिकी की सहायता से ही हम , डी. एन. ए. टेस्टिंग द्वारा किसी बालक के जैविक पिता की जानकारी भी प्राप्त कर सकने में सक्षम हो गये हैं। इसके माध्यम से जहाँ एक ओर हमने कृषि के क्षेत्र में फसलों की नयी नयी उन्नत किस्मों का विकास किया है ,वहीं दूसरी ओर हमने रासायनिक उर्वरकों की निर्भरता को कम करने के लिए जैविक उर्वरकों का भी विकास किया है। आज हम उत्पादित खाद्य सामग्री को जैव प्रोधोगिकी के माध्यम से ही लम्बे समय तक सुरक्षित रख सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. विज्ञान अर्थात Science शब्द की उत्पत्ति_____भाषा के शब्द _____से हुई है, जिसका अर्थ है जानना।
2. भौतिक विज्ञान के अंतर्गत दो उपविषय _____ एवम _____आते हैं।
3. एडुसेट पृथ्वी के वातावरण पर निगरानी रखने हेतु अन्तरिक्ष में स्थापित किया गया एक उपग्रह है। (सत्य / असत्य)
4. फिंगर प्रिंटिंग जैसी तकनीकी का प्रयोग किसी बालक के जैविक पिता की जानकारी प्राप्त करने हेतु किया जाता है। (सत्य / असत्य)

3.4 विज्ञान का स्कूल पाठ्यक्रम में स्थान

कोठारी आयोग ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से लिखा था कि **"विज्ञान और गणित विद्यालय जीवन के प्रथम दस वर्षों में सभी विद्यार्थियों को उनकी सामान्य शिक्षा के रूप में अनिवार्य रूप से पढाये जाने चाहिए"।** विज्ञान और गणित की पढाई पर इन दिनों काफी जोर दिया जा रहा है। हमारे देश की प्रगति और विकास के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि विज्ञान के अध्ययन के स्तर को ऊँचा किया जाये और इन विषयों की शिक्षा पर छोटी कक्षाओं से ही ध्यान दिया जाये। आज विज्ञान का अध्ययन करने वाले छात्रों की संख्या में अप्रत्याशित बढ़ोतरी हुई है । सरकार के द्वारा भी छात्रों में विज्ञान की शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए विभिन्न स्कीम चलायी गयी हैं ,जिनके द्वारा छात्रों को शिक्षा हेतु आर्थिक मदद प्रदान की जाती है। उदहारण के लिए NCERT , दिल्ली, प्रत्येक वर्ष राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिभा खोज परीक्षा आयोजित करती है ,इस परीक्षा के माध्यम से चुने गये छात्रों को विज्ञान विषय में शिक्षा प्राप्त करने हेतु आर्थिक मदद प्रदान की जाती है।

सामन्यतया हम समय और समाज की मांग के आधार पर ही स्कूल के पाठ्यक्रम में किसी विषय को स्थान प्रदान करते हैं। शिक्षा को संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन एवम हस्तानन्तरण की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाये या व्यक्तित्व के विकास एवम सामाजिक विकास की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाये , विज्ञान का महत्व स्वयं ही स्पष्ट हो जाता है । किसी भी देश का विकास उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता , देश की आर्थिक स्थिति उत्पादन पर निर्भर करती है और उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि नयी वैज्ञानिक तकनीकी के प्रयोग के कारण ही संभव हो सकती है। व्यक्तित्व के विकास के लिए भी व्यक्ति में वैज्ञानिक प्रवृत्ति होना एवम उसका वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग में निपुण होना आवश्यक है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आधुनिक युग में प्रत्येक व्यक्ति के लिए विज्ञान विषय का ज्ञान अनिवार्य हो गया है । अतः छात्रों को स्कूल से ही विज्ञान शिक्षा सही प्रकार से दी जाये , इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हमारे स्कूल पाठ्यक्रम में विज्ञान को एक अनिवार्य विषय बनाकर महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। स्कूल पाठ्यक्रम में विज्ञान को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में रखकर हम छात्रों के व्यक्तित्व में जो परिवर्तन कर सकते हैं ,यहाँ पर हम उनकी विस्तृत चर्चा करेंगे-

1. **अन्धविश्वासों से मुक्ति दिलाना -** विज्ञान एक ऐसा विषय है जिसमें "क्या", "क्यों" एवम "कैसे" प्रश्न निहित होते हैं। जब छात्र स्कूल की शिक्षा से ही विज्ञान का अध्ययन प्रारम्भ कर देता है तो ये सभी प्रश्न छात्र के व्यक्तित्व का हिस्सा बन जाते हैं। अब छात्र अपने घर या आस पास के समाज में किसी भी घटना को देखता है, तो उसका मन मस्तिष्क अपने आप ही उस घटना का विश्लेषण करने लगता है । वह उस घटना को यूँ ही तब तक स्वीकार नही करता, जब तक उसको कोई ठोस प्रमाण नही मिल जाता । इसको हम एक उदाहरण की सहायता से समझ सकते हैं ,मान लीजिये यदि किसी विज्ञान पढने वाले छात्र को यह बताया जाता है कि यज्ञ करने से भगवान प्रसन्न होते हैं और तब वर्षा होती है , तो यह छात्र इस तथ्य को यूँ ही स्वीकार नही करेगा ।वह स्वयं यज्ञ करके देखेगा और यदि प्रत्येक यज्ञ के बाद वर्षा नही हुई तो वह इस तथ्य को पूर्णतया अस्वीकार कर देगा कि यज्ञ

करने से वर्षा होती है । इस प्रकार विज्ञान का अध्ययन करने से छात्र को समाज में व्याप्त अन्धविश्वास से भी स्वयं मुक्ति मिल जाती है ।

2. **कार्य क्षमता में वृद्धि करना-** विज्ञान के अध्ययन से छात्र की कार्य क्षमता में भी वृद्धि होती है। जिस छात्र को विज्ञान की आधुनिक तकनीकियों का ज्ञान होता है, वह अपने कार्य वैज्ञानिक तकनीकी की सहयता से शीघ्र एवम कम समय में समाप्त कर लेता है । उदहारण के लिए यदि विज्ञान के छात्र को ई-मेल का ज्ञान है और वह किसी दूसरे दूर बैठे व्यक्ति को कोई पत्र भेजना चाहता है तो वह छात्र पुराने माध्यम यानि डाक के द्वारा अपना पत्र ना भेजकर, दूर बैठे व्यक्ति को ई-मेल करेगा और कुछ मिनट या सेकेण्ड में पत्र को ई-मेल के माध्यम से दूसरे व्यक्ति तक आसानी से पहुंचा देगा । इस प्रकार विज्ञान के ज्ञान से ही हमे दैनिक जीवन के किसी भी कार्य को कम समय, कम व्यय, व कम श्रम में पूरा करने में सहायता मिलती है ।
3. **तथ्यात्मक चिंतन पद्धति विकसित करना -** विज्ञान छात्रों में तथ्यात्मक चिंतन पद्धति विकसित करने में सहायक होता है । विज्ञान की प्रकृति ऐसी होती है कि जब भी हमें कोई नया तथ्य मिलता है तो हम उसके प्रकाश में पुरानी सभी धारणाओं को पुनः परिभाषित कर लेते हैं । इस प्रकार इन पुरानी धारणाओं का केवल ऐतिहासिक महत्व रह जाता है। हमारे समाज में भी कुछ रीति-रिवाज एवम सामाजिक रुड़ियाँ हैं जो पीड़ी डर पीड़ी चली आ रही हैं । विज्ञान छात्र में ऐसी चिंतन पद्धति विकसित करता है कि छात्र अपने आस पास के सामाजिक जीवन में व्याप्त पुरानी परम्पराओं को स्वयं ही नए तथ्यों के प्रकाश में पुनः परिभाषित करता जाता है और रुडियों से हमेशा के लिए मुक्त होता जाता है। उदहारणस्वरुप यदि किसी विज्ञान के छात्र को उसके आस पड़ोस के लोगों द्वारा या घर के सदस्यों द्वारा यह बताया दिया जाता है कि लड़कियां सिर्फ कढ़ाई बुनाई करने में दक्ष होती हैं, गणित के सवाल हल करने में दक्ष नही होती हैं । ऐसी स्थिति में यदि यही छात्र अपनी कक्षा की किसी सहपाठी को या अन्य किसी छात्रा को गणित के सवाल हल करने में दक्ष पाता है , तो वह पुरानी धारणा को नए तथ्य के प्रकाश में पुनः परिभाषित कर लेता है और समझ लेता है कि जो प्राचीन तथ्य उसे समाज द्वारा बताया गया था वह महत्वहीन है , एक लड़की भी गणित के सवाल हल करने में दक्ष हो सकती है । इस प्रकार वह प्राचीन रुडियों के बंधन से भी मुक्त हो जाता है।
4. **सामाजिक प्रगति के लिए तैयार करना -** विज्ञान सामाजिक प्रगति के लिए छात्रों को तैयार करता है। किसी भी समाज की प्रगति समाज में रहने वाले लोगों के द्रष्टिकोण पर निर्भर करती है। विज्ञान का अध्ययन ही हमें यह बताता है कि किसी संक्रामक रोग के फैलने से बचाव करने के लिए क्या उपाय किये जाये? अपने आस पास के वातावरण को किस प्रकार शुद्ध रखा जाये? समाज के लोगों को भविष्य में अस्वच्छ पानी के सेवन से होने वाली स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायों के प्रति किस प्रकार सचेत किया जाये ? विज्ञान छात्रों में समाज के प्रति उत्तरदायित्व एवम सामाजिक भावना का विकास करता है । विज्ञान चिंतन पद्धति छात्रों को संकुचित द्रष्टिकोण से सार्वभौमिक द्रष्टिकोण की ओर ले जाती है। आगे चलकर यही छात्र जब बड़े होकर समाज का हिस्सा बनते हैं तो वे विज्ञान

के द्वारा परिवर्तित अपने सार्वभौमिक द्रष्टिकोण की सहायता से सामाजिक प्रगति में सहायक होते हैं।

5. **जीवन की दैनिक समस्याओं को वैज्ञानिक विधि से हल करना सिखाना :** विज्ञान छात्रों को उनके दैनिक जीवन में आने वाली किसी भी समस्या को वैज्ञानिक विधि से हल करना सिखाता है। वैज्ञानिक विधि के कुछ निश्चित सोपान है, पहला सोपान है – समस्या की पहचान करना , दूसरा सोपान है-समस्या पर चिंतन करना , तीसरा सोपान है- चिन्तन के फलस्वरूप समस्या के जो भी हल सामने आयें, उनकी सत्यता जांचने के लिए प्रयोग करना, चौथा सोपान है-प्रयोगों के परिणाम को अन्य परिस्थितियों में जांचना एवम पांचवा सोपान है- जो परिणाम सही सिद्ध हों, उन्हें नियम मान लेना।

   उदाहरण के लिए यदि छात्र अपने घर पर टेलीविज़न पर कोई कार्यक्रम देख रहा है तभी टेलिविज़न चलते चलते अचानक बंद हो जाये और स्क्रीन खाली दिखने लगे, तो छात्र सबसे पहले ये देखता है की समस्या क्या है ? क्या सभी चैनल पर टेलीविज़न की स्क्रीन खाली दिख रही है? हर चैनल पर वह यही पाता है की स्क्रीन खाली ही नजर आ रही है। अब वह इस पर चिंतन करता है कि हुआ क्या है ? क्या केवल आवाज़ नही आ रही है, या तस्वीर भी नही आ रही है या टेलीविज़न गरम हो गया है उसके कारण ऐसा हो रहा है। अब चिंतन के फलस्वरूप उसके सामने एक हल आता है कि केबल ऑपपरेटर की बिजली चली गयी होगी , जिस वजह से ये हुआ होगा। अब छात्र केबल ऑपरेटर को फ़ोन करके इसकी पुष्टि करता है और उसे पता चल जाता है कि केबल ऑपरेटर के यहाँ बिजली चले जाने से ये समस्या हुई है, कुछ ही समय में ये समस्या सही हो जाएगी और टेलीविज़न पर फिर से कार्यक्रम प्रसारित होने लगेंगे। इस उदाहरण के समान ही विज्ञान का छात्र अपने दैनिक जीवन की प्रत्येक समस्या को वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करके ठीक प्रकार से हल करने में सक्षम हो जाता है ।

6. **अनुशासनात्मक द्रष्टिकोण विकसित करना -** विज्ञान एक ऐसा विषय है जिसका अध्ययन करने के लिए एकाग्रता, कठिन परिश्रम , नियम, सुव्यवस्थित ज्ञान , नियमानुसार प्रयोगात्मक कार्य करने की आवश्यकता जैसी अनेक आवश्यक परिस्थितियां हैं ,जिनका पालन एक विज्ञान के छात्र को करना ही होता है। अतः विज्ञान के छात्र में अनुशासन से रहने की आदत का निर्माण स्वयं ही हो जाता है

7. **नैतिक मूल्य विकसित करना -** सच्चाई , ईमानदारी, न्यायप्रियता, समय का पाबंद होना, दूसरे के द्रष्टिकोण को सम्मान देना, दूसरे के विचारों का आदर करना, भला बुरा सोचने की सामर्थ्य रखना, नियमों का पालन करना आदि सभी गुण जो एक अच्छे चरित्र के लिए निर्णायक हैं , विज्ञान के अध्ययन के फलस्वरूप छात्र में स्वयं ही विकसित हो जाते हैं।

8. **सार्वभौमिक द्रष्टिकोण विकसित करना -** वैज्ञानिक चिंतन पद्धति छात्रों में सार्वभौमिक द्रष्टिकोण विकसित करने में सहायक होती है। धर्म एवम संस्कृति की चिंतन पद्धति वाले छात्र का द्रष्टिकोण क्षेत्र विशेष की सीमा से बंधा होता है। जबकि विज्ञान के नियम और व्याख्यायें किसी क्षेत्र या राष्ट्र

की सीमा में बंधे नही होते हैं। वैज्ञानिक चिंतन पद्धति वाला छात्र किसी भी राष्ट्र द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में किये गये योगदान को देखकर, बिना किसी भेदभाव के उस राष्ट्र का सम्मान करता है। उसका चिंतन एवम द्रष्टिकोण संकुचित नही होता है अपितु सार्वभौमिक होता है।

अभ्यास प्रश्न

5. स्कूल पाठ्यक्रम में विज्ञान को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में रखने से छात्रों के व्यक्तित्व में होने वाले किन्ही तीन परिवर्तनों को बताइये?

3.5 विज्ञान शिक्षण की समस्याएं एवम चुनौतियाँ : वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अन्तनिर्विष्ट करने में, इसकी भूमिका के सन्दर्भ में एवम सामाजिक आर्थिक विकास के वाहक के रूप में

विज्ञान की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य छात्रों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास करना है और साथ ही छात्रों को सामाजिक आर्थिक विकास के लिए तैयार करना है। पण्डित जवाहर लाल नेहरु ने 1946 में अपनी पुस्तक " डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया" में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का सामान्य विचार स्पष्ट किया था उन्होंने इसे जीवन शैली, सोचने का तरीका, कार्य करने का तरीका, तथा सहचरों के साथ व्यवहार करने का तरीका बताया था। जनमानस में वैज्ञानिक द्रष्टिकोण का विकास हमारे संविधान के अनुच्छेद 51, अ के अंतर्गत मौलिक कर्त्तव्य में से एक है। वर्ष 1976 में 42 वें संविधान संशोधन में "वैज्ञानिक प्रवृत्ति" के साथ "मनुष्य जाति की सेवा" को जोड़ा गया है। इसी के साथ भारत दुनिया का पहला राष्ट्र बन गया है , जिसने वैज्ञानिक चेतना को नागरिक कर्त्तव्यों में शामिल किया है।

अन्वेषण की प्रवृत्ति तथा प्रश्न पूछे जाने का अधिकार वैज्ञानिक प्रवृत्ति का मूलाधार है। अतः वैज्ञानिक प्रवृत्ति विकसित करने के लिए छात्रों में वैज्ञानिक ढंग से सोचने समझने की क्षमता और कार्य करने की आदत होनी चाहिए। छात्रों को किसी भी प्रकार के अंधविश्वासों से दूर रहकर किसी भी बात को बिना प्रयोग एवम परीक्षण के स्वीकार नही करना चाहिए। हमारी जैन, सांख्य एवम बौद्ध परम्पराएं भी इसी मत का समर्थन करती हैं। अतः विज्ञान की शिक्षा इस प्रकार दी जानी चाहिए कि छात्रों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति विकसित की जा सके और उनमे तथ्यों को गहरायी से जानने की एवम नयी नयी बातों को जानने तथा खोजने की जिज्ञासा बनी रहे। वहीं छात्रों को सामाजिक आर्थिक विकास हेतु तैयार करने के लिए यह जानना जरुरी है कि किस प्रकार रहने से एवम किस प्रकार के कार्य करने से सामाजिक एवम आर्थिक विकास होगा। जैसे शरीर को स्वस्थ किस प्रकार रखा जाये? छूत की बीमारियों को फैलने से कैसे रोका जाये ? किन वैज्ञानिक तकनीकियों का प्रयोग किया जाये जिनकी सहायता से कम धन , कम श्रम एवम

कम समय में अधिक उत्पादन किया जा सके ? इत्यादि इस प्रकार का संपूर्ण ज्ञान विज्ञान की शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अन्तनिर्विष्ट करने में तथा छात्रों को सामाजिक आर्थिक विकास हेतु तैयार करने में, विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में अनेक समस्यायें एवम चुनौतियाँ हैं यहाँ पर हम उन सभी की विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे-

1. **विज्ञान शिक्षकों के लिए उचित प्रशिक्षण कार्यक्रम का अभाव -** हमारे देश में विज्ञान शिक्षको के लिए उचित प्रशिक्षण कार्यक्रम का अभाव है। कुछ विद्यालयों में पर्याप्त भौतिक सुविधाओं एवम नयी तकनीकी से परिपूर्ण प्रयोगशाला तो हैं किन्तु विज्ञान शिक्षकों को इन नयी तकनीकीयों को प्रयोग करने का ज्ञान ही नही है । कक्षा में स्मार्ट बोर्ड हैं, कंप्यूटर हैं, लेकिन प्रभावशाली विज्ञान शिक्षण के लिए इनका प्रयोग कैसे करना है, इसकी जानकारी विज्ञान शिक्षकों को नही है। विज्ञान शिक्षकों को शिक्षण के क्षेत्र में प्रयोग होने वाली नयी शिक्षण विधियों का भी उचित ज्ञान नही है , वे आज भी कक्षाओं में प्राचीन परंपरागत शिक्षण विधियों के माध्यम से ही शिक्षण कार्य सम्पादित करते हैं। अतः विज्ञान शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम में वर्तमान समय के अनुसार सुधार किये जाने की आवश्यकता है । विभिन्न नयी तकनीकियों को कक्षा में किस प्रकार प्रयोग करना है , विज्ञान के क्षेत्र में नयी शिक्षण विधियाँ कौन -सी हैं ,उनको प्रभावशाली शिक्षण हेतु किस प्रकार प्रयोग करना है , विज्ञान शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम में इसका प्रशिक्षण भी शामिल किया जाना चाहिए।
2. **उच्च गुणवत्ता वाले विज्ञान शिक्षकों का अभाव-** हमारे देश में उच्च गुणवत्ता वाले विज्ञान शिक्षकों का पहले से ही अभाव है, क्योंकि हमारे देश में शिक्षकों को पर्याप्त वेतन नही दिया जाता है, अतः जो कुछ एक उच्च गुणवत्ता वाले कुशल शिक्षक हैं भी, वे अच्छे वेतन पाने की लालसा में अपने देश में सेवा प्रदान ना करके, दूसरे देशों को पलायन कर जाते हैं। अतः आवश्यक है की शिक्षकों के वेतन वृद्धि की दिशा में प्रयास किये जायें और ऐसा करके प्रतिभाशाली शिक्षकों के पलायन को रोका जा सके।
3. **कक्षा में शिक्षक की भूमिका -** हमारे विद्दालय की कक्षाओं में शिक्षक की भूमिका एक तानाशाह शाशक के समान होती है। छात्रों को शिक्षक से कोई प्रश्न करने की स्वतंत्रता नही होती है। शिक्षक जो कुछ भी जानता है, उसे छात्रों के मन मस्तिष्क में भर देने की कोशिश करता है, बिना इस बात की परवाह किये की छात्रों को कुछ समझ आ रहा है कि नही , उनकी सीखने में कोई रूचि है कि नही और उन्होंने कुछ सीखा है कि नही । छात्रों में वैज्ञानिक मनोवृत्ति विकसित करने हेतु छात्रों को शिक्षक से प्रश्न करने की और अपने विचार व्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए। शिक्षक को छात्र की जिज्ञासा को शांत करने हेतु एक मित्र के समान छात्रों का पथ प्रदर्शन करना चाहिए तथा छात्रों को स्वयं करके सीखने के अवसर प्रदान करने चाहिए ।
4. **नवीन शिक्षण विधियों के ज्ञान का अभाव -** हमारे विद्दालय की कक्षाओं में शिक्षक विज्ञान शिक्षण हेतु आज भी प्राचीन परंपरागत शिक्षण विधियों का प्रयोग करते हैं । कक्षाओं में विज्ञान जैसे प्रयोग आधारित विषय को व्याख्यान विधि के माध्यम से ही पढाया जाता है । जबकि छात्रों में

वैज्ञानिक मनोवृत्ति विकसित करने हेतु शिक्षक द्वारा प्रयोग प्रदर्शन विधि ,प्रयोगशाला विधि, कांसेप्ट मैपिंग विधि जैसी नई शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए । शिक्षक कक्षा शिक्षण में नवीन शिक्षण विधियों का सफलतापूर्वक प्रयोग कर सके, इसके लिए शिक्षकों को इन शिक्षण विधियों के प्रयोग में प्रशिक्षित किये जाने की आवश्यकता है । यदि आवश्यक हो तो किसी विशेष प्रकरण के स्पष्टीकरण हेतु शिक्षकों को ,छात्रों को शैक्षिक भ्रमण पर भी ले जाना चाहिए, जैसे: किसी परमाणु अनुसन्धान केंद्र या किसी फैक्ट्री या किसी म्यूजियम में छात्रों को शैक्षिक भ्रमण पर ले जाना। ऐसा करने से छात्रों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति प्रबल होगी ।

5. **कक्षा में छात्रों की अधिक संख्या-** विज्ञान एक ऐसा विषय है जिसमें छात्रों को स्वयं करके सीखने के अवसर प्रदान किये जाने चाहिए अर्थात छात्र द्वारा किसी भी तथ्य को स्वीकृत या अस्वीकृत करने का आधार छात्र के द्वारा स्वयं किये गये प्रयोग एवम परीक्षण के निष्कर्ष होने चाहिए । कक्षा में छात्र को स्वयं करके सीखने के अवसर प्रदान किये जायेंगे तभी उनके अन्दर वैज्ञानिक प्रवृत्ति विकसित हो सकेगी, लेकिन हमारे स्कूलों की कक्षाओं में छात्रों की संख्या इतनी अधिक है कि प्रत्येक छात्र को स्वयं करके सीखने के अवसर प्रदान करना संभव नही है ।
6. **पाठ्यक्रम में प्रयोगात्मक कार्य का अभाव-** हमारा विज्ञान का पाठ्यक्रम सैद्धांतिक है, किन्तु व्यावहारिक नही है । यह छात्रों को स्वयं करके सीखने के अवसर प्रदान नही करता अपितु उनको तथ्यों को रट लेने की प्रवृत्ति पर बल देता है। अतः यह आवश्यक है की विज्ञान के पाठ्यक्रम को व्यावहारिक बनाया जाये प्रत्येक प्रकरण में प्रयोगात्मक क्रियाकलापों को अधिक स्थान दिया जाये। जिससे की छात्रों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास हो सके और वे किसी तथ्य को रटने के स्थान पर स्वयं प्रयोग एवम परीक्षण करके ,उसके निष्कर्ष के आधार पर सीख सकें।
7. **प्रयोगशाला में भौतिक सुविधाओं का अभाव-** विज्ञान प्रयोग आधारित विषय है, हमारे देश के कुछ स्कूलों में या तो प्रयोगशाला ही नही हैं और यदि हैं भी तो प्रयोगशालाओं में पर्याप्त भौतिक सुविधाएं ही नही है। जिनके अभाव में एक कुशल प्रशिक्षित शिक्षक चाहकर भी छात्र को ऐसा वातावरण ही प्रदान नही कर पाता है कि छात्र विज्ञान जैसे विषय को स्वयं प्रयोग करके सीख सके ।

अभ्यास प्रश्न

6. जनमानस में वैज्ञानिक द्रष्टिकोण का विकास हमारे संविधान के अनुच्छेद _________के अंतर्गत __________ में से एक है।
7. वर्ष __________में_________ संविधान संशोधन में "वैज्ञानिक प्रवृत्ति" के साथ "मनुष्य जाति की सेवा" को जोड़ा गया है।
8. वैज्ञानिक प्रवृत्ति का मूलाधार बताइये ?
9. विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में आने वाली किन्हीं दो समस्याओं को लिखिए ?

3.6 सारांश

विज्ञान के अंतर्गत होने वाली नयी नयी तकनीकीयों की खोजें व अविष्कार, किसी भी समाज एवम संस्कृति को एक प्रगतिशील स्वरूप प्रदान करते हैं। विज्ञान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमारे जीवन के प्रति द्रष्टिकोण को प्रभावित करता है , हमारे आर्थिक एवम सामाजिक परिवर्तनों को प्रोत्साहित करता है। जिसके कारण कोई भी देश या समाज उन्नति के पथ पर आगे बढ़ता रहता है। इस इकाई में हमने , ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान हमारे जीवन के लगभग हर क्षेत्र को किस प्रकार प्रभावित करता है, इसके विषय में विस्तृत अध्ययन किया है। विज्ञान का स्कूल पाठ्यक्रम में क्या स्थान है ? स्कूल पाठ्यक्रम में विज्ञान को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में रखकर हम छात्रों के व्यक्तित्व में जो परिवर्तन कर सकते हैं , उनके विषय में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। साथ ही वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अन्तर्निर्विष्ट करने में एवम सामाजिक आर्थिक विकास के वाहक के रूप में ,विज्ञान शिक्षण की क्या समस्याएं एवम चुनौतियाँ हैं , इन समस्यायों और चुनौतियो को किस प्रकार दूर किया जा सकता है, इस पर भी विस्तारपूर्वक चर्चा की गयी है। विज्ञान की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य छात्रों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास करना है और साथ ही छात्रों को सामाजिक आर्थिक विकास के लिए तैयार करना है। स्पष्ट है कि जब तक हमारा विज्ञान शिक्षण उन्नत नही होगा, तब तक हम इन उद्देश्यों को प्राप्त ही नही कर सकेंगे। अतः हमें विज्ञान शिक्षण को उन्नत बनाने के हर संभव प्रयास करने चाहिये।

3.7 शब्दावली

1. **विज्ञान** : “ज्ञान का क्रमबद्ध रूप विज्ञान है।”

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. लेटिन, Scire
2. भौतिकी , रसायन शास्त्र
3. असत्य
4. असत्य
5. स्कूल पाठ्यक्रम में विज्ञान को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में रखने से छात्रों के व्यक्तित्व में होने वाले तीन परिवर्तन हैं -
    i. अंधविश्वासों से मुक्ति मिलना
    ii. कार्यक्षमता में वृद्धि होना
    iii. जीवन की दैनिक समस्याओं को वैज्ञानिक विधि से हल करना सीखना
6. 51, अ, मौलिक कर्त्तव्य
7. 1976, 42 वें

8. अन्वेषण की प्रवृत्ति तथा प्रश्न पूछे जाने का अधिकार
9. विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में आने वाली दो समस्याएं हैं –
   i. विज्ञान शिक्षकों के लिए उचित प्रशिक्षण कार्यक्रम का अभाव
   ii. पाठ्यक्रम में प्रयोगात्मक कार्य का अभाव

3.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. माहेश्वरी, वी. के . एवम माहेश्वरी, सुधा 2005. विज्ञान शिक्षण , आर. लाल. पब्लिकेशन्स, मेरठ
2. नेगी, प्रो. जे . एस. 2013. भौतिक विज्ञान शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन्स , आगरा
3. माहेश्वरी, वी. के . 2005. आर. लाल. पब्लिकेशन्स, मेरठ
4. http://pragati.nationalinterest.in/2014/05/role-of-scientific-temper/
5. http://therationalistsociety.com/blogging/?p=221

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. "विज्ञान को विद्यालय के पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना एक उचित निर्णय है ।" इस कथन को विज्ञान द्वारा होने वाले लाभों के सन्दर्भ में स्पष्ट कीजिए ।
2. ज्ञान की एक शाखा के रूप में विज्ञान मानव जीवन को किस प्रकार प्रभावित कर रहा है ? विस्तार से वर्णन कीजिए ।

इकाई 4 - भाषा : विज्ञान की एक शाखा के रुप में

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 भाषा: अर्थ, परिभाषा एवं संप्रत्य
4.4 भाषा के तत्व
4.5 भाषा ज्ञान की एक शाखा के रुप में
4.6 पाठ्यक्रम में भाषा का स्थान
4.7 समाज के विभिन्न कार्यों में समरसता स्थापित करने में भाषा की भूमिका
4.8 राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका
4.8.1 राष्ट्रीय एकीकरण एवं भाषा
4.9 भाषा शिक्षण की समस्याएँ एवं चुनौतियाँ
4.10 सारांश
4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.12 संदर्भ ग्रंथ सूची एवं सहयोगी पुस्तकें
4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

मानव जाति की अद्वितीय उपलब्धियों का यदि उल्लेख किया जाए तो भाषा का उस में अग्रणी स्थान है। भाषा मनुष्य की वह विशिष्ट उपलब्धि है जो उसे अन्य प्राणियों से अलग करती है तथा समाज में विचार-विनिमय करने के योग्य बनाती है। यूँ तो विचार-विनिमय या संप्रेषण संकेतों के माध्यम से भी होता है लेकिन भाषा संप्रेषण का सर्वोत्कृष्ट माध्यम है। भाषा संप्रेषण को प्रभावी बनाती है जिसके परिणामस्वरुप समाज के विभिन्न सदस्यों के मध्य संबंध स्थापित होता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि भाषा के द्वारा ही सामाजिक संबंधों का निर्माण होता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी कहा है – "शब्द इसी उद्देश्य से बनाए गए हैं कि व्यक्ति की भावना दूसरे के चित्त में आसानी से उतार दी जा सके। व्यक्ति यदि अपने आप में परिपूर्ण होता तो शब्द द्वारा अर्थ को प्रकट करने वाली भाषा की आवश्यकता नहीं होती"। थोड़ा और विस्तार में देखा जाए तो मानव समाज में भाषा द्वारा तीन प्रमुख कार्य संपादित किए जाते हैं- प्रथम, विचारों के संप्रेषण का कार्य, द्वितीय, सामाजिक संबंध स्थापित करने का कार्य

तथा तृतीय, भाषा के माध्यम से वैयक्तिक सूचना पाने का कार्य। इस प्रकार, भाषा मानव समाज के लिए अति महत्वपूर्ण कार्यों का संपादन करता है। अब यदि यह इतने महत्वपूर्ण कार्यों का संपादन करता है तो इसका अध्ययन-अध्यापन भी प्रभावपूर्ण ढंग से होना चाहिए ताकि अपने कार्यों का संपादन कर सकें। प्रभावपूर्ण अध्ययन-अध्यापन के लिए भाषा के पाठ्यक्रम में स्थान, समाज में भाषा की भूमिका, राष्ट्रीय एकता के लिए भाषा की आवश्यकता, आदि का ज्ञान, भाषा के अध्ययन-अध्यापन कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के लिए आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई की रचना इस उद्देश्य से की गई है कि भाषा के अध्ययन एवं अध्यापन में लगे हुए व्यक्तियों को भाषा के संप्रत्यय का गहन ज्ञान हो सके तथा वह समाज एवं राष्ट्र के उत्थान में भाषा की भूमिका से परिचित हो सके। वर्तमान में भाषा शिक्षण की चुनौतियों को जान सकें। इस प्रकार यह इकाई भाषा शिक्षण एवं अधिगम के कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के लिए अति उपयोगी है। इसके इतर अन्य विषयों के शिक्षकों के लिए भी यह बहुत उपयोगी है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. भाषा की परिभाषा दे सकेंगे।
2. भाषा के संप्रत्यय की विस्तृत विवेचना कर सकेंगे।
3. भाषा के तत्वों का उल्लेख कर सकेंगे।
4. भाषा को ज्ञान की एक शाखा के रुप में स्थापित कर सकेंगे।
5. विद्यालय पाठ्यक्रम में भाषा के स्थान पर तर्कपूर्ण चर्चा कर सकेंगे।
6. समाज में समरसता स्थापित करने में भाषा की भूमिका की वर्णन कर सकेंगे।
7. राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।
8. भाषा शिक्षण की समस्याओं एवं चुनौतियों का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 भाषा: अर्थ, परिभाषा एवं संप्रत्यय

अपने व्यापक अर्थ में भाषा अभिव्यक्ति का साधन है जिसमें मनुष्य की भाषा के साथ– साथ, सांकेतिक भाषा एवं पशु-पक्षियों की भाषाएँ भी शामिल होती है। संकुचित अर्थ में, भाषा का आशय सिर्फ मनुष्य की भाषा से है। भाषाविज्ञानी भाषा का इसी अर्थ में अध्ययन करते हैं। भाषा शब्द की व्युत्पत्ति भाष् धातु से हुई है। भाष् धातु का अर्थ है- अव्यक्त वाणी या स्पष्ट वाणी या मनुष्य की वाणी। अर्थात संकुचित अर्थ में भाषा शब्द क प्रयोग मुख्यतः मनुष्य के उच्चारण अवयवों द्वारा उच्चरित उन ध्वनि संकेतों के लिए होता है जो अर्थवान होते हैं। पाणिनि ने भी कहा है- ''व्यक्त वाचां समुच्चारणे''।

डॉक्टर भोलानाथ तिवारी ने भाषा को परिभाषित करते हुए कहा है कि ''भाषा उच्चारण अवयव से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा किसी भाषा भाषी समाज के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।''

आचार्य देवेंद्र नाथ शर्मा के अनुसार, ''भाषा यादृच्छिक ध्वनि संकेत प्रणाली को कहते हैं जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय या सहयोग करते हैं।''

चॉम्स्की के शब्दों में, ''अर्थपूर्ण उच्चरित ध्वनियों की नियमानुशासित व्यवस्था भाषा है।''

उपयुक्त परिभाषाओं से चार बातें स्पष्ट होती हैं:

i. **भाषा ध्वनि संकेतों का समूह है -** भाषा का अनिवार्य अंग ध्वनि है। ध्वनि मनुष्य की वागिंद्रियों एवं निःश्वास वायु की अंतर्क्रिया के परिणामस्वरुप उत्पन्न होती है। इसे ध्वनि या ध्वनि समूह को भाषा कहते हैं।

ii. **यह ध्वनि संकेत यादृच्छिक होते हैं -** यादृच्छिक का अर्थ होता है मनगढ़ंत या अपनी इच्छा से निर्मित। ध्वनि संकेत जिस अर्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं इनका उसके साथ कोई संबंध नहीं होता है। जैसे- आम जो कि एक वृक्ष का प्रतिनिधित्व करता है, संस्कृत में उसी के लिए रसाल तथा अंग्रेजी में मैंगो शब्द का प्रतिनिधित्व करता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि ध्वनि और अर्थ में कोई तार्किक संबंध नहीं होता है।

iii. **ये ध्वनि संकेत रुढ़ होते हैं -** समय के साथ-साथ एक अर्थ विशेष का प्रतिनिधित्व करने के लिए विशेष ध्वनि संकेतों का समूह समाज में प्रसिद्ध हो जाता है। इसे ही ध्वनि संकेत या ध्वनि संकेत के समूहों का रुढ़ हो जाना कहा जाता है। अब प्रश्न यह उठता है कि अर्थ और ध्वनि में यदि कोई तार्किक संबंध नहीं है तो एक विशेष भाषा भाषी समाज के अधिकांश सदस्य द्वारा एक अर्थ विशेष को व्यक्त करने के लिए एक ही ध्वनि संकेत या ध्वनि संकेतों के समूह का प्रयोग क्यों किया जाता है। अर्थात आम को आम ही क्यों कहा जाता है, कटहल क्यों नहीं कहा जाता है?

iv. **ध्वनि संकेत अर्थवान होते हैं-** प्रत्येक ध्वनि संकेत एक अर्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर भाषा को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है- ''मनुष्य की वागेंद्रियों एवं निःश्वास वायु की अंतर्क्रिया के परिणामस्वरुप उत्पन्न ध्वनि या ध्वनियों के समूह जिनके द्वारा विचारों के संप्रेषण का कार्य संपन्न होता है, भाषा कहते हैं''।

4.4 भाषा के तत्व

किसी वस्तु के निर्माण में प्रयुक्त सामग्री को उस वस्तु का तत्व कहते हैं। यथा- मानव शरीर के निर्माण में पाँच मूल तत्व होते हैं- क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर। मूर्ति के निर्माण में मूल तत्व होता है मिट्टी। अब यदि इन मूल तत्वों को हटा दिया जाए तो इनसे निर्मित वस्तु का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है।

मिट्टी है तो मूर्ति अन्यथा नहीं। अतः, यदि भाषा है तो इसके कुछ मूलभूत तत्व भी होंगे और वे तत्व हैं- ध्वन्यात्मकता (साउंड एलिमेंट) और अर्थवत्ता (मीनिंग एलिमेंट)। ध्वनि और अर्थ के अभाव में भाषा की कल्पना नहीं की जा सकती है।

अभ्यास प्रश्न

1. भाषा शब्द की व्युत्पत्ति __________धातु से हुई है।
2. 'व्यक्त वाचां समुच्चारणे'। यह कथन______________ है।
3. अर्थ और ध्वनि या ध्वनि समूह में तार्किक संबंध _______ होता है।
4. संकुचित अर्थ में भाषा से आशय सिर्फ ___________की भाषा से है।
5. ध्वन्यात्मकता एवं अर्थवत्ता ______________ के तत्व हैं।
6. डॉ० भोलानाथ तिवारी के अनुसार भाषा को परिभाषित कीजिए।
7. आचार्य देवेंद्र नाथ शर्मा ने भाषा को किन शब्दों में परिभाषित किया है।
8. चॉम्स्की के अनुसार, भाषा की परिभाषा क्या है?
9. ध्वनि संकेत के यादृच्छिक होने से आप क्या समझते हैं?
10. ध्वनि संकेत के रुढ़ होने से क्या आशय है?

4.5 भाषा ज्ञान की एक शाखा के रुप में

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भाषा का समाज में महत्वपूर्ण स्थान है। भाषा के कारण ही मनुष्य एक-दूसरे के निकट आए। उनके मध्य संबंध स्थापित हुए और समाज का निर्माण हुआ। इस प्रकार, भाषा समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है। जब मनुष्य ने एक साथ रहना प्रारंभ किया उस समय उनके द्वारा कुछ मूल्य, रिती-रिवाज परंपराएँ, विश्वास आदि विकसित की गईं ताकि समाज के विभिन्न सदस्यों के बीच संघर्ष ना हो और सामाजिक जीवन शैली का विकास हो सके। आने वाली संतति को इन मूल्यों, विश्वासों, रीति-रिवाजों, परंपराओं, आदि जिन्हें की संयुक्त रुप से संस्कृति कहा जा सकता है, हस्तांतरित करने की आवश्यकता ने शिक्षा को जन्म दिया। भाषा के बिना तो शिक्षा की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अर्थात शिक्षा ग्रहण करने एवं शिक्षा प्रदान करने के लिए भाषा एक अनिवार्य आवश्यकता है। कालांतर में ज्ञान के नूतन आयाम विकसित होते गए और उन्हें अर्जित करने के लिए भाषा की आवश्यकता बढ़ती गई। इस प्रकार, भाषा मानव समाज की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। अब प्रश्न यह उठता है कि इस महत्वपूर्ण तथ्य को व्यक्ति सीखता कैसे है? क्या यह जन्मजात हैं या फिर इसे मनुष्य समाज के साथ अंतर्क्रिया करके सीखता है? इस प्रश्न के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि ध्वनियों को उत्पन्न करने की शक्ति बालक में जन्मजात होती है और वागिन्द्रियों में परिपक्वता के साथ-साथ बालक ध्वनियाँ उत्पन्न

करने लगता है। लेकिन उचित रुप से बोलने की शक्ति का विकास परिवार एवं समाज के साथ अंतर्क्रिया करने से ही होता है। कब कौन सी ध्वनि उत्पन्न करनी है, कौन सी ध्वनि कब किस अर्थ का प्रतिनिधित्व करेगी, आदि तथ्यों का ज्ञान तो समाज के साथ अंतर्क्रिया के परिणामस्वरुप ही उपार्जित हो पाता है। अर्थात भाषा को सीखना पड़ता है। अब जब भाषा मानव समाज के लिए इतना महत्वपूर्ण है और यह भी स्पष्ट हो गया है कि यह जन्मजात नहीं है, इसे अर्जित करना पड़ता है तो ज्ञान के अन्य शाखाओं की तरह इसे भी ज्ञान की एक शाखा के रुप में स्थापित किया जा सकता है। ज्ञान की एक शाखा के रुप में स्थापित कर इसके औपचारिक अध्ययन-अध्यापन का लाभ यह हुआ है कि व्यक्ति सिर्फ स्वयं की भाषा का ही अध्ययन नहीं कर रहा है वरन अन्य भाषा भाषी समाज के भाषाओं को भी सीख रहा है। इसके परिणाम्स्वरुप विभिन्न भाषाभाषी दो या अधिक समाज एक दूसरे के संपर्क में आ रहे हैं। उनके मध्य निकटता स्थापित हो रही है और वसुधैव कुटुंबकम कि हमारी धारणा को बल मिल रहा है। ग्लोबलाइजेशन को हम इसके परिणाम के रुप में देख सकते हैं।

4.6 पाठ्यक्रम में भाषा का स्थान

भाषा की परिभाषा एवं ज्ञान की एक शाखा के रुप में उसकी स्थापना से पाठ्यक्रम में उसका स्थान स्वतः स्पष्ट हो जाता है। इसे निम्न तत्वों के माध्यम से और स्पष्ट किया जा सकता है:

1. पाठ्यक्रम निर्माण के विभिन्न सिद्धांतों में से एक सिद्धांत विषयों के समावेशन से संबंधित है। इस सिद्धांत के अनुसार, पाठ्यक्रम में उन विषयों का समावेश आवश्यक है होता है जो विद्यार्थी के बौद्धिक, मानसिक, चारित्रिक, सृजनात्मक एवं भावात्मक शक्तियों के विकास में सहायक हो, जो उस में सामाजिक और राष्ट्रीय गुणों की समृद्धि करे तथा उसके जीवन की समस्त आवश्यक्ताओं की पूर्ति में सहायक हो। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक विषयों का समावेश पाठ्यक्रम में किया जाना चाहिए। भाषा इसके लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय है और इस दृष्टि से पाठ्यक्रम में इसका स्थान सर्वोच्च है।
2. भाषा सिर्फ एक विषय मात्र ही नहीं है वरन अन्य विषयों के अध्ययन-अध्यापन का माध्यम भी है। अर्थात भाषा ज्ञान की एक शाखा के साथ-साथ ज्ञान के अन्य शाखाओं के अर्जन का साधन है। विद्यार्थी में भाषाई योग्यता जितनी परिपक्व होगी बालक उतनी ही शीघ्रता से पाठ्य सामग्री को ग्रहण करता है। अतः, भाषा की शिक्षा पर विशेष बल प्रदान किया जाना चाहिए और यह विशेष बल तब प्रदान हो सकता है जब पाठ्यक्रम में इसका विशेष स्थान हो।
3. बहुभाषी राष्ट्र होने के कारण भाषा की शिक्षा और महत्वपूर्ण हो जाती है। भाषा की उचित शिक्षा से हम एक-दूसरे की भाषा को समझ पाएँगे। हमारे मन में उनके प्रति सम्मान पैदा होगा और परिणाम स्वरुप राष्ट्र में व्याप्त भाषाई समस्या में कमी आएगी। अतः, पाठ्यक्रम में भाषा का महत्वपूर्ण स्थान होना चाहिए। उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पाठ्यक्रम में भाषा का स्थान अनिवार्यतः सर्वोपरि है।

अभ्यास प्रश्न

11. शिक्षा ग्रहण करने एवं शिक्षा प्रदान करने का सशक्त माध्यम_____________है।
12. ध्वनि उत्पन्न करने की शक्ति बालक में _____________ होती है।
13. भाषा ज्ञान वास्तव में व्यक्ति का _____________ के साथ अंतर्क्रिया का परिणाम है।
14. पाठ्यक्रम में भाषा का स्थान _____________ है।

4.7 समाज के विभिन्न इकाइयों में समरसता स्थापित करने में भाषा की भूमिका

समाज के विभिन्न विभागों में समरसता का होना अति आवश्यक है। जिस प्रकार से संगीत यदि मधुर नहीं होता है तो शोर कहलाता है और आनंददायक नहीं होता है उसी प्रकार यदि समाज के विभिन्न विभागों में अर्थात समाज के विभिन्न संस्थानों, उसके सदस्यों, उसके आदर्शों, आदि में समरसता ना हो तो समाज विरुपित हो जाता है और इसके विभिन्न इकाइयों में द्वंद को जन्म मिलता है। परिणामस्वरुप सामाजिक असंतुलन में वृद्धि होती है। ऐसी स्थिति उत्पन्न न हो इसके लिए समाज में समरसता का होना आवश्यक है। अब प्रश्न यह उठता है कि समरस समाज हारमोनियस सोसाइटी किसे कहेंगे। एक समाज समरस तब कहा जाएगा जब वह अपने सभी सदस्यों के साथ एक समान व्यवहार करता है तथा सब को समान अवसर प्रदान करता है।

समरसता वह आनंददायक प्रभाव है जो विभिन्न घटकों से संयुक्त होकर एक होने से उत्पन्न होता है। समरसता से तात्पर्य एकरुपता से कदापि नहीं है। यह विचारों, व्यवहारों या क्रियाओं में एकरुपता का नाम नहीं है। यह तो एक ऑर्केस्ट्रा की तरह है। जिस प्रकार से ऑर्केस्ट्रा में गायक, वादक और संचालक मिलकर आनंदित करने वाले कार्यक्रम की प्रस्तुति करते हैं उसी प्रकार विभिन्न घटक मिलकर जब किसी एक वस्तु का निर्माण करके आनंद प्रदान करते हैं तब उसे समरसता कहते हैं।

समाज विविध प्रकार के मनुष्यों एवं संस्थाओं का एक संगठन है। प्रत्येक संस्था या व्यक्ति की अपनी आवश्यकताएँ होती हैं, अपने लक्ष्य होते हैं। वे अलग-अलग भाषाएँ बोलते हैं। उनका धर्म अलग होता है, संस्कृति अलग होती है लेकिन फिर भी उन्हें एक साथ कार्य करना होता है ताकि हम समाज के लक्ष्य, जो कि व्यक्तिगत लक्ष्य से श्रेष्ठ होता है, को प्राप्त कर सकें। एक समरस समाज से आशय ऐसे समाज से है जिसमें सबके लिए सुरक्षा, सम्मान, समान अवसर और जीविकोपार्जन के उचित साधन हो। इसके लिए समाज के प्रत्येक सदस्य को अपनी प्रतिभा के विस्तार का अवसर एवं सामाजिक स्विकृति मिलनी चाहिए।

भाषा एवं समाज एक दूसरे से अति घनिष्ठ रुप से संबंधित है। भाषा समाज में अनेक प्रकार के कार्य निष्पादित करता है। समाज भी भाषा को विस्तार प्रदान करता है। इस प्रकार दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

अगर यह कहा जाए की दोनों एक-दूसरे के अस्तित्व के लिए आवश्यक है तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। समाज में संप्रेषण, शांति, सामाजिक व्यवस्था, सत्ता एवं अधिकारिता के प्रकटीकरण तथा सामाजिक उद्देश्यों के प्रकटीकरण के लिए भाषा एक उपकरण के रुप में कार्य करता है। लेकिन भाषा का अगर त्रुटिपूर्ण ढंग से या अनुप्रयुक्त ढंग से प्रयोग हो जाता है तो वह समाज की सारी व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर देता है। अतः, भाषा को व्यक्तिगत भिन्नता को महत्व देते हुए द्वंद को समाप्त करने वाला होना तथा सामाजिक मूल्यों को बढ़ावा देनेवाला होना चाहिए।

इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि सामाजिक संबंधों को बनाए रखने में भाषा सहायता करता है। भाषा न सिर्फ सामाजिक संबंधों को बनाए रखने में सहायता करता है अपितु यह भाषा एवं उसके प्रयोक्ता के मध्य संबंधों की भी जानकारी देता है।

भारत एक बहुभाषी राष्ट्र है। बहुभाषिकता से आशय एक से अधिक भाषाओं के प्रयोग से है। ऐसे में भाषा की भूमिका और भी सशक्त हो जाती है क्योंकि एक भाषा एक संस्कृति का द्योतक होती है और अगर भाषा का सही ढंग से प्रयोग नहीं किया जाए तो विभिन्न भाषाभाषी समूहों के मध्य विवाद प्रबल हो जाता है। भाषा समाज के विभिन्न सदस्यों के मध्य सेतु का कार्य करती है। वह उन्हें एक-दूसरे के करीब लाती है, एक-दूसरे को समझने का अवसर देती है। इसके परिणामस्वरुप पारस्परिक संबंधों में प्रगाढ़ता स्थापित होती है जो कालांतर में समरुपता में परिवर्तित हो जाती है।

4.8 राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका

राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका को समझने से पहले राष्ट्रीय एकीकरण को समझना आवश्यक है। राष्ट्रीय एकीकरण वास्तव में एक अमूर्त संप्रत्य हैं। समस्त अलगाववादी प्रवृतियों से ऊपर उठकर राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने के प्रयास को राष्ट्रीय एकीकरण की संज्ञा दी जाती है। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो यह एक राष्ट्र जो कि भूमि एवं भूमिवासी, जन तथा जनसंस्कृति तीनों का सम्मिलित स्वरुप है। इस प्रकार, रष्ट्रीय एकीकरण राष्ट्र के सभी नागरिकों में समाहित सामूहिकता, एकता एवं भ्रातृत्व की भावना आदि के विकास की प्रक्रिया है। निम्नलिखित परिभाषाओं के माध्यम से इसके अर्थ को और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है।

डॉक्टर बेदी के अनुसार, "राष्ट्रीय एकता का अर्थ है- देश के विभिन्न राज्यों के व्यक्तियों की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भाषा विषयक विभिन्नताओं को वांछनीय सीमा के अंतर्गत रखना और उनमें भारत की एकता का समावेश करना"।

राष्ट्रीय एकता सम्मेलन में राष्ट्रीय एकीकरण को परिभाषित करते हुए कह गया है कि "राष्ट्रीय एकता एक मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोगों के दिलों में एकता, संगठन एवं सन्निकटता की भावना, सामान्य नागरिकता की भावना और राष्ट्र के प्रति भक्ति की भावना का विकास किया जाता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय एकता का प्रयास ही राष्ट्रीय एकीकरण है।

4.8.1 राष्ट्रीय एकीकरण एवं भाषा

भाषा राष्ट्रीय एकीकरण के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा एवं सबसे बड़ा समाधान दोनों है। राष्ट्रीय एकता के विघटनकारी तत्वों में से भाषा एक प्रमुख तत्व है और उसका ज्वलंत उदाहरण है राज्य पुनर्गठन आयोग द्वारा भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन। भाषा राष्ट्रीय एकता का सशक्त माध्यम है क्योंकि उसी भाषा के प्रयोग से ही महात्मा गांधी जी ने समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधकर देश को स्वतंत्र कराया।

अब प्रश्न यह उठता है कि राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता क्या है? जब हम सब एक राष्ट्र के वासी हैं तो एकता स्वाभाविक रुप से होनी चाहिए लेकिन विभाजनकारी शक्तियों के प्रभाव में आकर यह खंडित होने लगती है। ये विभेदनकारी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं:

- जातिवाद
- सांप्रदायिकता
- भाषावाद
- क्षेत्रवाद
- वोट की राजनीति
- प्रांतवाद आदि।

इन विघटनकारी शक्तियों के प्रभाव को भाषा के माध्यम से समाप्त किया जा सकता है। शिक्षा आयोग 1964-66 ने अपने प्रतिवेदन में इस संदर्भ में कुछ सुझाव दिए थें जो निम्नवत हैं-

1. स्कूल तथा कॉलेजों में शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो और उच्चतर शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाएँ बनाई जाएँ। प्रादेशिक भाषाओं में पुस्तक एवं साहित्य तैयार किए जाएँ। हिंदी के अतिरिक्त सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं के अंतर्राज्यीय आदान-प्रदान का साधन बनाया जाए। भारत की विभिन्न भाषाओं को सुनियोजित ढंग से प्रोत्साहित किया जाए।
2. भाषा एवं युवाओं का सशक्तिकरण- युवाओं के सशक्तिकरण से आशय उन्हें शारीरिक रुप से सशक्त करना नहीं है बल्कि उन्हें सभी प्रकार की सुख-सुविधाएँ तथा उपयुक्त वातावरण प्रदान करना है ताकि वह सकारात्मक परिवर्तन में योगदान देकर अपने जीवन को आनंदित कर सकें। भाषा इसका एक प्रमुख मूलभूत उपकरण है। यह समाज के वंचित वर्ग और आरक्षित सदस्यों के बेहतरी का प्रमुख साधन है। सामाजिक न्याय एवं समता के लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रमुख उपकरण शिक्षा है। समाज विज्ञानी, इसे समाज के वंचित और हाशिए पर रह रहे सदस्यों के कल्याण का श्रेष्ठ उपकरण मानते हैं। इस प्रकार, भाषा युवाओं को उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है ताकि यह सशक्त होकर समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकें। इसके मध्यम से उनमें राष्ट्र के प्रति एकता की भावना प्रबल होती है और राष्ट्रीय एकीकरण को बल मिलता है।

3. भाषा, साहित्य एवं राष्ट्रीय एकीकरण- भाषा या विभिन्न भाषाओं के साहित्य तथा संस्कृति में बहुत घनिष्ठ संबंध है। भाषा के बिना किसी प्रकार के साहित्य की संकल्पना नहीं की जा सकती है। भाषा एवं संस्कृति को एक-दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, भाषा, साहित्य एवं संस्कृति तीनों एक-दूसरे में अंतर्गुम्फित है और वे राष्ट्रीय एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साहित्य एक कला है जो लोगों का मनोरंजन करती है, अनुदेशित करती है तथा उन्हें आने वाले संकट से आगाह करती है। यह विविध प्रकार के मूल्यों एवं अभिव्यक्तियों को विकसित करती है। संस्कृति का ज्ञान प्रदान करती है तथा नागरिक उत्तरदायित्व एवं प्रजातांत्रिक मूल्यों को बल प्रदान करती है।

4.9 भाषा शिक्षण की समस्याओं एवं चुनौतियाँ (5.7 एवं 5.8 के विशेष संदर्भ में)

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति एवं राजनीति का उस राष्ट्र की भाषा से व्यापक संबंध होता है। भारत जैसे बहुभाषिक संस्कृति वाले राष्ट्र में तो यहं संबंध और भी स्पष्ट परिलक्षित होता है। भारतीय परिदृश्य में भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक स्थिति का यहाँ की भाषाओं पर व्यापक प्रभाव है दृष्टिगोचर होता है। इस प्रभाव के अनुरुप भारतीय भाषाओं की एक विशेष शैक्षिक प्रस्थिति तथा समस्याएँ हैं। यथा, हिंदी भाषा का उत्तर भारत में मातृभाषा एवं विदेशी भाषा के रुप में अध्ययन-अध्यापन होता है तो दक्षिण भारत में द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा के रुप में इसका अध्ययन-अध्यापन होता है। इन विशेष शैक्षिक प्रस्थिति एवं समस्याओं के कारण भाषा शिक्षण एवं अधिगम में अनेक चुनौतियों एवं कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। एक भाषा शिक्षक को शिक्षण कार्य करते समय जिन प्रमुख चुनौतियों का सामना करना पड़ता है उनका वर्णन निम्नलिखित है:

1. **भाषा के कार्य का अपूर्ण प्रचार-** भाषा को संप्रेषण के माध्यम के रुप में इतना अधिक प्रचारित कर दिया गया है कि जनमानस इसके अतिरिक्त भाषा के विषय में कुछ और सोचता ही नहीं है। लेकिन संप्रेषण का माध्यम होने के साथ ही साथ भाषा प्रत्येक बालक को उसका दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता करती है। वह बालक की रुचियों, क्षमताओं, मूल्यों एवं अभिवृतियों को भी आकार प्रदान करती है।
2. **भाषाई कौशल का सम्यक विकास-** भाषा शिक्षक का कार्य प्रमुख चार भाषिक कौशलों- श्रवण, वाचन, लेखन एवं पठन कौशल का विकास करना होता है। विद्यालय में भाषा शिक्षक बालक में पठन एवं लेखन कौशल के सम्यक विकास में तो सफल हो पाता है लेकिन विद्यालय पाठ्यक्रम के कारण श्रवण एवं वाचन कौशलों के सम्यक विकास में सफल नहीं हो पाता है।
3. **भाषा एवं साहित्य के प्रति रुचि का अभाव-** यह भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक बहुत बड़ी चुनौती है क्योंकि यहाँ अंग्रेजी भाषा को छोड़कर जनमानस में किसी अन्य भाषा एवं उस भाषा के साहित्य के प्रति पर्याप्त पर्याप्त अरुचि है। विद्यार्थी का ध्यान विज्ञान एवं वाणिज्य जैसे विषयों पर

केंद्रित रहता है। भाषा एवं साहित्य के प्रति उसका कोई रुझान नहीं होता है। परिणामस्वरुप भाषा शिक्षण में अरुचि की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

4. **भाषा का मानक रुप व स्थानीयता-** भाषा शिक्षण के साथ स्थानीयता को संबंधित करना आवश्यक है। यदि भाषा को स्थानीयता के साथ संबंधित नहीं किया जाएगा तो विद्यार्थी अपने संसार को सार्थक रुप से नहीं समझ पाएँगे। हिंदी भाषा के क्षेत्र में तो यह बात और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में आदिवासी क्षेत्रों के विद्यार्थियों की मातृभाषा वहाँ की स्थानीय बोली होती है। उन बोलियों को हिंदी की बोलियों में सम्मिलित किया तो गया है लेकिन उन बोलियों में और हिंदी के मानक रुप में गहरा अंतर होता है। यह अंतर अधिगम प्रक्रिया के प्रभावपूर्ण संपादन में बाधक है।
5. **वर्तनी उच्चारण संबंधित त्रुटियाँ-** शुद्ध लिखना व शुद्ध बोलना किसी भी भाषा का एक महत्वपूर्ण अंग होता है। शुद्ध लेखन एवं शुद्ध वाचन का महत्वपूर्ण अंग शुद्ध वर्तनी व शुद्ध उच्चारण है। भाषा के शिक्षकों में त्रुटिपूर्ण वर्तनी एवं उच्चारण की समस्या का पर्याप्त मात्रा में पाया जाना भाषा शिक्षण की एक बड़ी चुनौती है क्योंकि जब शिक्षक ही शुद्ध अशुद्ध लिखेंगे एवं बोलेंगे तो विद्यार्थी कहाँ से शुद्ध लिखना एवं बोलना सीख पाएँगे।
6. **पारंपरिक शिक्षण विधियाँ-** आज भी भाषा शिक्षक शिक्षण की पारंपरिक विधियों का ही सहारा लेते हैं जो की भाषा शिक्षण को नीरस बना देता है।
7. **सहायक उपकरणों के अभाव की समस्या-** वर्तमान युग तकनीकी का युग है। शिक्षण अधिगम के लिए अनेक प्रकार के यांत्रिक साधनों का विकास बहुत पहले ही हो चुका है। भाषा शिक्षण के लिए भाषा प्रयोगशाला के संप्रत्यय को भी जन्म मिल चुका है एवं उसका पर्याप्त विकास भी हो चुका है। लेकिन भारतीय परिदृश्य में आज भी विद्यालयों में इन उपकरणों का पर्याप्त अभाव है और शिक्षकों को इन उपकरणों के उपयोग के लिए प्रशिक्षित भी नहीं किया जाता है। अतः, सहायक उपकरणों का अभाव भाषा शिक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

हिंदी भाषा शिक्षण की उपरोक्त चुनौतियों को सामाजिक एकीकरण एवं राष्ट्रीय एकीकरण के संदर्भ में भाषा शिक्षण की चुनौती के रुप में भी देखा जा सकता है। सामाजिक एकीकरण एवं राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। अब यदि भाषा का शिक्षण ही ठीक से नहीं हो पाएगा तो भाषा द्वारा किए जाने वाले कार्यों का उचित संपादन कैसे संभव हो पाएगा। यथा, भाषा का एक कार्य समाज के विभिन्न सदस्यों के मध्य संप्रेषण स्थापित करना एवं विद्यार्थियों में मूल्य, दृष्टिकोण एवं अभिव्यक्ति विकसित करना है। भाषा का शिक्षण उचित ढंग से नहीं होगा तो विद्यार्थी को शुद्ध-शुद्ध बोलना, लिखना, पढ़ना और सुनना नहीं आएगा। समाज के विभिन्न सदस्यों से संप्रेषण कैसे करेगा? उसमें मूल्य, अभिवृत्ति, दृष्टिकोण आदि का समुचित विकास कैसे होगा? निष्कर्षतः, हम यह कह सकते हैं कि भाषा शिक्षण की उपरोक्त सारी चुनौतियाँ सामाजिक एकीकरण एवं राष्ट्रीय एकीकरण के संदर्भ में भाषा शिक्षण की चुनौतियाँ हैं।

अभ्यास प्रश्न

15. समाज के विभिन्न इकाइयों में समरसता स्थापित करने में भाषा की भूमिका के पक्ष में कम से कम पाँच तर्क दें।
16. राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका के पक्ष में कम से कम पाँच तर्क लिखें।
17. राष्ट्रीय एकीकरण के विभेदनकारी शक्तियों को सूचीबद्ध कीजिए।
18. शिक्षा आयोग 1964-66 ने अपने प्रतिवेदन में भाषा के माध्यम से राष्ट्रीयकरण के लिए जो सुझाव दिए थे, उनका संक्षेप में उल्लेख कीजिए ।
19. भाषा शिक्षण की समस्याओं एवं चुनौतियों का उल्लेख कीजिए ।

4.10 सारांश

भाषा एक अति व्यापक शब्द है। इसमें मनुष्य एवं मनुष्येतर प्राणियों दोनों की भाषाओं को शामिल किया जाता है। लेकिन जब हम अध्ययन-अध्यापन के एक विषय के रुप में या ज्ञान की एक शाखा के अर्थ में बात करते हैं तो भाषा का अर्थ संकुचित हो जाता है और इसका आशय सिर्फ मनुष्य की भाषा से हो जता है। प्रस्तुत इकाई में भाषा को परिभाषित करते समय सिर्फ मनुष्यों की भाषा की ही बात की गई है। इकाई के अगले खंड में भाषा के आवश्यक तत्वों पर प्रकाश डाला गया है। भाषा ज्ञान की एक शाखा है; कैसे? इस कथन पर भी पर्याप्त चर्चा इस अध्याय में की गई है। इसके साथ ही साथ पाठ्यक्रम में भाषा का क्या स्थान होना चाहिए, इसकी भी व्याख्या की गई है। समरस समाज के अर्थ को समझाते हुए समाज के विभिन्न इकाइयों में समरसता स्थापित करने में भाषा की भूमिका का वर्णन भी किया गया है। राष्ट्रीय एकीकरण, जो कि वर्तमान की सबसे बड़ी चुनौती है, में भाषा की भूमिका का वर्णन इकाई के अंतरिम भाग में किया गया है। इकाई के अंतिम भाग में वर्तमान परिदृश्य में भाषा शिक्षण की चुनौतियों को प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार यह इकाई स्थापित करती है कि भाषा सिर्फ ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम ही नहीं है वरन स्वयं भी ज्ञान की एक शाखा है जिसका अन्य विषयों की ही भाँति अध्ययन-अध्यापन होना चाहिए। इकाई द्वारा की गई यह स्थापना भाषा-शिक्षण एवं अधिगम को प्रोत्साहन प्रदान करेगी।

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. भाष
2. पाणिनी
3. नहीं
4. मनुष्य
5. भाषा

6. भाषा उच्चारण अवयव से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा किसी भाषा भाषी समाज के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।
7. भाषा यादृच्छिक ध्वनि संकेत प्रणाली को कहते हैं जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय या सहयोग करते हैं।
8. अर्थपूर्ण उच्चरित ध्वनियों की नियमानुशासित व्यवस्था भाषा है।
9. यादृच्छिक का अर्थ होता है मनगढ़ंत या अपनी इच्छा से निर्मित। ध्वनि संकेत जिस अर्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं इनका उसके साथ कोई संबंध नहीं होता है। जैसे- आम जो कि एक वृक्ष का प्रतिनिधित्व करता है, संस्कृत में उसी के लिए रसाल तथा अंग्रेजी में मैंगो शब्द का प्रतिनिधित्व करता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि ध्वनि और अर्थ में कोई तार्किक संबंध नहीं होता है।
10. समय के साथ-साथ एक अर्थ विशेष का प्रतिनिधित्व करने के लिए विशेष ध्वनि संकेतों का समूह समाज में प्रसिद्ध हो जाता है। इसे ही ध्वनि संकेत या ध्वनि संकेत के समूहों का रुढ़ हो जाना कहा जाता है।
11. भाषा
12. जन्मजात
13. समाज
14. सर्वोपरि
15. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इस इकाई का खंड 5.7 देखें।
16. इस प्रश्न के लिए इस इकाई का खंड 5.8 लिखें।
17. राष्ट्रीय एकीकरण की विभेदनकारी शक्तियाँ निम्नलिखित हैं:
    - जातिवाद
    - सांप्रदायिकता
    - भाषावाद
    - क्षेत्रवाद
    - वोट की राजनीति तथा
    - प्रांतवाद
18. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इस इकाई का खंड 5.8.1 देखें।
19. भाषा शिक्षण की चुनौतियाँ एवं समस्याएँ निम्नलिखित हैं:
    - भाषा के कार्य का अपूर्ण प्रचार
    - भाषाई कौशल का सम्यक विकास
    - भाषा एवं साहित्य के प्रति रुचि का अभाव- भाषा का मानक रुप व

- स्थानीयता
- वर्तनी उच्चारण संबंधित त्रुटियाँ
- पारंपरिक शिक्षण विधियाँ
- सहायक उपकरणों के अभाव की समस्या

4.12 संदर्भ ग्रंथ सूची एवं सहयोगी पुस्तकें

1. कुमार, कृष्ण (2004), बच्चे की भाषा और अध्यापक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली। कौशिक, जयनारायण (1987), हिन्दी शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़।
2. गुप्ता,मनोरमा (1984), भाषा अधिगम, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा।
3. चतुर्वेदी, रामस्वरूप (2005), हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली।
4. जोसेफ जेस्सी(1997), भाषा की जैविकता, ज्ञानोदय प्रकाशन, धारवाड़।
5. तिवारी, भोलानाथ(1990), हिन्दी भाषा शिक्षण, लिपि प्रकाशन दिल्ली।
6. द्विवेदी, हजारी प्रसाद भाषा, साहित्य और देश (गूगल पुस्तक)।
7. पाणिनी, अष्टाध्यायी या सूत्रपाठ गूगल से प्रप्त किया हुआ।
8. पाण्डेय, रामशकल(1993), हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
9. पांडेय, हेमचन्द्र (2001), भाषिक सम्प्रेषण और उसके प्रतिदर्श।
10. लहरी,रजनीकान्त (1975), हिन्दी शिक्षण, राम प्रसाद एंड संस, आगरा।
11. वायगॉत्सकी (2009), विचार और भाषा(अनू०), ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली।
12. शर्मा, रामविलास (1978), भारत की भाषा समस्या, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
13. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ (2009) , भाषाई अस्मिता और हिंदी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
14. सिंह, निरंजन कुमार (1981) माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
15. शर्मा, देवेंद्र नाथ, यथा उद्धृत शर्मा, वाजपेयी, कृष्णदास; हिंदी शब्दानुशासन, वाराणसी।

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. भाषा के तत्वों का उल्लेख कीजिए।
2. भाषा ज्ञान की एक शाखा है। इस कथन की विवेचना कीजिए।
3. पाठ्यक्रम में भाषा के स्थान पर एक निबंध लिखिए।

4. समरस समाज से आप क्या समझते हैं?
5. समाज के विभिन्न इकाइयों में समरसता स्थापित करने में भाषा कैसे योगदान करता है?
6. राष्ट्रीय एकीकरण से आप क्या समझते हैं?
7. राष्ट्रीय एकीकरण में भाषा की भूमिका का वर्णन कीजिए।
8. वर्तमान परिदृश्य में भाषा शिक्षण की चुनौतियों पर एक निबंध लिखिए।